॥ ॐ नमः जिनेन्द्रेभ्यः ॥

प्रतिष्ठासारसंग्रह।

(पंचकल्याणकदीपिका हिन्दी छन्द सहित)

सम्पादक व संग्रहकर्ता–श्रीमान् ब्र० सीतलप्रसादजी।
(समयसार, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, नियमसार, इष्टोपदेश आदि अनेक ग्रन्थोंके टीकाकार)

प्रकाशक–मूलचन्द किसनदास कापड़िया, मालिक दिगम्बरजैनपुस्तकालय, चंदावाड़ी–सूरत।

दिगम्बर जैन पंचायत-खण्डवाकी ओरसे "जैनमित्र" के २९वें वर्षके ग्राहकोंको भेंट।

प्रथमावृत्ति] वीर स० २४५५, विक्रम स० १९८५ [प्रति ११००+२००

मूल्य रु० २–४–०

"जैनविजय" प्रिन्टिंग प्रेस सूरतमें मूलचन्द किसनदास कापड़ियाने मुद्रित किया।

भूमिका ।

परमातम अर्हंत प्रभु, सिद्ध शुद्ध सुखदाय ।
आचारज उपध्याय मुनि, वंदू मस्तक नाय ॥

साधारण जैन जनता विना दूसरोंके आलम्बनके श्री बिम्बमंदिर, व वेदी प्रतिष्ठा कर सके इसलिये यह सुगम प्रतिष्ठाविधि संग्रह करके लिखी गई है। इसमें ध्यान यह रक्खा गया है कि देखनेवालोंको ऐसा विदित हो कि मानों हम साक्षात् तीर्थंकरके जीवनचरित्रको ही देख रहे हैं। तथा जितना पूजन पाठ आवश्यक है वह रक्खा गया है। इसके संग्रहमें श्री जयसेन, आशाधर तथा नेमिचंद्र इन तीन मुद्रित प्रतिष्ठापाठोंकी सहायता ली गई है। इस पाठके सहारेसे वह कठिनाई मिट जायगी जो प्रतिष्ठा करानेवाले पंडितोंकी खोजमें होती है। तथा कोई २ पंडित लोभवश यजमानोंको बहुत तंग करते हैं तथा कोई २ यजमानोंके कहे अनुसार समयकी तंगीसे बहुतसी विधि छोड देते हैं व पूजापाठमें कमी कर देते हैं, वह सब त्रुटियें निकल जांयगी।

इस पुस्तकमें पंचकल्याणकके दृश्य श्री जिनसेनाचार्य कृत महापुराणके अनुसार दिखाए गए हैं। श्री जयसेन आचार्य कृत प्रतिष्ठापाठ सबसे पुराना है तथा उसकी रचना देखनेसे विदित होता है कि यह आचार्य अध्यात्मरसिक व ज्ञान ध्यान तपमें लीन तपस्वी थे। इनका दूसरा नाम वसुबिंद था। प्रशस्तिमें उन्होंने अपनेको श्री कुन्दकुन्दाचार्यका शिष्य लिखा है। जैसा इस श्लोकसे प्रगट है—

कुन्दकुन्दाग्रशिष्येण जयसेनेन निर्मितः। पाठोऽयं सुधिया सम्यक् कर्तव्यायास्तु योगतः ॥ ९२३ ॥

इसलिये यह पाठ १९०० वर्षका पुराना है क्योंकि श्री कुन्दकुन्द स्वामी विक्रम संवत् ४९में विद्यमान थे इसको अप्रतीति करनेका कोई कारण नहीं दिखता है। दूसरा पाठ पंडित आशाधरकृत १३वीं शताब्दीका है उसे पंडितजीने विक्रम सं० १२८९ में नलकच्छपुरमें पूर्ण किया था जैसा इस श्लोकसे प्रगट है—

विक्रमवर्षं सपञ्चाशीतिद्वादशशतस्वतीतेषु । आश्विनसिताप्तदिवसे साहसमल्लापराक्षस्य ॥ १९ ॥

तीसरा पाठ पं० आशाधरजीके पीछेका मालूम होता है जैसा मराठी टीकाकारने दूसरे श्लोकके अर्थमें लिखा है। यह नेमचन्द्र ब्राह्मणकुली ब्रह्मचारी तथा विद्वान थे। जैसा कि प्रशस्तिके श्लोक नं० १से प्रगट है वहां सद्वर्णी शब्द आया है। यह तीसरा पाठ विधिके वर्णनमें सबसे बड़ा है। हमने जयसेनकृत प्रतिष्ठा पाठको प्राचीन व निर्ग्रंथ मुनिकृत मानकर मुख्यतासे उसीका आधार लिया है। इस पाठमें पांच परमेष्टीका ही पूजन यत्र तत्र है। तथा दूसरे दो पाठोंसे कहीं२ विशेष पूजन, विधि व मंत्र संग्रह किये हैं।

भाषा स्तवन, पूजनादि इसलिये रच दी गई हैं कि प्रतिष्ठा देखनेवाली आधुनिक जनताको तीर्थंकर भगवानके कल्याणकका साक्षात् आनन्द आजावे और वे समझते हुए महान पुण्यबंध करें। कवितामें मनरंगलालकृत चौवीसी पूजाकी सहायता ली गई है। उसीके छंदोंके अनुसार अक्षर मात्रा जोड़कर इस पाठके छंद रचे गए है। जिस विधिसे मुझ अल्पबुद्धिने यह संग्रह किया है उसके अनुसार यदि प्रतिष्ठा करी जायगी तो साक्षात् लाभ होगा तथा जैन अजैन सब देखकर जैनधर्मका प्रभाव अपने मनमें जमाएंगे। जहांतक बना है कोई विधि नहीं छोड़ी गई है। इस पाठमें जहां जहां गान व कविता है उसको बाजेसे पढ़ा जावे। जिसके बोलनेके लिये जो पाठ है वह यदि न कह सके तो दूसरा उसके बदलेमें उस कविताको गावे, इसमें कोई हर्ज नहीं है।

मैं इस योग्य तो था नहीं कि इस अति दुर्लभ कार्यको करूं परंतु धर्ममित्र पंडित अजितप्रसादजी एम० ए० एल एल० बी० वकील लखनऊकी वर्षोंकी प्रेरणा तथा श्री जिनेन्द्र चरण कमलकी भक्ति ही ने इस कार्यको सम्पादन कराया है। विद्वान जन अवश्य मेरे इस साहसपर हसेंगे। मैं उनसे क्षमा चाहता हुआ यह प्रार्थना करता हूं कि इसमें जो त्रुटियें हों उनके सम्बन्धमें हमें सूचित करें जिससे हम उनके सुधारका उपाय करें।

जहां पर प्रतिमाके अभिषेकका वर्णन आया है वहां पर हमने श्री आदिपुराणकी रीतिके अनुसार क्षीरजल तथा गंधोदकसे न्हवन होना दिखाया है। जिनको दधि आदिसे भी न्हवन करना इष्ट हो वे अपनी इच्छानुसार कर सक्ते हैं।

आश्विन कृष्णा ९, वीर स० २४५३ विक्रम स० १९८४ खंडवा, ता० १९-९-२७.

जैनधर्मका सेवक—ब्र० सीतलप्रसाद।

धन्यवाद।

श्री० ब्र० सीतलप्रसादजीने वीर सं० २४५३का चातुर्मास खंडवामें व्यतीत किया था तब वहीं ठहरकर इस प्रतिष्ठापाठका संपादन अतीव परिश्रम व खोजपूर्वक तैयार किया था फिर इसका सुलभ प्रचार करनेकी सूचना करते ही उसी समय खंडवाकी धर्मपरायण दि० जैन पंचायतने चंदा करके यह ग्रन्थ अपने खर्चसे प्रकाशित करवाकर 'जैनमित्र' के २९ वें वर्षके ग्राहकोंको उपहारमें देनेकी स्वीकारता दी थी इससे ही यह शास्त्रीय ग्रन्थ प्रकट होरहा है। इस आदर्श और अनुकरणीय शास्त्रदानकी उदारताके लिये खंडवाकी समस्त दिगम्बर जैन पंचायत अतीव धन्यवादके पात्र है। आशा है अन्य जैन पंचायतें भी खंडवा दि० जैन पंचाततके इस शास्त्रदानका अनुकरण करेगी।

प्रकाशक।

विनायक यंत्र

क्रौं
ह्रीं

ॐ

अ
सि
आ
उ
सा

अरहंत मंगलं
सिद्ध मंगलं
साहू मंगलं
केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं
अरहंत लोगुत्तमा
सिद्ध लोगुत्तमा
साहू लोगुत्तमा
केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा
अरहंत शरणं पव्वज्जामि
सिद्ध शरणं पव्वज्जामि
साहू शरणं पव्वज्जामि
केवलि पण्णत्तं धम्मं शरणं पव्वज्जामि

क्रौं
ह्रीं

क्रौं
ह्रीं

क्रौं
ह्रीं

विषयसूची ।

अध्याय छठा—तपकल्याणक।

अध्याय सातवां-ज्ञानकल्याणक।

अध्याय आठवां-मोक्ष कल्याणक।

अध्याय नौवां-अंतिम होम, अभिषेक व शांति।

अध्याय दशवां-आचार्यादि बिम्बप्रतिष्ठा विधि।

अध्याय ग्यारहवां-मंदिर व वेदीप्रतिष्ठा विधि।

अध्याय बारहवां-भक्तियां।

समर्पण ।

परोपकारी, धर्मप्रेमी, तीर्थभक्त-विद्वान पंडित अजितप्रसादजी जैन एडवोकेट
एम० ए० एल० एल० बी० लखनऊको प्रचारार्थ सादर समर्पित ।

शुद्धयशुद्धिपत्र ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	५	ॐ ह्न फट्	ॐ ह्रूं फट्
५	३	व्यस	अस
५	६	वाद	पाद
२०	११	लोकनान्याय	लोकमान्याय
२५	५	वियातिशयैः	विधातिशयैः
३१	१२	मितिपरि	मतिपरि
,,	१३	न वाया	न पाया
३२	१७	मरागाद्वि	मखासीद्धि
३४	९	भाति	श्राति
३६	१७	प्रभवानु	प्रभावानु
३७	९	आयो	आपो
३९	१३	समवसत	समवसृत
४०	१७	अकुलायो	प्रफुलायो
४४	१३	तदद	तदर्द
४५	२०	विजयासे	विजयासु
४६	१९	पादुपे	पायके
४७	१४	पूगे	पूजें
५०	९	दधानान्	दधानान्
,,	११	पुकारी	प्रचारी
५२	१४	न हे	न मे
५३	१२	वंधन	बंदन
५७	११	लाव	लप
५८	३	अथ	अव
५९	६	सम्राज्य	सम्राज
,,	१६	तिशुद्धया	विशुद्धयां
६०	३	आव	आप
६०	१६	मा	मा
६१	६	पारकरा	परिकरा
७३	२	विजौषधि	विडौषधि
७८	१६	नाव	नाथ ३
८३	१०	सौभाग्य	सौम्याय
९५	१२	भात्री	भाषी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	११	२७	इन
१०५	१९	सर्के	सकल
११६	८	कमभूमि	कर्मभूमि
१२०	१९	धम	धर्म
१२५	१७	गण्डस्थ	गण्डस्थल
१२८	४	युति	युत
१३१	१८	चतुर्दश्या	दशम्याम्
१३५	६	स्वभाव	स्वभाय
१३६	६	बाधते मोक्षको	बाधते मोहको
१३६	८	पाप	पाय
,,	१४	मिन	मिनट
१३९	११	कषाप	कषाय
१४१	१२	मुख	प्रतिमाके मुख
१४३	११	जोणिजिणो	जोगिजिणो
१४६	१८	कल्से	कल्प्ते
१५०	२०	मर्म	धर्म
१५१	२	भवन	भव
,,	१४	हठे	अठ
१५३	४	व्यहत	व्यवहृत
१५६	४	भार	भाग
१६०	१	जिन	निज
१६०	३	जिन	जिम
१६०	६	निर करके	सिरका करके
१६०	१४	वत्तो	पत्तो
१६१	८	लीठो	लीन्हो
१६८	१८	देशोद्भवो	देहोद्भवो
१६९	२	पुष्पकी ॐ ह्रीं	
,,	४	नैत्रयकी ,,	,,
१७३	१९	चीव	जव
१७४	२०	मुद्गलयामः	मुद्गलयामः
१७७	१८	नर्वामाव	नवीमाव
१८२	१२	विस्तारसे	विस्तारते
१८२	१३	अनशन	अनशन
,,	२०	भूयाद्भुयाश्च	भूयाद्भयाश्च
१८६	१०	वेल	वेला
१८७	१५	दुज्ज्वलैनक	दुज्ज्वलैनकं
१८८	७	प्रथाहप्ता	यथाहप्ता
१८८	१३	कमक	कमल
१८९	१८	स्वत स्वादेश	स्वतस्वादेश
,,	,,	कहे	करें
१९२	७	मुद्राच्छिर	मुद्राच्छिद्र
१९५	४	मवातिकामो	मयातिकामो
१९८	१५	किविकिच्चा	किदिकिच्चा
१९९	१३	अरहत	अरहत
२०१	१५	णदट्ठ	णट्ठट्ठ
,,	,,	मघट्ठाणे	मयट्ठाणे
,,	,,	णिट्ठिमट्ठे	णिट्ठियट्ठे
२०५	२	व्याघा	व्याघात
,,	३	मंग	भग

॥ ॐ ॥

प्रतिष्ठासारसंग्रह ।

(पंचकल्याणकदीपिका)

आवश्यक विषय ।

१.–प्रतिष्ठा–या स्थापना–यह नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव चार निक्षेपोंमेंसे स्थापना निक्षेपमें गर्भित है। किसी भी अनुपस्थित व्यक्तिकी तदाकार मूर्ति उसके स्वरूपको बतानेमें सहायक होती है। इसी हेतु तीर्थंकरोंकी अर्हंतोंकी ध्यानाकार मूर्ति उनके ध्यानके स्वरूपको दर्शकके मनमे अंकित कर देती है। प्रतिष्ठाका लक्षण श्री जयसेन आचार्यने इस भांति लिखा है—

प्रतिष्ठान प्रतिष्ठा च स्थापनं तत्प्रतिक्रिया । तत्समानात्मबुद्धित्वात्तदभेदः स्तवादिषु ॥

भावार्थ–प्रतिष्ठान, प्रतिष्ठा, स्थापन, प्रतिक्रियाका भाव यह है कि उसीके समान अपनी बुद्धि होजाय–अर्थात् यह भाव झलके यह वही है–स्तवन पूजादिमें इसकी जरूरत है।

यत्रारोपात् पंचकल्याणमंत्रैः, सर्वज्ञत्वस्थापनं तद्विधानैः । तत्कर्मानुष्ठापने स्थापनोक्त, निक्षेपेण प्राप्यने तच्चैव ॥

भावार्थ–जहा पचकल्याणक सम्बन्धी मंत्रोंके द्वारा जिसमें वह गुण नहीं है उसमे उस गुणके स्थापन करनेसे तथा उस सम्बन्धी विधानके द्वारा सर्वज्ञपना स्थापित किया जावे वह प्रतिष्ठा है। पूजन पाठादि क्रियाके साधनमे स्थापना निक्षेपके द्वारा उस वस्तुको वैसे ही समझ लिया जाता है–अर्थात् सर्वज्ञकी मूर्तिमें स्थापना होनेसे मूर्तिके दर्शनसे सर्वज्ञका भाव हृदयमें अंकित होजाता है।

जैसे राजाकी स्थापनामें प्रजासमूहकी व क्रियाकी आवश्यक्ता है वैसे मूर्तिकी प्रतिष्ठामें जैन संघकी व पूजा पाठादि क्रियाकी आवश्यक्ता है जिससे वह मूर्ति पूजनीय व माननीय होजावे।

२–श्री जिनमंदिर निर्माण–श्री जिनमंदिर ऐसा बनाना चाहिये जहा धर्मसाधन भले प्रकार होसके। गृहस्थ श्रावक व

श्राविकाएं पूजा, सामायिक, स्वाध्याय, शास्त्रसभा, दान आदि कर सकें। प्रथम तो वह स्थान ऐसी जगह हो जहां आसपास विघ्न-कारक व निंद्य मांसाहारी, मद्यपानी आदि मनुष्योंकी वस्ती न हो। मंदिरमें जो पूजा पाठादि हो उसमें किसी तरहका विघ्न न आना चाहिये। मंदिरके लिये इतनी बड़ी जगह लेनी चाहिये जिसकी चौहद्दीके भीतर बागीचा हो, बीचमें मंदिर बनवाया जावे। इसका हेतु यह है कि बाहर सड़कका कोलाहल धर्मकार्योंमें विघ्न न कर सके। मंदिरजीमें मुख्य वेदीके चारों तरफ प्रदक्षिणा रहनी चाहिये। सामने इतना बड़ा चौक छाया हुआ रहना चाहिये कि नरनारी विना किसी बाधाके पूजा पाठ सुन सकें। वेदीका चबूतरा नाभिसे कुछ ऊंचा होना चाहिये। उसके आगे पूजा करनेके लिये नाभिके बराबर मेज हो। इस चौकमें हवा व रोशनी भलेप्रकार आसके इसलिये बाहरसे खिड़कियें दोनों तरफ वेदीके अगल बगल होनी चाहिये। शास्त्रसभा करनेका स्थान ऐसी जगह होना चाहिये कि पूजा करते हुए भी शास्त्रसभा होसके इसलिये वेदीके चौकको बाहर कोटसे बंदकर द्वार रहना चाहिये। द्वारके बाहर कुछ दूर जहां अवाज न आसके एक बड़ा दालान शास्त्रसभाका हो। उसके एक ओर स्त्रियोंके बैठनेका स्थान हो, दूसरी ओर एक ऐसा दालान हो जहां सरस्वती भंडारका कोठा हो व आगे शास्त्र स्वाध्याय करनेकी जगह हो। इन दोनों दालानोंमें भी बाहरसे खिड़कियां रहनी चाहिये जिससे रोशनी व वायु भले प्रकार आसके। यहीं एक कमरा ऐसा बनाना चाहिये जिसके भीतरसे खिड़कियां बागीचेकी तरफ हों व जो बंद कर लिया जावे व भीतर भव्य जीव शांतिपूर्वक सामायिक कर सकें। प्रयोजन यह ध्यानमें रक्खा जावे कि पूजा, शास्त्र-सभा, शास्त्र—स्वाध्याय व सामायिक चारों काम एक साथ होसकें तोभी कोई बाधा किसी काममें नहीं आनी चाहिये। बागीचेमें फल फूलके सुगंधित वृक्ष हों व इधर उधर बैठनेके स्थान बने हों जिसमें धर्मात्मा भाई ध्यान कर सकें या परस्पर धर्मचर्चा कर सकें। इसी बागीचेके कोटमें लगते हुए कुछ कमरे ऐसे हों जहां औषधालय व विद्यालय होसके, कुछ कमरे ऐसे हों जहां परदेशी त्यागी या यात्री ठहर सकें। कुछ दुकानें भी कोटके बाहर निकाल दी जावें तो कुछ हर्ज नहीं है। बागीचेमे एक घिरा हुआ बाड़ा ऐसा छोड़ दिया जावे जहांपर त्यागीगण मल निस्तार कर। सकें ऐसे मंदिरमें वेदी एक हो वा तीन हो परन्तु हरएकमें मूलनायक बड़े पुरुषाकार विरा-जमान करने चाहिये जिसका दर्शन दूरसे भी होसके। एक वेदीमें एक ही प्रतिमा पाषाण या धातुकी बड़ी अवगाहनाकी रखनी चाहिये। मात्र एक प्रतिमा धातुकी छोटी रहे जो अभिषेकादि व रथोत्सवादिके समय काममें लाई जासके। एक वेदीमें बहुत प्रतिमा-ओंकी पद्धति ठीक नहीं है। श्री अरहंतभगवान् एक गंधकुटीमें एक ही विराजमान होते हैं।

पंडित आशाधरकृत प्रतिष्ठासारोद्धारमें कथन है कि ऐसी जमीनको मंदिरके लिये पसन्द करे जो चिकनी हो व सुगंधित हो व जिसमें दुव आदि उगती हो। नीचे उसके मुरदा वगैरह गडा हुआ न हो। उत्तम भूमिकी पहचान यह है कि उस भूमिको एक हाथ गहरी व एक हाथ चौड़ी लम्बी खोदे। निकली हुई मिट्टीसे फिर उस गढ़ेको भर दे, यदि कुछ मिट्टी बचे तो समझना चाहिये भूमि उत्तम है। यदि समान भर जावे तो उसे मध्यम जाने। यदि गढ़ा न भर सके तो उस भूमिको अशुभ समझे। दूसरी पहचान यह बताई है कि सूर्य छिपनेके पीछे उस जमीनके चारों तरफ चटाईका परकोटा बनाकर हवा रोक ले फिर "ॐ ह्र फट्" इस मंत्रको १०८ वार पढ़कर पुष्प डाले। उस भूमिकी चारो दिशाओंमे कच्ची मट्टीके चार घडे रक्खे। उनपर कच्चे सरावे घीसे भरे हुए रक्खे उनमें पूर्वादि दिशाओंमें क्रमसे सफेद, लाल, पीली, काली बत्ती डाले-दीपकको जलावे। जबतक घी रहे तबतक चार आदमी दीपकके पास बैठे बराबर णमोकार मन्त्र पढते हुए मंत्र जपते रहें। यदि घीकी समाप्ति तक बत्तियां साफ जलती रहें तो भूमिको शुभ कहना, यदि बुझती हुई मालूम पडे तो अशुभ समझना चाहिये। मंदिर निर्माणके सम्बधमें जयसेनाचार्यजी लिखते है कि शुद्ध स्थानमें तथा नगरमें या वनमे या नदीके पास व तीर्थकी भूमिमें विस्तारयुक्त शिखर और ध्वजा सहित जिन भवन बनवावे। कूप, वावडी, तलाव, नदी, बगीचा इन करि शोभित और कीटकादि जंतुओंसे रहित व मसान तथा शूली आदिके स्थानसे रहित व जले हुए पाषाणोसे रहित भूमि मदिरकी होनी उचित है।

नोट—मदिरजीको शिखरबद्ध बनाना उचित है। गृह चैत्यालय अपने घरके पास या छतके ऊपर होसक्ता है जहा इच्छानुसार काल तक प्रतिमा रह सक्ती है। यदि गृहस्थी पूजाके लिये समर्थ न हो तो वह प्रतिमाजीको जिन मदिरमें विराजमान कर सक्ता है।

नयसेनाचार्यजी लिखते है कि मदिरका मुख पूर्व, उत्तर व कदाचित् पश्चिममें भी रक्खे—

"मुखं तु शक्रोत्तर पश्चिमासु, कुर्याज्जिनेशालयकस्य मुख्यं ॥ ३२ ॥

३—मंदिरकी नीव रखना—शुभ दिनमें नीव खुदावे और उसे पूजासे शुद्ध करे। फिर पत्थर आदिसे भरकर भूमिके बराबर करे। नीव खोदनेपर शिला रखनेके लिये इस प्रकार पूजा करे—नीवके पास ही एक चबूतरेपर या चौकीपर सिंहासन विराजमान करके जिन प्रतिमाको पधरावे। मुख्य पूजक अनेक नर नारियोके साथ पूजा करे। पहले तो प्रतिमाका अभिषेक करे फिर अष्टद्रव्यसे नित्य देव शास्त्र गुरु पूजा व सिद्ध पूजा करे फिर पाच शिला अथवा पकी हुई ईंटें जो पासमें रक्खी हों उनको धोकर चन्दनसे

सथिया करे फिर नीचे लिखे मंत्रको १०८ वार पढ़कर पांचों शिलाओंपर पुष्प छोड़े।

मंत्र—ॐ ह्रीं नमो अर्हद्भ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः सिद्धेभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमःसूरिभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः पाठकेभ्यः स्वाहा ॐ ह्रीं नमः सर्वसाधुभ्यः स्वाहा। अथवा प्राकृत णमोकार मंत्रमें पहले ॐ ह्रीं अन्तमें स्वाहा जोड़कर जपे तथा पांच तांवेके कलश भी रक्खें जिनको भी धोकर साथिया बनाकर भीतर पांच तरहके रत्न क्रमसे डाल दें तथा तांवेका सिद्ध यंत्र या विनायक यंत्र बनाकर उसमें नीव रखनेकी मिती, मूलसंघ, कुन्दकुंदान्वय आदि व मंदिर बनानेवालोंके नामादि लिखे। मंत्र जपनेके पीछे पहले चार कौनोंमें व एक मध्यमें पाच शिला रक्खे फिर उन शिलाओंके ऊपर पांचों कलशोंको रक्खे। नीचेके कलशके भीतर घीका बलता हुआ दीपक रक्खे तथा कलशके नीचे पहले यंत्र स्थापन करके फिर कलशको रक्खे। इस कलशको ढक देवे। शिला व कलश रखते समय बाजे बजवावे फिर नीवको भरवावे पश्चात कारीगरोंको दान देवे फिर पूजा विसर्जन करे। विनायक यंत्रका वर्णन अध्याय १०में है।

४—प्रतिमा बनानेकी विधि—प्रतिमा बनवानेके लिये पहाड़से उत्तम मोटी शिला लानी चाहिये। वह शिला प्रसिद्ध स्थानकी चिकनी, ठंडी, मोटी, सुन्दर, मजबूत, सुगंधित, ठोस व अच्छे रंगवाली हो। बिंदुरेखा आदि दोष न हों व उसकी ध्वनि भी अच्छी हो। उस शिलाको निकाल कर धोवे तथा साथिया बनावे तथा वहां नित्य देव शास्त्र गुरु पूजा व सिद्ध पूजा करके फिर १०८ वार णमोकार मंत्र ॐ ह्रीं पहले व स्वाहा पीछे लगाकर पढ़ें और उसपर पुष्प डाले। फिर पूजा विसर्जन करके उसको लावे। जिन मदिरकी तीन प्रदक्षिणा देकर शुभ दिनमें उस शिलाको सुगंधित औषधियोंसे धोकर मंदिरमें रक्खे तथा सिद्ध स्तुति व शांति पाठ पढ़े। फिर शुभ दिनमें कारीगरको मूर्ति बनानेके लिये सौंपे। कारीगर अच्छी निगाहवाला, शिल्पशास्त्रका जाननेवाला, मदिरा मांसादिका त्यागी, पूर्ण अंगवाला, चतुर, क्षमावान व मन, बचन, कायसे शुद्ध हो। वह कारीगर जबतक प्रतिमा न बन जावे नियमसे भोजन करे—संयम रूप रहे, ब्रह्मचर्य पाले तथा सुभीतेसे काम करे—उससे जल्दी न कराई जावे।

प्रतिमाका लक्षण पंडित आशाधरजीने कहा है—

शांतप्रसन्नमध्यस्थनासाग्रस्थाविकारदृक्। सम्पूर्णभावरूपानुविद्धांगं लक्षणान्वितं ॥ ६३ ॥
रौद्रादिदोषनिर्मुक्तं प्रातिहार्यांकयक्षयुक्। निर्माप्य विधिना पीठे जिनबिम्बं निवेशयेत ॥ ६४ ॥

भावार्थ—जो शांत, प्रसन्न, मध्यस्थ, नासाग्रस्थित अविकारी दृष्टिवाली हो, जिसका अंग वीतरागतासे पूर्ण हो, अनुपम वर्ण

हो व शुभ लक्षणों सहित हो, रौद्रादि बारह दोषोंसे रहित हो, अशोक वृक्षादि प्रातिहार्योंसे युक्त हो और दोनों तरफ यक्ष यक्षीसे वेष्टित हो ऐसी जिनप्रतिमाको बनवाकर विधि सहित सिंहासन पर विराजमान करे।

१—दोष ये हैं—रौद्र, कृशाग, संक्षिप्तांग, चिपिटनासिका, विरुपक नेत्र, हीनमुख, महा उदर, महा हृदय, महाव्यंस, महा कटी, महा वाद, हीन जंघा, शुष्क जंघा।

दृष्टि ऐसी होनी चाहिये—

नात्यंतोन्मीलिनास्तद्रा न विस्फारितमीलिता। तिर्यगूर्ध्वमधोदृष्टिवर्जयित्वा प्रयत्नतः॥
नासाग्रनिहिता शांता प्रसन्ना निर्विकारिका। वीतरागस्य मध्यस्था कर्तव्या दृष्टिरुत्तमा॥

अर्थात्—न तो बिलकुल मुदी हो न फैली हुई हो न तिरछी हो न ऊपरको हो न नीचेको हो। इन दोषोंको बचाकर नासाके अग्रभागमें धरी हुई दृष्टि, शांत, प्रसन्न, निर्विकारी, माध्यस्थ ऐसी दृष्टि वीतराग प्रतिमाकी होनी चाहिये।

प्राचीनकालमें अर्हंतकी प्रतिमामें पाषाणके ही छत्र चमरादि प्रातिहार्य बने होते थे। दक्षिणमें जो प्राचीन जैनमूर्तिया मिलती हैं वे सब छत्र चमरादि प्रातिहार्य सहित ही मिलती हैं। इधर उत्तर भारतमें अलगसे छत्र चमर सिंहासनादि लगानेका रिवाज है सो पुराना नहीं है। पाषाण या धातुमें ही छत्र चमरादि बना देनेसे कोई शका छत्र चमरादिकी चोरी जानेकी भी नहीं होती है। जिस प्रतिमामें प्रातिहार्य नही बने होते है वह प्रतिमा सिद्ध भगवानकी होती है। कहीं २ प्राचीन प्रतिमाओमें यक्ष यक्षिणीके स्थानमें दोनो ओर दो चमरेन्द्र बने हुए मिलते है।

जयसेनाचार्यजीने मूर्तिका स्वरूप ऐसा लिखा है—

स्वर्णरत्नमणिरौप्यनिर्मितं स्फटिकामलशिलायकं तथा। उत्थितांबुजमहासनांगितं जैनबिम्बमिह शस्यते बुधैः॥ ८४॥

भावार्थ—सुवर्ण, रत्नमणि, चांदीसे निर्मित हो व स्फटिक व निर्दोष शिलासे बनी हो व कायोत्सर्ग तथा पद्मासनकर अंकित जिनेन्द्रका बिम्ब बुद्धिमानोंने सराहा है।

श्लोक १९१ से १८९ में बिम्ब बनानेकी जो विधि बताई है उसमें लिखा है कि बिम्ब ऐसा हो कि हृदयमें श्री वृक्षलक्षण हो व नख केश रहित हो। कायोत्सर्ग व पद्मासन प्रतिमाकी माप वहां बताई है सो उस पाठको देखकर समझ लेना चाहिये।

श्लोक १८० व १८१ उपयोगी हैं। कहा है-

सल्लक्षणं भावविवृद्धहेतुकं, सम्पूर्णशुद्धावयवं दिगम्बरं। सत्प्रातिहार्यैर्निजचिह्नभासुरं, संकारयेद्बिम्बमथार्हतः शुभं॥
सिद्धेश्वराणां प्रतिमाऽपि योज्या तत्प्रातिहार्यादि विना तथैव। आचार्यसत्पाठकसाधुसिद्धक्षेत्रादिकानामपि भाव वृद्ध्यै॥

भावार्थ-अर्हतका बिम्ब सत् लक्षण सहित शांत भावको बढ़ानेवाला, संपूर्ण अंगोपांग शुद्ध, दिगम्बर रूप आठ प्रतिहार्य सहित व अपने चिह्नसे प्रकाशमान करना योग्य है। सिद्ध परमेष्ठीका बिम्ब भी प्रातिहार्य विना स्थापना योग्य है तथा भावोंकी वृद्धिके लिये आचार्य, उपाध्याय, साधु तथा सिद्धक्षेत्र आदिकी प्रतिमा भी करानी योग्य है।

नोट-इससे सिद्ध है कि आठ प्रातिहार्य सहित प्रतिमा अर्हन्तकी, प्रातिहार्य विना सर्व अंगोपांग सहित प्रतिमा सिद्धकी व पीछी कमण्डल सहित प्रतिमा आचार्य, उपाध्याय, साधुकी तथा सम्मेदशिखरादि क्षेत्रोंकी मूर्ति ये सब बन सक्ती हैं। जो धातुमें छिद्र करके सिद्धकी प्रतिमा बनाते हैं सो ठीक नहीं है। इस प्रतिमापर आसनमें चिह्न खुदाना चाहिये। जिस प्रतिमाको जिस तीर्थंकरकी प्रसिद्ध करनी हो वह चिह्न तथा उसके साथ प्रतिष्ठाकी मिती सम्वत् मूलसंघ कुन्दकुन्दान्वय आदि व प्रतिष्ठा करानेवाले श्रावकादिका परिचय सब खुदा देना चाहिये। बहुत प्राचीन प्रतिमाओंमें लेख नहीं मिलते हैं, परन्तु इस कालमें लेख लिखना बहुत उपकारी है।

५-प्रतिष्ठा करनेके लिये मुहूर्त्त-प्रतिष्ठा करनेके लिये शुभ मुहूर्त निकलवा लेना चाहिये तब ही प्रतिष्ठा करनी योग्य है। जो मुख्य प्रतिष्ठाकारक हो उसके नामसे मुहूर्त निकलवाया जावे। जयसेनाचार्यजीने श्लोक १८७से २०२में इस विषयका वर्णन किया है। उसका कुछ जरूरी जानने योग्य भाग यह है कि मंगल, रविवार, शनिवारको छोड़ सब वार शुभ हैं; अमावस्या, पूर्णिमा, एकादसी मना है तथा जिस तीर्थंकरकी प्रतिमा प्रतिष्ठा करावे, जिस तिथिमें जो कल्याणक हुआ हो उस तिथिमें वह कल्याणक इष्ट है तथा रविवारकी अष्टमी, सोमवारकी नौमी, मंगलवारकी तीज, बुधवारकी द्वादशी व दोइज, गुरुवारकी दसमी, पंचमी व पूर्णिमा व शुक्रवारी छठ व पड़िवा, शनिवारी चौथ तथा नौमी श्रेष्ठ हैं।

६-प्रतिष्ठा करनेका मण्डप बनानेकी विधि-राजाकी आज्ञा लेकर शुभ स्थानमें मण्डप बनावे तब पहले ही प्रतिष्ठाचार्य वहांके निवासी देव आदिसे २१ वार णमोकारमंत्र पढ़ क्षमा प्रार्थना करे कि वहां मैं प्रतिष्ठा विधि करना चाहता हूं, आप क्षमा करें। मण्डप ऐसा बनाना चाहिये जैसा कि नाटक-घर सर्व तरफसे ढका होता है। प्रवेश द्वार रखने चाहिये। उनपर मनुष्य नियत हों।

क्योंकि दर्शकोंकी भीड़ परिमित हो इसलिये जितना स्थान सुखसे बैठने योग्य स्त्री तथा पुरुषोंके लिये हो उतने ही टिकिट बना लेने चाहिये। आनेवाले स्त्री पुरुषोंको विना कुछ लिये हुए टिकट देकर भीतर भेजना चाहिये जब वह बाहर आवे तब फिर टिकट ले लेना चाहिये। मण्डपमें कोलाहल न हो व धक्केबाजी न हो इसलिये सुप्रबन्धकी जरूरत है। जैसे नाटकघरमें सब सुखसे बैठकर नाटक देखते हैं ऐसे इस मण्डपमें स्त्री पुरुष सुखसे बैठकर श्री जिनेंद्रके कल्याणकका दृश्य देख सकें ऐसा प्रबंध करना चाहिये।

पूर्व ओर या उत्तर ओर सामनेको वेदी आदिका स्थान रखना चाहिये जो स्थान नीचेकी भूमिसे कुछ ऊंचा हो। तीन तरफ दर्शकोंके बैठनेका स्थान नाटकके समान बना देना चाहिये। डेढ़ तरफ स्त्रियोंके लिये व डेढ़ तरफ पुरुषोंके लिये। दोनोंके प्रवेश व निकलनेके भिन्न दो दो द्वार अलग २ होने चाहिये। वेदीमें तीन वेदी बराबर २ बनाना चाहिये। मध्यकी वेदी तीन कटनीदार प्रतिमाओंके विराजमान करनेके लिये, उस वेदीकी बाई ओर वेदीमें होमके तीन कुण्ड गोल, चौखूंटे, व त्रिकोण होमके लिये बनाने चाहिये व दाहनी ओर राजगृहकी रचना होनी चाहिये। इनके आगे एक चबूतरा वास्ते मण्डल बनाने व पूजा करनेके लिये होना चाहिये। इस चबूतरेके आगे एक परदा नाटकके समान होना चाहिये। उसीके लगता ही आगे दूसरा चबूतरा होना चाहिये जहां प्रतिष्ठा संबंधी अनेक दृश्य बताए जासकें, जैसे माताका स्वप्न देखना, राज सभा, इन्द्रका आना, राजसभा, वैराग्य, समवशरण सभा, आदि। इन दोनों चबूतरो तक ऐसी आड़ कर देनी चाहिये कि सिवाय प्रतिष्ठामें उपयोगी व्यक्तियोंके और कोई प्रवेश नहीं कर सके। वेदीके पीछे सामग्री बनानेको व प्रतिष्ठाके योग्य सामान रखनेको स्थान नियत करना व पास ही जाप व सामायिक करनेका स्थान पीछे नियत करना चाहिये। शास्त्र सभा व उपदेश सभाके लिये अलग मण्डप बनाना व उसीमें ऊपरके भागमें एक पूजा-वेदी जुदी करना जिसमें प्रतिमा विराजमान रहे जिसमे यात्रीगण वहीं पूजा, शास्त्रादि क्रियाए कर सकें। प्रतिष्ठा मण्डपमें सिवाय प्रतिष्ठा विधिके और कार्य कोई न करे। विना ऐसा प्रबन्ध हुए प्रतिष्ठाका आनन्द शांतिपूर्वक नहीं मिल सक्ता है तथा छोटे२ बच्चोंके दिल बहलानेके लिये एक भिन्न मण्डप बना देना चाहिये जहां वे खेला करें। वहां कुछ तसबीरें लगा देनी चाहिये व कुछ खिलोने रख देने चाहिये। एक मंडप ऐसा हो जिसमें स्वदेशी वस्तुओंका बाजार हो उनमें स्त्रियां ही दूकानदार हों। बहुधा स्त्रियोंको वस्तुओंके खरीदनेका शौक होता है। यदि उनके लिये स्वदेशी पदार्थोंकी प्रदर्शनी रहे व स्त्रियां ही प्रबंधक हों तो उनका काम भी निकल जावे तथा जो निर्लज्जपना नीच लोगोंके सौदेवालोंके साथ स्त्रियोंके मिलने व बात करनेमें होता है यह भी जाता रहे।

७–प्रतिष्ठा करनेके लिये पात्रोंकी आवश्यक्ता–नीचे लिखे पात्र प्रतिष्ठाकी विधिमें आवश्यक हैं–(१) प्रतिष्ठा करानेवाला प्रतिष्ठाचार्य, (२) सौधर्म इन्द्र और उसकी इन्द्राणी, (३) कुछ इन्द्र या प्रत्येन्द्र, (४) तीर्थंकरके पिता, (५) तीर्थंकरकी माता, (६) पूजा पढ़ानेमें सहायक विद्वान् (७) सामग्री तय्यार करनेवाले चार महाशय (८) कमसे कम आठ पढ़ी हुई कन्याएं जो देवियोंका काम कर-सकें (९) लौकान्तिक देव आठ जो स्त्री रहित पुरुष सदाचारी हों (१०) एक सूचनाकर्ता (११) चार प्रबन्धक।

(१) प्रतिष्ठाचार्यका लक्षण–शास्त्रज्ञाता, सदाचारी, जिनधर्मका दृढ़ श्रद्धानी, संतोषी, पवित्र शरीरी, उच्च कुली, सात व्यसन रहित, ब्रह्मचारी, त्यागी या गृहस्थ हो, जबसे प्रतिष्ठाका कार्य करावे एक दफे भोजन करे, (पानी और भी पी सक्ता है), तीन काल सामायिक करे, रात्रिको कुछ न लेवे, ब्रह्मचर्य पाले, शुद्ध भोजन करे, शुद्ध श्वेत वस्त्र पहरे।

(२) इद्रका लक्षण—संपत्तिवान, राज्यवान, नवयुवक, उच्चकुली, जैनधर्मका दृढ़ श्रद्धानी, सदाचारी, शास्त्र ज्ञाता, मान्य, सप्त व्यसन त्यागी अर्थात् पाक्षिक श्रावकका आचार पालनेवाला हो। यह यज्ञोपवीतका धारी हो, कमसेकम नीचे लिखे गहने पहने–(१) करधनी कमरमें, (२) अंगुलीमें अंगूठी, (३) हाथमें कडे, (४) कंठमें हार, (५) कानोंमें कुण्डल, (६) मुकुट। जबतक प्रतिष्ठा समाप्त न हो एक दफे भोजन करे, दूसरी दफे पान पदार्थ ले सक्ता है। तीनो समय सामायिक करे। शुद्ध वस्त्र केसरसे रंगे हुए पहरें। गृहस्थके कार्योंसे निश्चिन्त हो। ब्रह्मचर्य पालें। इन्द्राणी भी इन्द्रके समान नियम पाले व पढ़ी हुई विचारवान होनी चाहिये। उसीकी स्त्री होना ठीक है।

(३) अन्य इन्द्र या पत्येन्द्र यदि ११ और होसकें तो अच्छा है। ये सब भी इन्द्रके समान नियम पालनेवाले हो।

(४) तीर्थंकरका पिता–मुख्य संघपति जो श्रद्धावान व सदाचारी हो व पाक्षिक श्रावकका नियम पालता हो। प्रतिष्ठा होनेतक रात्रि भोजन पानका त्यागी हो, दिनमें एक दफे भोजन करे, अन्य समय पान पदार्थ दूधादि ले सक्ता है, ब्रह्मचर्य पाले, घरके कार्योंसे निश्चिन्त हो, दो दफे सवेरे शाम सामायिक करे, चित्तका उदार तथा दानी हो तथा शिक्षित हो।

(५) तीर्थंकरकी माता–उसीकी स्त्री जो ऊपरके नियम पाले, शिक्षित या समझदार हो।

(६) पूजा पढ़ानेमें सहायक २ विद्वान् भी प्रतिष्ठा तक नियमसे रहें, एक भुक्त करें, दूसरी दफे पान पदार्थ लेवें, ब्रह्मचर्य पालें, पाक्षिक श्रावक हों।

(७) सामग्री तैयार करनेवाले ४ महाशय भी ऊपरकी भांति वर्तें।

(८) ८ कन्याएं जो १२ वर्षके अनुमान हों, स्वरूपवान हों, उनको शुद्ध केशरसे रंगे वस्त्र पहराए जावें, मुकुट लगावें, प्रतिष्ठा होनेतक पानी सिवाय रात्रिको कुछ न लेवें, दोनों काल जाप करें।

(९) ८ ब्रह्मचारी या स्त्री रहित वैरागी या उदासीन भाव रखनेवाले पुरुष सफेद, शुद्ध वस्त्र पहने व चांदीका सफेद ही मुकुट लगावें।

(१०) सूचनाकर्ता पढ़ा हुआ बुद्धिमान ऐसा हो जिसका स्वर ऊंचा व गंभीर तथा जो माननीय हो व विद्वान् हो।

(११) चार प्रबन्धक भाई ऐसे चतुर हों जो प्रतिष्ठामें आवश्यक वस्तुओंका प्रबन्ध पहलेसे ही कर देवें व जो प्रतिष्ठाचार्यसे सम्मति लेते रहें व उसकी आज्ञानुसार सब काम करें व यह देखें कि प्रतिष्ठाके कार्यमें सावधानी व शांति है व दर्शकगणोंका मन धर्मभावमें भीज रहा है।

८—नांदीविधान—श्री जिनमंदिरमें किसी शुभ दिन सब नरनारी एकत्र हों तथा ऊपर लिखे सर्व ही पात्र जो प्रतिष्ठाकी विधि करानेमें सहायक हैं सो एकत्र होवें। जब नित्य अभिषेक व पूजन होजावे तब श्री जिनभगवानके आगे वेदीपर साथिया बनावे और उसके ऊपर एक माला व वस्त्रसे वेष्टित कलशको कुलवंती स्त्रियां उस स्वस्तिकपर प्रथम अर्घ चढ़ाकर विराजमान करें।

फिर इन्द्र जिसको स्थापित किया हो उसको तथा तीर्थंकरका पिता जिसे स्थापन किया हो ये दोनों शुद्ध चंदनचर्चित जलसे स्नान करें और शुद्ध वस्त्र पहनकर आवें, तब श्री जिनमुनि हों तो उनके सामने नहींतो प्रतिमाजीके सामने प्रतिष्ठाचार्य नीचे लिखा मत्र पढ़कर पुष्प क्षेपण करे। दोनोंपर अलग २ मंत्र पढ़कर डाले।

ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा णमोअरहंताणं सर्वर्द्धिसमृद्धगणधराणं अनाहतपराक्रमस्ते भवतु।

फिर आगे इंद्र व मुख्य यजमान अर्थात् तीर्थंकरका पिता हाथ जोड़ खड़ा हो। पीछे अन्य सब पात्र खड़े हों और योगभक्ति तथा सिद्धभक्ति प्रतिष्ठाचार्य पढे तथा पढ़वावे। फिर कलशपर पुष्प क्षेपण करे व करावे। फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़कर तीर्थंकरके पिता-पर पुष्प क्षेपण करे—

" ॐ अद्य (यहां देश, नगर, काल कहे) अस्य यजमानस्य (यहां तीर्थंकरके पिता बननेवालेका नाम ले) इक्ष्वाकवंशी

श्री ऋषभनाथ संताने काश्यपगोत्रे परावर्तनं यावदध्वरं भवतु भवतु क्रौं ह्रीं हूँ नमः । ”

नोट–जिस तीर्थंकरकी प्रतिष्ठा करनी हो उसीका वंश व गोत्रका नाम ले। उस यजमानमें जबतक प्रतिष्ठा पूर्ण न हो स्थापित करे। फिर आचार्य यजमानके पट्टबंध और इन्द्रके मुकुटबंध बांधे। इस दिन इन्द्र तथा यजमान उपवास व एकभुक्त करे तथा अबसे प्रतिष्ठा होनेतक किसीकी पंक्तिमें भोजन न करे–शुद्ध भोजन करे। फिर सब पात्र जो जो नियम पहले बताए गए हैं उनके पालनेका संकल्प करें। जिस समय पट्ट बांधा जावे व मुकुट बांधा जावे उस समय मंदिरके बाहर बाजे बजाए जावें। फिर सब पात्र खड़े होकर शांतिपाठ व विसर्जन करें।

९–मंडपरक्षा विधि व ध्वजादंड स्थापित करना–जहां प्रतिष्ठाकी विधि की जाय उस मंडपको यथायोग्य ध्वजाओंसे सज्जित करें, द्वारोंपर वंदनमालाए बांधें व चार तरफके मुख्य द्वारोंपर धूप घट रक्खें जिसमें धूप सदा दिनमें दीजाया करे व चार मुख्य कलश मट्टीके या धातुके वस्त्रसे सज्जित कर व ९ दफे णमोकार मंत्र पढ़कर मंत्रितकर चारों मुख्य द्वारोंपर विराजमान करे।

जिस दिन मंडप प्रतिष्ठा व ध्वजा स्थापन विधि हो उस दिन नरनारी व प्रतिष्ठा करानेवाले सब पात्र उपस्थित हों। मडपकी ऊंचाईसे दुगना व अधिक ऊंचा ध्वजादंड तय्यार किया जावे उसमें त्रिकोणी ध्वजा बड़ी शुद्ध वस्त्रकी रंगीन तय्यार की जावे। उस ध्वजामें श्री अरहंतका चित्र आठ प्रातिहार्य सहित चित्रित हो। यदि चित्र न बन सके तो बड़ा ॐ लिखा जावे तथा नीचे लिखा जावे–जैनधर्मकी जय। फिर लिखा जावे श्री जिनेन्द्रमूर्ति प्रतिष्ठामंडपमें पधारिये। इस ध्वजादंडको मंडपके आगे तीन कटनीदार चबूतरा बनाकर बीचमें मजबूत गाड़ा जावे।

इस दिन ऊपर टेबिलपर शास्त्र या यंत्र विराजमान करके इन्द्र पहले नित्य व सिद्धपूजा करे। सामने ध्वजादंड रक्खा हो। सिद्धभक्ति तथा श्रुतभक्ति पढ़े। फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़कर ध्वजापर पुष्प क्षेपे–

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशासनपताके सदोच्छ्रिता तिष्ठ तिष्ठ भव भव वषट् स्वाहा।

फिर उदक चंदनादि बोलकर अर्घ चढ़ावे और ध्वजादंडको चबूतरेपर खड़ा करावे।

फिर इन्द्र नीचेप्रकार देवोंको प्रतिष्ठाविधिमें सेवा करनेकी आज्ञा करे।

(१) चार प्रकार देवोंको नीचेका श्लोक पढ़कर कहे व मंडपके चारों तरफ पुष्प क्षेपे।

चतुर्णिकायामरसंघ एष, आगस यज्ञे विधिना नियोगं। स्वाकृत्य भक्त्या हि यथार्हदेशे, सुस्था भवंत्वान्हिककल्पनायाम् ॥

(२) पवनकुमार देवोंको यह पढ़कर कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातमारुतसुराः पवनोद्भयाशाः, संघट्टसंलसितनिर्मलतांतरीक्षाः ।
वात्यादिदोषपरिभूतवसुंधरायां, प्रत्यूहकर्म निखिलं परिमार्जयंतु ॥

(३) वास्तुकुमारदेवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातवास्तुविधिषूद्धसंनिवेशा, योग्यांशभागपरिपुष्टवपुः प्रदेशाः ।
अस्मिन् मखे रुचिरसुस्थितभूषणांके, सुस्था यथार्हविधिना जिनभक्तिभाजः ॥

(४) मेघकुमारदेवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातनिर्मलनभः कृतसनिवेशा, मेघासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः ।
अस्मिन्मखे विकृत विक्रियया नितांते, सुस्था भवंतु जिनभक्तिमुदाहरंतु ॥

(५) अग्निकुमार देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातपावकसुराः सुरराज पूज्य, संस्थापनाविधिषु संस्कृतविक्रियार्हाः ।
स्थाने यथोचितकृते परिवद्धकक्षाः, संतु श्रियं लभत पुण्यसमाजभाजां ॥

(६) नागकुमार जातिके देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

नागाः समाविशतभूतलसंनिवेशाः, स्वां-भक्तिमुल्लसितगात्रतया प्रकाश्य ।
आशीविषादिकृतविघ्नविनाशहेतोः, स्वस्था भवंतु निजयोग्यमहामनेषु ॥

(७) फिर पूर्व ओरके द्वारपाल यक्षको नीचेका श्लोक पढ़कर स्थापित करे तब पूर्व द्वारपर जो कलश रक्खा है उसपर पुष्प क्षेपे—

पुरुहूतदिशिस्थिति मे हि करोद्, धृतकांचनदंडगखंडरुचे । विधिना कुमुदेश्वरसव्यशये, धृतपंकजशंकितकंकणके ॥

(८) फिर ऊपरके समान दक्षिण दिशामें स्थापान करे—

वामनाशुयमदिग्विभागतः, स्थानमेहि जिनयज्ञकर्मणि । भक्तिभारकृतदुष्टनिग्रहः, पूतशासनकृतामवंध्यकः ॥

(९) इसी तरह पश्चिम दिशामें करे—

पश्चिमासु विततासु हरित्सु, भूरिभक्तिभरभूकृतपीठाः । अंजनस्वहितकाम्ययाऽध्वरे, तिष्ठ विघ्नविलयं प्रणिधेहि ॥

(१०) इसी तरह उत्तर दिशामें करे—

पुष्पदंतभवनासुरमध्ये, सत्कृतोऽसि यत इत्थमवोचम् । उत्तरत्र मणिदंडकराग्रस्तिष्ठ विघ्नविनिवृत्तिविधायी ॥

इसतरह चार द्वारपर चार यक्ष द्वारपाल स्थापे ।

(१२) कुबेरको रत्नवृष्टि आदिके लिये नियत करे ।

करकनककुसुमानामंजलिं संवितीर्य, धनदमणिसुरत्नानीशपूजार्थसार्थं ।
किर किर शीघ्रं भक्तिमुद्भावयित्वा, निगदतु परमांके मंडपोर्ध्वावकाशे ॥

इतना पढ़ पुष्प मंडपके ऊपर क्षेपण करे ।

फिर सब पात्र मिलकर स्तुति पढ़ते हुए ध्वजादंड सहित मंडपकी तीन प्रदक्षिणा दें और शांतिपाठ विसर्जन करे । ध्वजादंड स्थापनके समय व आगे पीछे वादित्र बजाए जावें ।

१०–जप करनेकी विधि विम्ब प्रतिष्ठामें १लाख व मंदिर या वेदी प्रतिष्ठामें १०००० या ८००० जप करना उचित है। इस जपको गर्भकल्याणकके होनेके पहले तक मंडपकी वेदीके स्थानमें बैठकर समाप्त किया जावे ।

यदि १० आदमी हों व १००० जप रोज करें तो १० दिन चाहिये। यदि अधिक हों व कम हों तो जिस तरह १ लाख जप पूरे हों वह प्रबन्ध किया जावे ।

एक लाख लौंगे गिन ली जावें । जप करनेवाले आगे अग्निकी अंगीठी रख लेवें तथा एक एक मंत्र पढ़ते हुए एक एक लौंग डालते जावें । शुद्ध वस्त्र पहनकर सवेरेके समय निराहार निर्मलभावसे जप करें । अशुद्ध बोलनेवाले न हों—

" ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वविघ्न विनाशनाय स्वाहा । "

११–याग मंडल बनानेकी विधि–मंडपमें मूल मध्य वेदीके आगे जो चबूतरा हो उसपर मंडल बनानेकी आवश्यक्ता है। मंडल बनानेके लिये सफेद, पीला, लाल, काला, हरा इन पांच रंगोंके रंगे हुए चावल तय्यार करे और इनसे बहुत सुन्दर मण्डल

नीचे प्रमाण बनावे । या अन्य तरहके चूर्णसे मंडल बनावे जो बिगड़े नहीं । मध्यमें ॐ लिखे, उसके चारों तरफ एक वलय बनावें ।

(१) पहले वलयमें १७ खाने करे व १७ पुंज भिन्न २ रक्खे या १७ फूल बनावे व १७ नाम नीचे प्रमाण लिखे । अपनी बाईं ओरसे शुरू करके घूमते हुए दाहनेको आवे, जैसे प्रदक्षिणा देते हैं—

१ अरहंत, २ सिद्ध, ३ आचार्य, ४ उपाध्याय, ५ साधु, ६ अर्हंत मंगलं, ७ सिद्ध मंगलं, ८ साधु मंगलं, ९ केवलि प्रज्ञप्त-धर्म मंगलं, १० अर्हंत लोकोत्तम, ११ सिद्ध लोकोत्तम, १२ साधु लोकोत्तम, १३ केवलीप्रज्ञप्तधर्म लोकोत्तम (इसको कम करके भी लिख सक्ता है—के० प्र० धर्म लोकोत्तम), १४ अर्हंत शरण, १५ सिद्ध शरणं, १६ साधु शरणं, १७ के० प्र० धर्म शरणं ।

(२) उसके बाहर दूसरा वलय खींचे—उसमें २४ भूतचौवीसीके २४ खाने करके पुंज रक्खे या फूल बनावे व अलग २ नीचे प्रकार नाम लिखे—

१ निर्वाण, २ सागर, ३ महासाधु, ४ विमलप्रभ, ५ शुद्धाभदेव, ६ श्रीधर, ७ श्रीदत्त, ८ सिद्धाभ, ९ अमलप्रभ, १० उद्धार, ११ अग्निदेव, १२ संयम, १३ शिव, १४ पुष्पांजलि, १५ उत्साह, १६ परमेश्वर, १७ ज्ञानेश्वर, १८ विमलेश्वर, १९ यशोधर, २० कृष्णमति, २१ ज्ञानमति, २२ शुद्धमति, २३ श्रीभद्र, २४ अनंतवीर्य । फिर तीसरा वलय खींचे ।

(३) तीसरा वलय—इसमें भी २४ कोठे करके २४ पुंज रक्खे या २४ फूल बनावे या २४ नाम वर्तमान जिनके लिखे—

१ ऋषभ, २, अजित, ३ संभव, ४ अभिनंदन, ५ सुमति, ६ पद्मप्रभ, ७ सुपार्श्व, ८ चंद्रप्रभ, ९ पुष्पदंत, १० सीतल, ११ श्रेयांश, १२ वासुपूज्य, १३ विमल, १४ अनंत, १५ धर्म, १६ शांति, १७ कुंथु, १८ अर, १९ मल्लि, २० मुनिसुव्रत, २१ नमि, २२ नेमि, २३ पार्श्वनाथ, २४ वर्द्धमान । इसके आगे चौथा वलय खींचे ।

(४) चौथा वलय—इसमें भी २४ कोठे खींच करके २४ पुंज रक्खे या २४ फूल बनावे या २४ नाम भविष्य जिनके लिखे—

१ महापद्म, २ सुरप्रभ, ३ सुप्रभु, ४ स्वयंप्रभ, ५ सर्वायुध, ६ जयदेव, ७ उदयप्रभ, ८ प्रभादेव, ९ उदंकदेव, १० प्रश्नकीर्ति, ११ जयकीर्ति, १२ पूर्णबुद्धि, १३ निःकषाय, १४ विमलप्रभ, १५ बहुलप्रभ, १६ निर्मल, १७ चित्रगुप्ति, १८ समाधि-गुप्ति, १९ स्वयंभू, २० कंदर्प, २१ जयनाथ, २२ विमल, २३ दिव्यवाद, २४ अनंतवीर्य । इसके आगे पांचवा वलय खींचे ।

(५) पांचवा वलय—इसमें २० कोठे करके २० पुंज रक्खे या २० फूल बनावे या नीचे लिखे २० नाम विदेहके वर्तमान

तीर्थंकरोंके लिखे—

१ सीमंधर, २ युगमंधर, ३ बाहु, ४ सुबाहु, ५ संजातक, ६ स्वयंप्रभ, ७ ऋषभानन, ८ अनंतवीर्य, ९ सुरिप्रभ, १० विशालप्रभ, ११ वज्रधर, १२ चंद्रानन, १३ चंद्रबाहु, १४ भुजंगम, १५ ईश्वर, १६ नेमिप्रभ, १७ वीरसेन, १८ महाभद्र, १९ देवयश, २० अजितवीर्य। इसके आगे छठा वलय खींचे।

(६) छठा वलय—इसमें आचार्यके छतीस गुणके लिये छतीस कोठे करे, फूल बनावे या उनमें इतने ही पुंज करे या गुणोंके नाम नीचे प्रमाण लिखे—

१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपाचार, ५ वीर्याचार, ६ अनशन तप, ७ अवमोदर्य, ८ वृत्तिपरिसंख्यान, ९ रस परित्याग, १० विविक्तशय्यासन, ११ कायक्लेश, १२ प्रायश्चित्त, १३ विनय, १४ वैयावृत्त्य, १५ स्वाध्याय, १६ व्युत्सर्ग, १७ ध्यान, १८ उत्तम क्षमा, १९ उत्तम मार्दव, २० उ० आर्जव, २१ उ० सत्य, २२ उ० शौच, २३ उ० संयम, २४ उ० तप, २५ उ० त्याग, २६ उ० आकिंचन्य, २७ उ० ब्रह्मचर्य, २८ मनोगुप्ति, २९ वचनगुप्ति, ३० कायगुप्ति, ३१ सामायिक, ३२ वंदना, ३३ स्तवन, ३४ प्रतिक्रमण, ३५ स्वाध्याय, ३६ कायोत्सर्ग। इसके आगे सातवां वलय खींचे।

(७) सातवां वलय—इसमें २५ कोठे करे, २५ पुंज रक्खे या २५ फूल बनावे या २५ गुण उपाध्यायके नीचे प्रमाण लिखे—

१ आचारांग, २ सूत्रकृतांग, ३ स्थानांग, ४ समवायांग, ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति, ६ ज्ञातृधर्मकथा, ७ उपासकाध्ययन, ८ अंतकृद्दशांग, ९ अनुत्तरोपपादिकांग, १० प्रश्नव्याकरण, ११ विपाक सूत्र, १२ उत्पादपूर्व, १३ अग्रायणी, १४ वीर्यानुवाद, १५ अस्तिनास्ति प्रवाद, १६ ज्ञानप्रवाद, १७ सत्यप्रवाद, १८ आत्मप्रवाद, १९ कर्मप्रवाद, २० प्रत्याहार, २१ विद्यानुवाद, २२ कल्याणवाद, २३ प्राणप्रवाद, २४ क्रियाविशाल, २५ त्रैलोक्यबिंदु। इसके आगे आठवां वलय खींचे।

(८) आठवां वलय—इसमें २८ कोठे करे, २८ पुंज रक्खे या २८ फूल बनावे या २८ गुण साधुके नीचे प्रमाण लिखे—

१ अहिंसा महाव्रत, २ सत्य, ३ अचौर्य, ४ ब्रह्मचर्य, ५ परिग्रह त्याग, ६ ईर्या समिति, ७ भाषा स०, ८ एषणा स०, ९ आदाननिक्षेपण स०, १० व्युत्सर्ग स०, ११ स्पर्शेंद्रिय जय, १२ रसनेंद्रिय जय, १३ घ्राणेंद्रिय जय, १४ चक्षुरिंद्रिय जय, १५ श्रोत्रेंद्रिय जय, १६ सामायिक, १७ वंदना, १८ स्तवन, १९ प्रतिक्रमण, २० स्वाध्याय, २१ कायोत्सर्ग, २२ भूमिशयन,

२३ अस्नान, २४ वस्त्र त्याग, २५ केशलोंच, २६ दंतधावन वर्जन, २७ एकभुक्त, २८ स्थित भोजन। इसके आगे नवमा वलय खींचे।

(९) नवमां वलय–इसमें ४८ कोठे करे, ४८ पूंज रक्खे व ४८ फूल बनावे व ४८ ऋद्धि नीचे प्रमाण लिखे। यहां इन ऋद्धियोंके धारक मुनियोंका संकेत है—

१ केवलज्ञान, २ मनःपर्याय ज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ कोष्ठबुद्धि, ५ पादानुसारबुद्धि, ६ बीज बुद्धि, ७ संभिन्नश्रोत्र, ८ दूरस्पर्श, ९ दूरास्वादन, १० दूर घ्राण, ११ दूरावलोकन, १२ दूरश्रवण, १३ दश पूर्वित्व, १४ चतुर्दशपूर्वित्व, १५ प्रत्येक-बुद्धित्व, १६ वादित्व, १७ जलादि चारण ऋद्धि, १८ आकाश गमन, १९ अणिमादि ऋद्धि, २० अन्तर्धानादि ऋद्धि, २१ उग्रतप, २२ दीप्ततप्त, २३ तप्ततप, २४ महातप, २५ घोरतप, २६ घोर पराक्रम, २७ घोर ब्रह्मचर्य, २८ मनोबल, २९ वचन बल, ३० काय बल, ३१ आमर्षौषधि, ३२ क्ष्वेलौषधि, ३३ जलौषधि, ३४ मलौषधि, ३५ विडौषधि, ३६ सर्वौषधि, ३७ आस्याविष, ३८ दृष्टचविष, ३९ आशीविष, ४० दृष्टिविष, ४१ क्षीरश्रावि, ४२ मधुश्रावि, ४३ घृतश्रावि, ४४ अमृतश्रावि, ४५ अक्षीणमहानस, ४६ अक्षीणमहालय, (४७) १४५३ गणधर, (४८) २९४८००० तीर्थंकर समास्थित मुनि।

मण्डलके ४ कोनोंमें चार कोठे बनावे–उनमें चार गुलदस्ते बनावे या नीचे प्रमाण क्रमसे लिखे।

(१) ९२५५३२७९४८ अकृत्रिमजिनमूर्तयः। (२) ८५६९७४८१ अकृत्रिम जिनमंदिराः। (३) स्याद्वाद परम जिनागमः। (४) निश्चयव्यवहाररत्नत्रयस्वरूप जिनधर्मः।

इसतरह इस मण्डलमें कुल २५० कोठे बनावे–मण्डलको बहुत सुन्दर व दर्शनीय बनाना चाहिये। हम चांदी, रांगा आदि धातुओंके चूर्णसे या अन्य किसी चूर्णसे जिसमें प्रतिष्ठा पूर्ण होने तक त्रस जंतु न पड़ें, मण्डल बना सक्ते हैं, ऊपर सुन्दर चंदोवा होना चाहिये, तीन छत्र मध्यमें बंधे हों, वंदनवारें बंधी हों, चमरादिसे सुशोभित हो। मण्डलके ऊपर न स्थापना रखना चाहिये न कुछ चढ़ाना चाहिये। वह मात्र स्मृति करानेके लिये है। सर्व दर्शकगण देख करके अपने भावोंको निर्मल करें यह प्रयोजन है। मण्डलको चौकीपर चद्दर बिछाकर भी बना सक्ते हैं।

१२–मण्डलमें श्री जिनबिम्ब स्थापन–याग मण्डलकी पूजा गर्भकल्याणकके एक दिन पहले करनी चाहिये। इनके एक दिन पहले श्री जिन मंदिरसे प्रतिष्ठित बिम्ब लाकर मध्य वेदीमें विराजमान करना चाहिये। बिम्बको रथमें या पालकीमें यथायोग्य

उत्सवके साथ लाना व विराजमान करना उचित है तथा इस वेदीमें आठ मङ्गल द्रव्य जो सुन्दर बने हो स्थापित करना चाहिये। अर्थात् १ छत्र, २ ध्वजा, ३ कलश, ४ चामर, ५ ठोना (सप्रतिष्ठ), ६ झारी, ७ दर्पण, ८ पंखा।

१३—याग मण्डलकी पूजाके लिये तय्यारी—जिस दिन याग मण्डलकी पूजा हो मण्डपमें स्त्री पुरुषोंको यथायोग्य बैठनेका प्रबन्ध टिकट द्वारा किया जावे। जो प्रबंधकर्ता हों उनको प्रबंध सम्बंधी खास टिकट दिये जावें। जितने पात्र पहले कहे गए हैं उनमें लौकांतिक देवोंको छोड़कर और सब उपस्थित हों। उनमें प्रतिष्ठाचार्य, इन्द्र तथा मुख्य यजमान जो तीर्थंकरका पिता है ये तीन नीचे-प्रकार क्रिया करके शुद्धि करें। अन्य सब पात्र बैठे रहें उनपर प्रतिष्ठाचार्य समय२ पुष्पांजलि क्षेपण करें। सामग्री तय्यार करनेवाले, सूचनाकर्ता व प्रबंधक इस शुद्धि विधानमें शरीक न हों तो हर्ज नहीं है। सब शुद्ध वस्त्र सुन्दर केशरिया रंगे हुए पहनें। आचार्य श्वेत वस्त्र पहने। प्रायः वस्त्रोंमें बिना सिले धोती डुपट्टे पहने जावें जिससे शरीर हलका रहे, पसेवकी रज निकल सके व शुद्ध पवन प्रवेश कर सके।

१४—अंगशुद्धि, न्यास व सकलीकरण क्रिया—जब सब पात्र यथायोग्य आसनपर याग मण्डलके सामने बैठ जावें तब अंग-शुद्धि विधान आचार्य प्रारम्भ करे—

(१) नीचे लिखा मंत्र पढ़कर शुद्ध जल अपने ऊपर व दूसरोंपर छिड़के—अर्थात् अमृत स्नान करे—

ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय सं हं झ्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।

इसके पहले सब कोई तीन वार णमोकार मंत्र पढ़ लेवें तब अमृत स्नान करें।

(२) फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़कर अपनी२ धोतीको स्पर्श करें—

धौतांतरीयं विधुकांतिसूत्रैः, सद् ग्रंथितं धौतनवीन शुद्धं। नग्नत्वलज्जिन्न भवेच्च यावत् संधार्यते भूषणमूरुभूम्याः ॥

(३) फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ अपना२ डुपट्टा स्पर्श करे—

संद्धानमंचद्दशया विभांतमखंडधौताभिनवं मृदुत्वं। संधार्यते पीतासितांशुवर्णपंशोपरिष्टाद् धृतभूषणांकं ॥

(४) फिर अंग शुद्धिके लिये सर्व अंगमें नौ स्थानोमें चंदन लगावे तब नीचे लिखा मंत्र पढ़े—

नौ स्थान—१ ललाट (मत्था), २ मस्तक (सिर), ३ गला, ४ छाती, ५—६ दोनों बाहु, ७ पेट, ८ नाभि, ९ पीठ।

मंत्र—" ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः मम सर्वांगं शुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा। "

(५) फिर मालाको चाहे रत्नकी हो या मोतीकी हो या सुवर्णकी हो या पुष्पकी हो या गून्थे हुए सूतकी हो, नीचेका श्लोक पढ़कर धारण करे—

जिनांघ्रिभूमिस्फुरितां स्रजं मे, स्वयंवरं यज्ञविधानपत्नी। करोतु यत्नादचलत्वहेतोरितीव मालामुररीकरोमि॥

(६) फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ मुकुट धारण करे—

शीर्षण्यशुंभन्मुकुटं त्रिलोकी हर्षाप्तराज्यस्य च पट्टबंधं। दधामि पापोर्मिकुलप्रहंतृ रत्नाढ्यमालाभिरुदंचितांगं॥

(७) फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़कर कठमालाको पहने—

ग्रैवेयकं मौक्तिकदामधाम विराजितं स्वर्णनिबद्धमुक्तं। दधेऽध्वरापर्णविसर्पणेच्छुर्महाधना भोगानिरूपणांकं॥

(८) फिर गलेमें हार डाले तब यह श्लोक पढ़े—

मुक्तावलीगोस्तनचन्द्रमाला, विभूषणान्युत्तमनाकभाजां। यथार्हसंसर्गगतानि यज्ञलक्ष्मी समालिंगनकृद्दधेऽहं॥

(९) फिर कानोंमें कुडल पहने तब नीचे लिखा श्लोक बोले—

एकत्र भास्वानपरत्र सोमः सेवां विधातुं जिनपस्य भक्त्या। रूपं परात्तस्य च कुंडलस्य मिषादवाप्ते इव कुंडले द्वे॥

(१०) फिर भुजाओंमें भुजबन्ध पहने तब नीचेका श्लोक पढ़े—

भुजासु केयूरमपास्तदुष्टवीर्यस्य सम्यक् जयकृत् ध्वजांकं। दधे निधीनां नवकैश्च रत्नैर्विमंडितं सद्ग्रथितं सुवर्णे॥

(११) फिर नीचेका श्लोक पढ़कर यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहने या बदले—

यज्ञार्थमेवं सृजतादिचक्रेश्वरेण चिह्नं विधिभूषणानां। यज्ञोपवीतं विततं हि रत्नत्रयस्य मार्गं विदधाम्यतोऽहं।

(१२) फिर नीचेका श्लोक पढ़कर कटिमेखला या करधनी पहरे—

अन्यैश्च दीक्षां यजनस्य गाढं कुर्वद्भिरिष्टैः कटिसूत्रमुख्यैः। संभूषणैर्भूषयतां शरीरं, जिनेन्द्रपूजा सुखदा घटेत॥

नोट—इन गहनोंका पहनना इन्द्रके लिये आवश्यक है।

(१३) फिर नीचेका श्लोक पढ़कर नियम करे कि जबतक प्रतिष्ठाका कार्य न समाप्त होगा व्यापारादिकी चिंता छोड़ता हू

व एकचित्त होकर सर्व प्रतिष्ठाका कार्य करूंगा—

विधेर्विधातुर्यजनोत्सवेऽहं गेहादिमूर्च्छामपनोदयामि । अनन्यचेताः कृतिमादधामि, स्वर्गादि लक्ष्मीमपि हापयामि ॥

(१४) फिर अंग रक्षाके लिये पंचपरमेष्ठी वाचक अ सि आ उ सा पांच अक्षरोंको क्रमसे मस्तकमें, ललाटमें, नेत्रोंके मध्यमें, कण्ठमें व वक्षःस्थलमें धारण करे। फिर आचार्यभक्ति, सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति तथा चारित्रभक्ति पढ़ी जावे, फिर नौवार णमोकार मंत्र मनमें पढ़कर कायोत्सर्ग करे व अपने दोषोंकी आलोचना करे। फिर—

(१) ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां अगुष्ठाभ्यां नमः। ऐसा मंत्र पढ़कर दोनों अंगूठे शुद्ध करे अर्थात् पानीमें डबोवे या पानी छिड़के।

(२) ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं ह्री तर्जनीभ्यां नमः, तर्जनी दोनों अंगुलियोंको शुद्ध करे।

(३) ॐ ह्रूं णमो आइरीयाणं ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः, मध्यमा बीचकी दोनों अंगुलियोंको शुद्ध करे।

(४) ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं अनामिकाभ्यां नमः, दोनों अनामिका अंगुलियोंको शुद्ध करे।

(५) ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूण, ह्रः कनिष्ठिकाभ्यां नमः, दोनों सबसे छोटी अंगुलियोंको शुद्ध करे।

(६) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्या नमः—दोनों हाथोंको दोनों तरफसे शुद्ध करे।

(७) ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं ह्रां मम शीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढ़कर मस्तकपर पुष्प डाले।

(८) ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं ह्रीं मम वदनं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढकर अपने चिहरे (मुख)पर पुष्प क्षेपे।

(९) ॐ ह्रूं णमो आइरीयाणं ह्रू हृदयं मम रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढ़कर छातीपर पुष्प डाले।

(१०) ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौ मम नाभि रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढ़कर नाभिपर पुष्प क्षेपे।

(११) ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढकर पगोपर पुष्प क्षेपे।

(१२) ॐ ह्रां णमो अरहताणं ह्रां पूर्वदिशात् आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मत्रको पढ़कर पूर्व दिशाकी ओर पुष्प क्षेपे। (१३) ॐ ह्री णमोसिद्धाणं ह्रीं दक्षिणदिशात् आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढ़कर दक्षिण दिशामें पुष्प क्षेपे।

(१४) ॐ ह्रूं णमो आइरीयाणं ह्रूं पश्चिमदिशात् आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढ़कर

पश्चिम दिशाकी ओर पुष्प क्षेपे। (१५) ॐ ह्रौ णमो उवज्झायाणं ह्रौ उत्तरदिशात् आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढ़कर उत्तर दिशाकी ओर पुष्प क्षेपे।

(१६) ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः सर्वदिशात् आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढ़कर सर्व दिशाओंपर पुष्प क्षेपे।

(१७) ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढकर अपने भीतर अंगपर पुष्प क्षेपे।

(१८) ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण ह्रीं मम वस्त्रं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढ़कर अपने वस्त्रोपर पुष्प क्षेपे।

(१९) ॐ ह्रूं णमो आइरीयाण ह्रू मम पूजाद्रव्य रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मत्रको पढकर पूजाकी सामग्री आदिपर पुष्प डाले।

(२०) ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं मम स्थलं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढकर पूजनके स्थानपर पुष्प क्षेपे।

(२१) ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूण ह्रः सर्वं जगत् रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मंत्रको पढकर चारों तरफ लोगोंपर पुष्प क्षेपे।

(२२) क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः यह मत्र पढ सर्व दिशापर पुष्प क्षेपे। (२३) ह्रां ह्रीं ह्रू ह्रौ ह्रः यह मत्र पढ सर्व दिशापर पुष्प क्षेपे।

(२४) ॐ ह्री अमृते अमृतोद्‌भवे अमृतवर्षिणि अमृतं श्रावय श्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूँ ब्लूँ द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय ठः ठः स्वाहा। इस मंत्रको पढ़कर चूल्लमें पवित्र जल ले मस्तकपर डाले। (२५) फिर ऐसा ध्यान करे कि अपने मस्तकरूपी मेरुपर्वतपर श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र स्थापित हैं अर देवोंके समूह अभिषेक कर रहे हैं, उस जलसे मैं पवित्र भया हू।

(२६) फिर नीचे लिखे मत्रको नौवार जपे—ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं स्वाहा। ॐ ह्री णमो आइरीयाणं णमो उवज्झायाणं स्वाहा। ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं स्वाहा—पीछें मनमें अपने दोषोंकी आलोचना करे।

(२७) फिर दोनों हाथोंकी अंगुलियोंसे अपने हृदयको स्पर्शे और यह मंत्र पढे—ॐ ह्रा णमो अरहंताणं ह्रा स्वाहा।

(२८) इसी तरह ललाटको स्पर्शे व पढे—ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं स्वाहा।

(२९) इसी तरह सिरके दाहनी ओर—ॐ ह्रूं णमो आइरीयाण ह्रूं स्वाहा।

(३०) इसी तरह सिरके पीछे—ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं स्वाहा।

(३१) इसी तरह सिरके बांई ओर—ॐ ह्रः णमोलोए सव्वसाहूण ह्रः स्वाहा।

(३२) नीचे लिखा मंत्र ७ वार पढ़कर पुष्पोंमें फूक देकर सर्व पात्रोंपर व प्रबन्धक आदिपर क्षेपें—ॐ नमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा। (३३) फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ पुष्पोंको फूकदेकर सर्व विघ्नोंकी शांतिके लिये सर्व दिशाओंपर क्षेपे—ॐ क्षूं हूं फट् किरिटिं घातय घातय परिविघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्रखंडान् कुरु कुरु परमुद्रां छिन्द छिन्द परमंत्रान् भिंद भिंद क्षां क्ष्वः फट् स्वाहा।

द्वितीय अध्याय।

यागमंडलकी पूजा।

ऊपर कहे अनुसार प्रतिष्ठाके मुख्य पात्र जब अपनी शुद्धि कर चुकें व रक्षाका उपाय कर चुकें तब सबको खड़े होकर व हाथ जोड़कर नीचे लिखी स्तुति पढ़नी चाहिये।

स्तुति।

दोहा—वंदौं श्री अरहंतको, वंदौं सिद्ध महान। आचारज उवझाय मुनि, वंदौं करके ध्यान ॥

पद्धरी छन्द।

जय वीतराग सर्वज्ञ देव, तुम ही मंगलकर देव देव। तुम ही अघहर्ता पूज्य देव, तुमरी शरणा सुख-हेतु देव ॥१॥
तुम अक्षजीत तुम कामजीत, तुम द्वेषजीत तुम लोभजीत। तुम रागजीत तुम कर्मजीत, तुम मोहजीत तुम मानजीत ॥२॥
तुम जगत ध्येय तुम सत्य ध्यान, तुम ही गुण निर्मलके निधान। तुम समदर्शी समता अधीश, भवि भक्ति करैं निज नाय शीस ॥३॥
तुम ही जगपावन हो उदार, तुम ही दाता निज ज्ञान धार। तुम ही भव भ्रमण विनष्टकार, तुम ही भवदधिसे पारकार ॥४॥
तुम नहिं प्रसन्न तुम नहिं निराश, तौभी भक्तनकी पूर्ण आश। यह महिमा कैसे कही जाय, तुम ध्यानगम्य योगी सहाय ॥५॥
वंदे तव पद हम वारवार, यह कार्य होय निर्विघ्न पार। कल्याणक पंच करन महान, उमगे हम तुमरी शरण आन ॥६॥
सब कार्य होंय सुख शांति कार, होवें मंगल दिन दिन उदार। राजा पिरजा सब सुखी होय, जिनधर्मतनो उद्योत होय ॥७॥
हम ज्ञानहीन विधि ते अजान, तव भक्ति करे हिय गुण पिछान। जो भूलें चूकें क्षम्य नाथ, विनती करते हम जोड़ हाथ ॥८॥

फिर अभिषेकपूर्वक नित्यनियम पूजा व सिद्ध पूजा करे।

अभिषेककी संक्षेप विधि—

(१) उच्च आसनपर चौकी या थाली विराजमान करे उस समय यह मंत्र पढ़ें—ॐ ह्रीं अर्हं क्ष्मं ठः ठः श्रीपीठस्थापनं करोमि स्वाहा।

(२) फिर उस थाली या चौकीको पवित्र जलसे धोवे तब यह मंत्र पढ़े—

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन श्री पीठप्रक्षालनं करोमि स्वाहा।

(३) फिर उसपर साथिया बनाकर श्रीजिन प्रतिमाको स्थापित करे तब यह मंत्र पढ़े—ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थं आदिनाथ (यहां अन्य तीर्थंकरका नाम ले जिस प्रतिमाको विराजमान करे) भगवन् इह पांडुकशिला पीठे तिष्ठ तिष्ठ स्वाहा।

(४) फिर शुद्ध जल प्राशुक लेकर प्रतिमाका अभिषेक करे तब यह पढ़े—

श्रीमद्भिः सुरसैर्निसर्गविमलैः पुण्याशयाभ्याहृतैः। शीतैश्चारुघटाश्रितैरवितथैः सन्तापविच्छेदकैः॥
तृष्णोद्रेकहरै रजः प्रशमकैः प्राणोपमैः प्राणिनां। तोयैर्जैनवचोऽमृतातिशयिभिः संस्नापयामो जिनम्॥
सौरभेन परां शुद्धिं धारिणा तीर्थवारिणा। स्वभावपदमापन्नं सिद्धं संस्नापये जिनम्॥

ॐ जय जय जय अर्हंतं भगवंतं शुद्धोदकेन सस्नापयामीति स्वाहा। (५) फिर प्रतिमाको पोंछकर वेदीपर विराजमान करे।

(६) गंधोदक दो बडे मुखके ग्लासोंमें भरे व दो ग्लास केवल जलसे भरे उसमें लवंग डाल दे। एक प्रवीण पुरुषको एक ग्लास गंधोदकका व एक ग्लास जलका देदे जो सर्व दर्शक पुरुषोंके पास लेजावें जो नम्बरवार गंधोदक मस्तकादिपर लगावें। इसी तरह एक प्रवीण स्त्री या कन्याको दो ग्लास देदिये जावें, यह स्त्रियोंको नम्बरवार देवे। गंधोदक गिरे नहीं इससे ग्लासमें देना ठीक है। उंगली डबोकर लेलिया जावे फिर उनको दूसरेमें डबोकर शुद्ध कर लिया जावे। (७) अभिषेकके पीछे इन्द्र मुख्यतासे नित्यप्रति होनेवाली संस्कृत, देव–शास्त्र–गुरुपूजा व सिद्धपूजा करे जो पाठके अन्तमें दी हुई है। (८) फिर शांतिकेअर्थ तीनों कुंडोंमें होम किया जावे।

होमकी विधि—तीन कुण्डोंमें चौकोर □ कुण्ड जो तीर्थंकरके निर्वाणकी अग्निका प्रद्योतक है मध्यमें बनावें, उसकी दाहनी तरफ अर्द्धचन्द्राकार ◡ कुण्ड बनावे जो सामान्य केवलीकी निर्वाणकी अग्निका द्योतक है और बाईं तरफ त्रिकोण △ कुण्ड बनावे जो गणधरके निर्वाणकी अग्निका बतानेवाला है। १ हाथ गहरे व इतनी ही इनकी भुजाएँ हों, अर्द्धचन्द्रका व्यास आध हाथका हो। ये कुण्ड तीन कटनीदार हों। तीनों कटनीपर सब ओर साथिया बनावे—

(१) नीरजसे नमः–यह पढ़कर जहां होम करना है उस भूमिको पवित्र करे। (२) दर्पमथनाय नमः–यह पढ़कर वहां डाभका आसन बिछावे। हरएक कुण्डमें दो इन्द्र नियत हों। एक होमकी सामग्री डाले दूसरा घी काष्टकी कड़छीसे डाले। फिर हरएक इन्द्र आसनपर बैठ जावे। (३) सीलगन्धाय नमः–यह पढ़कर प्राशुक जलसे चारों ओर छींटे देवे। (४) विमलाय नमः–यह पढकर भूमिमें पुष्प चढावे। (५) अक्षताय नमः–यह पढकर वहां अक्षत चढ़ावे। (६) श्रुतधूपाय नमः–यह पढ़कर धूपायनमें धूप खेवे। (७) ज्ञानोद्योताय नमः–पह पढकर दीप चढ़ावे या दीपसे आरती करे। (८) परमसिद्धाय नमः–यह पढकर नैवेद्य चढ़ावे।

(९) कुडोंमें साथिया बनावे और नीचे प्रकार लकड़ी इतनी चुने जिसकी लौ कुछ ऊंची कुण्डसे रहे, बहुत अधिक न बढ़े जिससे कोई प्रकारका भय हो। लाल चंदन, सफेद चंदन, कपूर, अगर, पीपल व आककी लकड़ी व अन्य शुद्ध लकड़ी जिसमें जंतु न हों।

(१०) होमकी सामग्री–चंदनका बुरादा, अगरुका बुरादा, बादाम व पिस्ताकी गिरी, छुहारा तोड़ा हुआ, खोपड़ा, किसमिस, शक्कर देशी, लौंग, कपूर, छोटी इलायचीके दाने आदि सुगंध द्रव्योंकी धूप बनावे। करीब ३ सेर हो व इतना ही शुद्ध घी हो।

(११) फिर नीचे लिखा मंत्र पढकर होमकुण्ड व पात्रोंकी शुद्धि जलसे करे अर्थात् जल छिड़के।

ॐ ह्रीं नमः सर्वज्ञाय सर्वलोकनान्याय धर्मतीर्थंकराय श्री शांतिनाथाय परमपवित्राय पवित्रजलेन होमकुण्डशुद्धिं पात्र-शुद्धिं च करोमि स्वाहा।

(१२) फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ कुण्डोंमे कपूर जलाकर अग्नि रक्खे–कुण्डोंमें थोड़ी सूखी घास भी रख दें।

जैनेन्द्रवाक्यैरिव सुप्रसन्नैः, संशुष्कदर्भाग्रगताग्निकीलैः। कुंडस्थिते सेंधनशुद्धवह्नौ संधुक्षणं सांप्रतमातनोमि ॥

उसहायि जिणे पणमामि सया, अमलो विरजो वरकप्पतरू।

सअ कामदुहा मम रक्ख सया, पुरविज्जुणुही पुरुविज्जुणुही ॥ ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं स्वाहा।

(१३) फिर तीनों पवित्र अग्निको अर्घ चढ़ावे। प्रथम तीर्थंकरकी अग्निको जो चौमुखे कुण्डमें है ऐसा बोलकर अर्घ चढ़ावे–

तीर्थेश्वरस्यान्त्यमहोत्सवे यं, भक्त्यानताग्नीन्द्रतिरीटजातम्। आनर्चुरिन्द्राः सकलास्तमेनं, यजे जलाद्यैरिह गार्हपत्यम् ॥

ॐ ह्रीं गार्हपत्य प्रणिताग्नये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। अर्घ। फिर त्रिकोण कुण्डकी अग्निको यह कह अर्घ देवें—

गणाधिपस्यान्त्यमहोत्सवे यं, भक्त्यानताग्नीन्द्रतिरीटजातम्। आनर्चुरिन्द्राः सकलास्तमेनं, यजामहेद्याहवनीयमग्निम ॥

ॐ ह्रीं आह्वनीय प्रणिताग्नये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । फिर अर्धचंद्राकार अग्निको अर्घ चढावे व यह कहे—

श्रीकेवलीशान्त्यमहोत्सवे यं, भक्त्या नताग्नीन्द्रतिरीटजातम् । आनर्चुरिन्द्राः सकलास्तमेनं, यजामहे दक्षिणदिव्यमग्निम् ॥

ॐ ह्रीं दक्षिणावर्ते प्रणीताग्नये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । अर्घं ।

(१४) फिर सिद्धार्चा सम्बन्धी पीठिका मंत्रोंसे होम करे ।

पीठिकाके मन्त्र—ॐ सत्यजाताय नमः ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥२॥ ॐ परमजाताय नमः ॥३॥ ॐ अनुपमजाताय नमः ॥४॥ ॐ स्वप्रधानाय नमः ॥५॥ ॐ अचलाय नमः ॥६॥ ॐ अक्षताय नमः॥७॥ ॐ अव्याबाधाय नमः ॥८॥ ॐ अनंतज्ञानाय नमः ॥९॥ ॐ अनतदर्शनाय नमः ॥१०॥ ॐ अनंतवीर्याय नमः ॥ ११ ॥ ॐ अनंतसुखाय नमः ॥ १२ ॥ ॐ नीरजसे नमः ॥ १३॥ ॐ निर्मलाय नमः ॥१४॥ ॐ अच्छेद्याय नमः ॥१५॥ ॐ अभेद्याय नमः ॥१६॥ ॐ अजराय नमः ॥१७॥ ॐ अमराय नमः ॥१८॥ ॐ अप्रमेयाय नमः ॥१९॥ ॐ अगर्भवासाय नमः ॥२०॥ ॐ अक्षोभाय नमः ॥२१॥ ॐ अविलीनाय नमः ॥ २२ ॥ ॐ परमघनाय नमः ॥२३॥ ॐ परमकाष्ठायोगरूपाय नमः ॥२४॥ ॐ लोकाग्रवासिने नमो नमः ॥ २५ ॥ ॐ परमसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२६॥ ॐ अर्हत्सिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२७॥ ॐ केवलिसिद्धेभ्यो नमोनमः ॥ २८ ॥ ॐ अंतःकृत्सिद्धेभ्यो नमोनमः ॥ २९ ॥ ॐ परंपरासिद्धेभ्यो नमोनमः ॥३०॥ ॐ अनादिपरपरासिद्धेभ्यो नमोनमः ॥ ३१ ॥ ॐ अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमोनमः ॥३२॥ ॐ सम्यग्दृष्टयासन्नभव्य-निर्वाणपूजार्हाग्नीन्द्राय स्वाहा ॥ ३३ ॥ इसतरह ३३ मंत्र पढ़ आहूति देकर फिर नीचे लिखा आशीर्वादसूचक मंत्र पढ़ आहूति देवे और पुष्प ले अपने व सर्व पास बैठनेवालोंके ऊपर डाले ।

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु । समाधिमरणं भवतु ॥

अथ जातिमंत्र-ॐ सत्यजन्मनः शरणं प्रपद्ये ॥१॥ ॐ अर्हज्जन्मनः शरणं प्रपद्ये ॥२॥ ॐ अर्हन्मातुः शरण प्रपद्ये ॥३॥ ॐ अर्हत्सुतस्य शरण प्रपद्ये ॥४॥ ॐ अनादिगमनस्य शरणं प्रपद्ये ॥५॥ ॐ अनुपजन्मन शरणं प्रपद्ये ॥६॥ ॐ रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्ये ॥ ७ ॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे ज्ञानमूर्ते ज्ञानमूर्ते सरस्वति सरस्वति स्वाहा ॥ ८ ॥ इस तरह जातिमंत्र पढ़ आठ आहूति देकर आशीर्वादसूचक नीचे लिखा मंत्र पढ आहूति दे पुष्प क्षेपे ।

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु । समाधिमरणं भवतु ।

अथ निस्तारक मंत्र—ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ षट्कर्मणे स्वाहा ॥३॥ ॐ ग्रामपतये स्वाहा ॥४॥ ॐ अनादिश्रोत्रियाय स्वाहा ॥५॥ ॐ स्नातकाय स्वाहा ॥६॥ ॐ श्रावकाय स्वाहा ॥७॥ ॐ देवब्राह्मणाय स्वाहा ॥८॥ ॐ सुब्राह्मणाय स्वाहा ॥९॥ ॐ अनुपमाय स्वाहा ॥१०॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे निधिपते निधिपते वैश्रवण वैश्रवण स्वाहा ॥११॥

इसतरह ११ आहूति दे फिर वही "सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु। अपमृत्युविनाशनं भवतु"। आदि मन्त्र पढ़ आहूति दे पुष्प क्षेपे।

अथ ऋषिमंत्र—ॐ सत्यजाताय नमः ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥२॥ ॐ निर्ग्रन्थाय नमः ॥३॥ ॐ वीतरागाय नमः ॥४॥ ॐ महाव्रताय नमः ॥५॥ ॐ त्रिगुप्ताय नमः ॥६॥ ॐ महायोगाय नमः ॥७॥ ॐ विविधयोगाय नमः ॥८॥ ॐ विविधर्द्धये नमः ॥९॥ ॐ अंगधराय नमः ॥१०॥ पूर्वधराय नमः ॥११॥ ॐ गणधराय नमः ॥१२॥ ॐ परमर्षिभ्यो नमोनमः ॥१३॥ ॐ अनुपमजाताय नमोनमः ॥१४॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे भूपते भूपते नगरपते नगरपते कालश्रमण कालश्रमण स्वाहा ॥१५॥

ऐसी १५ आहुति देकर वही निम्नलिखित आशीर्वाद सूचक मंत्र पढ आहुति दे पुष्प क्षेपे।

"सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु। अपमृत्युविनाशनं भवतु। समाधिमरणं भवतु॥"

अथ सुरेन्द्रमंत्र—ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ दिव्यजाताय स्वाहा ॥३॥ ॐ दिव्यार्चिर्जाताय स्वाहा ॥४॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥५॥ ॐ सौधर्माय स्वाहा ॥ ६ ॥ ॐ कल्पाधिपतये स्वाहा ॥ ७ ॥ ॐ अनुचराय स्वाहा ॥८॥ ॐ परंपरेन्द्राय स्वाहा ॥९॥ ॐ अहमिन्द्राय स्वाहा ॥१०॥ ॐ परमार्हताय स्वाहा॥११॥ ॐ अनुपमाय स्वाहा॥१२॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे कल्पपते कल्पपते दिव्यमूर्ते दिव्यमूर्ते वज्रनामन् वज्रनामन् स्वाहा ॥ १३ ॥ इस तरह १३ आहूति दे वही पहिले लिखित आशीर्वादसूचक मंत्र पढ आहूति दे पुष्प क्षेपे।

अथ परमराजादिमंत्र—ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ अनुपमेन्द्राय स्वाहा ॥३॥ ॐ विजयार्च्यजाताय स्वाहा ॥४॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥५॥ ॐ परमजाताय स्वाहा ॥६॥ ॐ परमार्हताय स्वाहा॥७॥ ॐ अनुपमाय स्वाहा ॥८॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे उग्रतेजः उग्रतेजः दिशांजन दिशांजन नेमिविजय नेमिविजय स्वाहा ॥९॥

इस तरह ९ आहुति दे वही आशीर्वादसूचक मंत्र पढ़ आहुति दे पुष्प क्षेपे।

(१९) फिर नीचे लिखे मंत्रसे १०८ आहुति देवे—ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणशेषदोषाय दिव्यतेजोमूर्तये नमः श्रीशांतिनाथाय

शांतिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशांति कुरु कुरु स्वाहा। (१६) फिर नीचेकी स्तुति सर्व इन्द्र मिलकर व खड़े होकर पढ़ें—

तुभ्यं नमो दशगुणोर्जितदिव्यगात्र। कोटिप्रभाकरनिशाकरजैत्रतेजः ॥
तुभ्यं नमोऽतिचिरदुर्जयघातिजात। घातोपजात दशसारगुणाभिराम ॥ १ ॥
तुभ्य नमः सुरनिकायकृतैर्विहारे। दिव्यैश्चतुर्दशविधातिशयैरुपेत ॥
तुभ्यं नमस्त्रिभुवनाधिपतित्वचिन्ह। श्री प्रातिहार्याष्टकलक्षितार्हन् ॥ २ ॥
तुभ्यं नमः परमकेवलबोधवार्द्धे। तुभ्यं नमः समसमस्तपदावलोक ॥
तुभ्यं नमो निरुपमानंतवीर्य। तुभ्यं नमो निजनिरंतरनित्यसौख्य ॥ ३ ॥
तुभ्यं नमः सकलमंगलवस्तुमुख्य। तुभ्यं नमः शिवसुखप्रदपापहारिन् ॥
तुभ्यं नमस्त्रिजगदुत्तमलोकपूज्य। तुभ्यं नमः शरणभूत्रय रक्ष रक्ष ॥ ४ ॥
तुभ्यं नमोस्तु नवकेवलपूर्वलब्धे। तुभ्यं नमोस्तु परमैश्वर्योपलब्धे ॥
तुभ्यं नमोस्तु मुनि कुंजरयूथनाथ। तुभ्यं नमोस्तु भुवनत्रितयैकनाथ ॥ ५ ॥

श्री जिनेन्द्रके सामने बडे भावसे स्तुति पढें। आचार्य इसका भाव सर्व मडलीको समझावे। फिर सर्व मंडली जो अबतक बैठी थी वह भी तथा सर्व प्रतिष्ठाके पात्र मस्तक भूमिपर लगाके दंडवत करें।

(१७) फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ इन्द्रादि होमभस्मको ललाटमें, दो भुजाओंमें, कंठमें व हृदयमें ऐसे ५ जगह लगावे।

रत्नत्रयार्चनमयोत्तमहोमभूतिर्युष्माकमावहतु वासवदिव्यभूतिम् ॥
षट्खंडभूमिविजयप्रभवां विभूतिं। त्रैलोक्यराज्यविषयां परमां विभूतिम् ॥

तथा दो बडे प्यालोमें भस्म रखकर एक प्याला पुरुषको व एक प्याला स्त्रीको सर्व पुरुष व स्त्रियोंको भस्म पांचों अंगोंमें लगानेको देवें।

(१८) मंडलकी पूजा—अब इन्द्र तथा मुख्य यजमान (पिता) ये दो मिलकर सामग्री चढ़ावें, पूजन पढ़ानेवाले आचार्यको सहायता देवें। पूजा शुद्ध स्वरसे पढ़ी जावे, अन्य सब सुनें। पहले सब पात्र खडे होकर नीचे लिखे प्रमाण पढ़ें—

ॐ जय जय जय नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु नंद नंद नंद पुनीहि पुनीहि पुनीहि ॐ णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो-आइरीयाणं, णमो उवज्झायाणं, णमोलोए सव्वसाहूण ।

स्थापना ।

प्रत्यर्थिव्रजनिर्जयान्निजगुणप्राप्तावनन्ताक्रमदृष्टिज्ञानचरित्रवीर्यसुखचित्संज्ञास्त्र भावाः परं ।
आगत्यात्रनिवेशितांकितपदैः संवौषडा द्विष्ठतो, मुद्रारोपणसत्कृतैश्च वषडा गृह्णीध्वमर्चाविधिम् ॥४४२॥

भाषा—गीताछंद—कर्मतमको हननकर निजगुण प्रकाशन भानु हैं, अंत अर क्रम रहित दर्शन ज्ञान वीर्य निधान हैं ।
सुख स्वभावी द्रव्य चित सत् शुद्ध परिणतिमें रमें, आइये सव विघ्न चूरण पूजते सव अघ वमें ॥

ॐ ह्रीं अत्र जिनप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्रावतरत अवतरत संवौषट्, ॐ ह्रीं अत्र जिनप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः, ॐ ह्रीं अत्र जिनप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । (यहां थापना मण्डलके बीचमें न रखके पूजाकी टेबुल ही पर रखके पुष्प क्षेपण करे)—

अष्टक ।

प्रांशुस्वर्णमणिप्रभाततिभृताभृंगारनालोच्छलद् गंगासिंधुसरिन्मुखोपचितसत्पाथो भरेण त्रिधा ।
जन्मारातिविभंजनौपधिमितेनोद्धूतगंधालिना चाये यागनिधीश्वरानघहृते निःश्रेयसः प्राप्तये ॥४४३॥

भाषा—छन्द चाल—गंगा सिंधू वर पानी, सुवरण झारी वरलानी । गुरु पंच परमसुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥४४३॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

घुसृणमलयजातैश्चंदनैः शीतगंधैर्भवजलनिधिमध्ये दुःखदो वाडवाग्निः ।
तदुपशमनिमित्तं बद्धकक्षैर्निमज्जद्–भ्रमरयुवभिरीडत सांद्रसार्द्रप्रवाहैः ॥ ४४४ ॥

भाषा—शुचि गन्ध लाय मनहारी, भवताप शमन कर्तारी । गुरु पंच परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥४४४॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शशांकस्पर्द्धद्भिः कमलजननैरक्षतपदाधिरूढैः श्रामण्यं शुचिसरलताद्यैर्गुणवरैः ।
हसद्भिः साम्राज्याधिपतिचमनार्हैः सुरभिभि-र्जिनार्चांह्रिप्रांची विपुलतरपुंजैः परियजे ॥४४५॥

भाषा—शशिसम शुचि अक्षत लाए, अक्षयगुणहित हुलसाए । गुरु पंच परमसुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥ ४४५ ॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अक्षयगुणप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

दुरंतमोहानलदीप्यदंशु कामेन नष्टीकृतमाशुविश्वं । तद्व्राणराजीशमनाय पुष्पैर्यजामि कल्पद्रुमसंगतैर्वा ॥४४६॥

भाषा—शुभ कल्पद्रुमन सुमना ले, जग वशकर काम नशाले । गुरु पंच परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥ ४४६ ॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पीयूषपिंडनिवहैर्घृतशर्करान्नयोगोद्भवैर्नयनचित्तविलासदक्षैः ।
चामीकरादिशुचिभाजनसंस्थितैर्वा संपूजयाम्यशनबाधनबाधनाय ॥ ४४७ ॥

भाषा—पकवान मनोहर लाए, जासे क्षुद्र रोग शमाए । गुरु पंच परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥ ४४७ ॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो क्षुधारोगनिवारणाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अमितमोहतमोविनिवृत्तये वर्तिरत्नमणिप्रभवात्मभिः । अयमहं खलु दीपकनामकैर्जिनपदाग्रभुवं परिदीपये ॥४४८॥

भाषा—मणि रत्नमई शुभ दीपा, तम मोहहरण उदीपा । गुरु पंच परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥ ४४८ ॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूपोद्गमघ्राणैर्यजनविधिषु प्रीणिताशेषदिक्कैरुद्यद्गन्हावगुरुमलयापीडकान् संदहद्भिः ॥
अर्चे कर्मक्षपणकरणे कारणैराप्तवाक्यैर्यज्ञाधीशानिव बहुविधैर्धूपदानप्रशस्तैः ॥ ४४९ ॥

भाषा—शुभ गंधित धूप चढ़ाऊं, कर्मोंके वंश जलाऊं । गुरु पंच परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥ ४४९ ॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

निःश्रेयसपदलब्ध्यै कृतावतारैः प्रमाणपटुभिरिव । स्याद्वादभंगनिकरैर्यजामि सर्वज्ञमनिशममरफलैः ॥४५०॥

भाषा—मुन्दर दिवि भव फल लाए, शिवहेतु सुचरण चढ़ाए । गुरु पंच परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥४५०॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

पात्रे सौवर्णे कृतमानंदजयषक् पूजार्हं तं विस्फुरितानां हृदयेऽत्र । तोयाद्यष्टद्रव्यसमेतैर्भृतमर्घं शास्तृणामग्रे विनयेन प्रणिदध्मः॥४५१॥

भाषा–सुवरणके पात्र धराए, शुचि आठों द्रव्य मिलाए । गुरु पंच परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥४५१॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(अब २९० कोठोंमें स्थापित पूज्योंको अलग अलग अर्घ चढ़ाना थालीमें ही)—

अनंतकालसंपद्भवभ्रमणभीतितो निर्वार्य संदधन् स्वयं शिवोत्तमार्यसद्मनि ।

जिनेशविश्वदर्शिविश्वनाथमुख्यनामाभिः स्तुतं जिनं महामि-नीरचंदनैः फलैरहं ॥ ४५२ ॥

भाषा अडिल्ल–काल अनन्ता भ्रमण करत जग जीव हैं । तिनको भवते काढ़ करत शुचि जीव हैं ॥

ऐसे अर्हत् तीर्थनाथ पद ध्यायके । पूजूं अर्घ बनाय सुमन हरषायके ॥ ४५२ ॥

ॐ ह्री अनंत भवार्णवभयनिवारकानन्तगुणस्तुताय अर्हते अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्मकाष्ठहुतभुक् स्वशक्तितः संप्रकाश्यमहनीयभानुभिः । लोकतत्त्वमचले निजात्मनि संस्थितं शिवमहीपतिं यजे ॥४५३॥

भाषा–हरिगीताछंद–कर्म–काष्ठ महान जाले ध्यान–अग्नि जलायके । गुण अष्ट लह व्यवहारनय निश्चय अनंत लहायके ॥

निज आतममें थिर रूप रहके सुधा स्वाद लखायके । सो सिद्ध हैं कृतकृत्य चिन्मय भजूं मन उमगायके ॥ ४५३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मविनाशक निजात्मतत्वविभासक सिद्धपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (२)

सार्थवाहमनवद्यविद्यया शिक्षणान्मुनिमहात्मनां वरं । मोक्षमार्गमलघुप्रकाशकं संयजे गुरुपरंपरेश्वरम् ॥ ४५४ ॥

भाषा–त्रिभंगीछंद–मुनिगणको पालत आलस टालत आप संभालत परम यती ।

जिनवाणि सुहानी शिवसुखदानी भविजन मानी धर सुमती ॥

दिक्षाके दाता अघसे त्राता समसुख भाता ज्ञानपती ।

शुभ पंचाचारा पालत प्यारा हैं आचारज कर्महती ॥

ॐ ह्रीं अनवद्यविद्याविद्योतनाय आचार्यपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

द्वादशांगपरिपूर्णसच्छ्रुतं यः परानुपदिशेत पाठतः । बोधयत्यभिहितार्थसिद्धये तानुपास्य यजयामि पाठकान् ॥४५५॥

भाषा त्रोटक छन्द–जय पाठक ज्ञान कृपान नमो, भवि जीवन हत अज्ञान नमो ॥

निज आतम महानिधि धारक हैं । संशय बन दाह निवारक हैं ॥ ४५५ ॥

ॐ ह्रीं द्वादशांगपरिपूरणश्रुतपाठनोद्यत बुद्धिविभवोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

उग्रमर्घ्यतपसाभिसंस्कृतिं ध्यानभानविनिवेशितात्मकं । साधकं शिवरमासुखामृते साधुमीड्यपदलब्धयेऽर्चये ॥४५६॥

भाषा–द्रुतविलंबितछद–सुभग तप द्वादश कर्तार हैं । ध्यान सार महान प्रचार हैं ॥

मुकति वास अचल यति साधते । सुख सु आतम जन्य सम्हारते ॥ ४५६ ॥

ॐ ह्रीं घोरतपोऽभिसंस्कृतध्यानस्वाध्यायनिरत साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (५)

अर्हन्नेव त्रिभुवनजनानंदनान्मंडलाग्र्यो, विघ्नध्वंसं निजमतिकृतादस्त्रसंघोपनोदात् ।

संकुर्वंस्तत्प्रकृतिरपि स्पष्टमानंददायिन्येवं स्मृत्वा जलचरुफलैरर्चयामि त्रिवारं ॥ ४५७ ॥

भाषा–मालिनीछद–अरि हनन सु अरिहन् पूज्य अर्हन् बताए । मं पाप गलनहेतु मंगलं ध्यान लाए ॥

मंगं सुखकारण मंगलीकं जताए । ध्यानी छवि तेरी देखते दुख नशाए ॥ ४५७ ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिमंगलाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (६)

स्मारं स्मारं गुणगणमणिस्फारसामर्थ्यमुच्चैर्यत्प्राप्त्यर्थं प्रयतति जनो मोक्षतत्त्वेऽनवद्ये ।

प्रत्यूहान्तं भवभवगतानां प्रघातप्रक्लृप्त्यै सिद्धानेव श्रुतिमतिबलादर्चये संविचार्य ॥ ४५८ ॥

भाषा–चौपाई–जय जय सिद्ध परमसुखकारी । तुम गुण सुमरत कर्म निवारी ।

विघ्नसमूह सहज हरतारे । मंगलमय मंगल करतारे ॥ ४५८ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धमगलेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (७)

रागद्वेषोरगपरिशमे मंत्ररूपस्वभावा, मित्रे शत्रौ समकृतहृदानंदमांगल्यरूपाः ।

येषां नामस्मरणमपि सन्मंगलं मुक्तिदायीत्यर्चे यज्ञे वसुविधविधिप्रीणनैः प्राणिपूज्यं ॥४५९॥

भाषा-शार्दूलविक्रीडित-रागद्वेष महान सर्प शमने शम मंत्रधारी यती। शत्रू मित्र समान भाव करके भवतापहारी यती ॥
मंगल सार महान कार अघहर सत्वानुकम्पी यती। संयम पूर्ण प्रकार साध तपको संसारहारी यती ॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८)

मूर्च्छा मूर्च्छा गुरुलघुभिदा द्वैधवर्त्मप्रदिष्टो, जैनो धर्मः सुरशिवगृहद्वारदर्शी नितांतं।
मेघ्यो विघ्नप्रहणनविधावुत्तमार्थः प्रशस्तः, संपूजेऽहं यजनमननोद्दामसिद्ध्यर्थमद्य ॥ ४६० ॥

भाषा-मंकरछंद-जिनधर्म है सुखकार जगमें धरत भव भयवंत। स्वर्ग मोक्ष सुद्वार अनुपम धरे सो जयवंत ॥
सम्यक्त ज्ञान चरित्र लक्षण भजत जगमें संत। सर्वज्ञ रागविहीन वक्ता है प्रमाण महंत ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्त धर्ममंगलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९)

येषां पादस्मृतिमुखमुधायोगतस्तीर्थनाम प्रापुः पुण्यं यदवनतिना जन्मसार्थं लभंते।
लोका धात्र्यां वनगिरिभुवश्चोत्तमत्वं जिनेंद्रा-नर्चे यज्ञप्रसवविधिषु व्यक्तये मुक्तिलक्ष्म्याः ॥ ४६१ ॥

भाषा-उत्तमाछंद-चर्ण संस्पर्शते वन गिरि शुद्ध हो नाम सत्तीर्थको प्राप्त करते भए।
दर्श जिनका करें पूजने दुख हरे जन्म निज सार्थ भविजीव मानत भए ॥
देव तुम लेखके देव सब छोड़के देव तुम उत्तमा संत ठानत भए।
पूजने आपको टालने तापको मोक्षलक्ष्मी निकट आप जानत भए ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१०)

दृष्टिज्ञानघातिभजनया कर्मभीमामयाऽन्यान्, श्वभ्रे संपादयति विविधा वेदनाः संकरोति।
तेषां भूमं निविडपरमज्ञानखड्गेन हत्वा, निःकर्मत्वं समधिगतवानर्चयेने सिद्धनाथः ॥ ४६२ ॥

भाषा-अ[illegible]-दरश ज्ञान वैरी करम नीव आए। नरक पशुगती मांहि प्राणी पठाए।
तिन्हें ज्ञान असिने हनन नाथ कीना। परम सिद्ध उत्तम भजूं रागहीना ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११)

सूर्याचंद्रौ मरुदधिपतिर्भूमिनाथोऽसुरेंद्रो, यस्यांह्यब्जे प्रणतशिरसा लोलुठीति त्रिशुद्ध्या ।
सोऽयं लोके प्रवरगणनापूजितः किं न वा स्याद्, यस्मादर्चे मुनिपरिवृढं स्वानुभावप्रसत्त्या ॥ ४६३ ॥

भाषा-छंदचौपैया-सूरज चंद्र देवपति नरपति पद सरोज नित वंदे । लोट लोट मस्तक धर पगमें पातक सर्व निकन्दे ॥
लोकमांहि उत्तम यतिपनमें जैनसाधु सुख कंदे । पूजत सार आतमगुण पावत होवत आप स्वच्छंदे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)

यत्र प्राणिप्रवरकरुणा यत्र मिथ्यात्वनाशो, यत्रोपांते शिवपदसमान्वेषणां कामनष्टिः ।
यत्र प्रोक्ता दुरितविरतिः सोयमग्र्यः कथं न, यस्माद् धर्मो निखिलहितकृत् पूज्यतेऽसौमयाऽपि ॥ ४६४ ॥

भाषा-छंदस्रग्विणी-जो दया धर्म विस्तारता विश्वमें । नाश मिथ्यात्व अज्ञान कर विश्वमें ॥
काम भव दूर कर, मोक्ष कर विश्वमें । सत्य जिनधर्म यह धार ले विश्वमें ॥

ॐ ह्रीं केवलीप्रज्ञप्त धर्मलोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जीवाजीवद्विविधशरणान्वेषणे स्थैर्यभंगं, ज्ञात्वा त्यक्त्वाऽन्यतरशरणं नश्वरं मद्विधानां ।
इन्द्रादीनामितिपरिचयादात्मरत्नोपलब्धि-मिष्टैः प्राप्तुं निचितमनसा पूज्यतेऽर्हन् शरण्यः ॥ ४६५ ॥

भाषा-छंदमरहटा-भव भ्रमण कराया शरण नपाया जीव अजीवहिं खोज । इन्द्रादिक देवा जाको पूजें जग गुण गावे रोज ॥
ऐसे अर्हतकी शरण आए, रत्नत्रय प्रगटाय । जासे ही जन्ममरण भय नाशे, नित्त्यानन्दी थाय ॥४६५॥

ॐ ह्रीं अर्हत् शरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

यावद्देहे स्थितिरुपचयः कर्मणामास्रवेण, तावत्सौख्यं कुत उपलभेतस्ततस्त्रोटनेच्छुः ।
एतत्कृत्यं न भवति विना सिद्धभक्तिं यतो मे, पूर्णार्घैर्घप्रयजनविधावाश्रितोऽहं शरण्यम् ॥ ४६६ ॥

भाषा-छंदनाराच-सुखी न जीव हो कभी जहां कि देह साथ है । सदा हि कर्म आस्रवैं न शान्तता लहात है ॥
जो सिद्धको लखाय भक्ति एक मन करात है । वही सुसिद्ध आप हो स्वभाव आतम पात है ॥

ॐ ह्रीं सिद्धशरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१५) [illegible]

रागद्वेषव्यपगमनतो निःस्पृहा धीरवीराः, संसाराब्धौ विषमगहने मज्जतां निर्निमित्तं ।
दत्त्वा धर्मोद्धरणतरणिं पारयंतो मुनीशास्तानर्घेण स्थिरगुणधिया प्रार्चयामि त्रिगुप्त्या ॥ ४६७ ॥

भाषा—छंद त्रोटक—नहिं राग न द्वेष न काम धरें, भवदधि नौका भवि पार करें ।
स्वारथ विन सब हितकारक हैं, ते साधु जजूं सुखकारक हैं ॥

ॐ ह्रीं साधुशरणेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)

मित्रं सम्यक् परभवयथाचक्रमे सार्थदायि, नान्यो धर्माद्दुरितदहन प्लोषणेऽम्बुप्रवाहः ।
जानंतं मां समदृशिधियां संनिधानाच्छरण्य, त्रायस्व त्वं त्वयि धृतगतिं पूजनार्घेण युक्तं ॥ ४६८ ॥

भाषा—छद चामरो—धर्म ही सु मित्रसार साथ नाहिं त्यागता, पाप रूप अग्निको सुमेघ सम बुझावता ।
धर्म सत्य शर्ण यही जीवको सम्हारता, भक्ति धर्म जो करें अनंत ज्ञान पावता ॥

ॐ ह्रीं धर्मशरणेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)

सर्वा ते तान् तत्त्वचंद्रप्रमाणान् जापध्यानस्तोत्रमंत्रै रुदर्च्य । द्रव्यक्षेत्रस्फूर्तिसज्जावकाशं नत्वार्घेण प्रांशुना संस्मरामि ॥४६९॥

भाषा-दोहा-पंच परम गुरु सार हैं, मंगल उत्तम जान । शरणा राखनको बली, पूजूं कर उर ध्यान ॥४६९॥

ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिप्रभृतिधर्मशरणांतप्रथमवलयस्थितसप्तदशजिनाधीशयज्ञदेवताभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

इति पूर्णार्घं—(यहां पूर्णार्घं देकर एक छोटासा नारियल सुन्दरताके साथ पहले वलयमें कहींपर रख दे जिससे विदित हो कि पहले वलयकी पूजा हो चुकी, यदि वहांतक हाथ न पहुंचे तो मडलके किनारेकी तरफ एक नारियल रखदे) ।

अब दूसरे वलयमें २४ भूतकालके तीर्थंकरोंकी पूजा करनी ।

निर्वाणदेवं श्रितभव्यलोकं निर्वाणदातारमनंतसौख्यं । संपूजयेऽहं मखसद्धिहेतो रथीश्वरं प्राथमिकं जिनेंद्रं ॥४७०॥

भाषा पद्धरी छन्द—भवि लोक शरण निर्वाणदेव, शिवसुखदाता सब देव देव ।
पूजें शिवकारण मन लगाय, जासें भवसागर पार जाय ॥ ४७० ॥

ॐ ह्रीं निर्वाण जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)

श्रीसागरं वीतममत्वरागद्वेषं कृताशेषजनप्रसादं। समर्चये नीरचरुप्रदीपैरुद्दीपिताशेषपदार्थमालं ॥ ४७१ ॥

भाषा—तज रागद्वेष ममता विहाय, पूजक जन सुख अनुपम लहाय।

गुणसागर सागर जिन लखाय, पूजूं मन वच अर काय नाय ॥ ४७१ ॥

ॐ ह्री सागरजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१९)

श्रीमन्महासाधुजिनं प्रमाणनयप्रमाणीकृतजीवतत्त्वं। स्याद्वादभंगप्रणिधानहेतुं समर्चये यज्ञविधानसिद्ध्यै ॥ ४७२ ॥

भाषा—नय अर प्रमाणसे तत्त्व पाय, निज जीव तत्त्व निश्चै कराय। साधो तप केवलज्ञान दाय, ते साधु महा वंदौं सुभाय ॥

ॐ ह्रीं महासाधु जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०)

यस्यातिसाज्ज्ञानविशालदीपे प्रभाममानं जगदल्पसारं। विलोक्यते सर्षपवत्कराग्रे समर्चयेऽहं विमलप्रभाख्यं ॥४७३॥

भाषा—दीपक विशाल निज ज्ञान पाय, त्रैलोक लखे विन श्रम उपाय। विमलप्रभ निर्मलता कराय, जो पूजे जिनको अर्घ लाय ॥

ॐ ह्रीं विमलप्रभाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१)

समाश्रितानां मनसो विशुद्ध्यै कृतावतारं मुनिगीतकीर्तिम्। प्रणम्य यज्ञेऽहमुदंचयामि शुद्धाभदेवं चरुभिः प्रदीपैः ॥४७४॥

भाषा—भवि शरण गहैं मन शुद्धिकार, गावें थुति मुनिगण यश प्रचार।

शुद्धाभदेव पूजूं विचार, पाऊं आतम गुण मोक्ष द्वार ॥ २७४ ॥

ॐ ह्री शुद्धाभदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२)

लक्ष्मीद्वयं बाह्यगतांतरंगभेदात्पदाग्रे विलुलोठ यस्य। यस्मात्सदा श्रीधरकीर्तिमापत्तमर्चयेद्याश्रितभव्यसार्थम् ॥ ४७५ ॥

भाषा—अन्तर बाहर लक्ष्मी अधीश, इन्द्रादिक सेवत नाय शीस। श्रीधर चरण श्री शिवकराय, आश्रयकर्ता भवदधि तराय ॥

ॐ ह्रीं श्रीधराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२३)

श्रियं ददातीह सुभक्तिभाजां वृंदाय यस्मादिह नाम जातं। श्रीदत्तदेवं भवभीतिमुक्त्यै यजामि नित्याद्भुतधामलक्ष्म्यै ॥४७६॥

भाषा—जो भक्ति करें मन वचन काय, दाता शिवलक्ष्मीके जिनाय। श्रीदत्त चरण पूजूं महान, भवभय छूटे लहू अमल ज्ञान ॥

ॐ ह्रीं श्रीदत्त जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४)

सिद्धाभभांगस्य विसर्पिणी तन्मध्येजनुः सप्तकदर्शनेन। सम्यग्विशुद्धिर्मनसो यतस्त्वां सिद्धाभ! यज्ञेऽर्चयितुं समीहे ॥४७७॥
भाषा—भामण्डल छवि वरणी न जाय, जहं जीव लखैं भव सप्त आय।
मन शुद्ध करें सम्यक्त पाय, सिद्धाभ भजे भवभय नशाय ॥ ४७७ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धाभ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२५)

प्रभामतिः शक्तिरनेकधा हि सद्ध्यानलक्ष्म्या यत उत्तमार्थैः। संगीयते त्वं ह्यमलां विभर्षि यतोऽर्चये त्वाममलप्रभाख्यं ॥४७८॥
भाषा- अमलप्रभ निर्मल ज्ञान धरे, सेवामें इन्द्र अनेक खड़े। नित संत सुमंगल गान करें, निज आतमसार विलास करें ॥

ॐ ह्रीं अमलप्रभ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२६)

अनेकसंसारगतं भ्रमेभ्य उद्धारकर्तैति बुधैरवादि। यतो मम भ्रांतिमपाकुरु त्वमुद्धारदेव प्रयजे भवंतं ॥ ४७९ ॥
भाषा—उद्धार जिनं उद्धार करें, भव कारण भांति विनाश करें। हम डूब रहे भवसागरमें, उद्धार करो निज आतमरमें ॥४७९॥

ॐ ह्रीं उद्धार जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२७)

दुष्टाष्टकर्मेंधनदाहकर्ता यतोऽग्निनामाभ्युदितं यथार्थम्। ततो ममासाततृणव्रजेऽपि तिष्ठार्चये त्वां किमु पौनरुक्ते ॥४८०॥
भाषा—अग्निदेव जिनं हो अग्निमई, अठ कर्मन ईंधन दाह दई।
हम असात तृणं कर दग्ध प्रभो, निज सम करले जिनराज प्रभो ॥ ४८० ॥

ॐ ह्रीं अग्निदेव जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२८)

प्राणेंद्रियद्वैधसुसंयमस्य दातारमुच्चैः कथयामि सार्वं। मदत्तमर्घं जिन संगृहाण सुसंयमं स्वीयगुणं प्रदेहि ॥ ४८१ ॥
भाषा—संयम जिन द्वैविध संयमको, प्राणी रक्षण इंद्रिय दमको। दीजे निश्चय निज संयमको, हरिये हम सर्व असंयमको ॥

ॐ ह्रीं संयम जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२९)

स्वयं शिवः शाश्वतसौख्यदायि स्वायंप्रभुः स्वात्मगुणप्रपन्नः। तस्मात्तदर्थप्रतिपन्नकामस्त्वामर्चये प्रांजलिना नतोऽस्मि ॥४८२॥
भाषा—शिव जिन शिव शाश्वत सौख्यकरी, निज आतम विभूति स्वहस्त करी।
हम शिव वाञ्छक कर जोड़ नमें, शिव लक्ष्मी [illegible] ॥ ४८२ ॥

ॐ ह्रीं शिव जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३०)

सत्कुंदमल्लीजलजादिपुष्पैरभ्यर्च्यमानःश्रियमादधाति। नाम्नाऽप्यसौ तादृश एव यस्मात् पुष्पांजलिं त्वां प्रतिपूजयामि ॥४८३॥

भाषा-पुष्पांजलि पुष्प नितें जजिये, सब काम व्यथा क्षणमें हरिये।
निज शील स्वभाव हिरम रहिये, निज आत्म जनित सुखको लहिये ॥ ४८३ ॥

ॐ ह्रीं पुष्पांजलि जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३१)

उत्साहयन् ज्ञानधनेश्वराणां शाम्याम्बुधिं संयमचंद्रकीर्तेः। उत्साहनाथो यजनोत्सवेऽस्मिन् संपूजितो मे स्वगुणं ददातु ॥४८४॥

भाषा-उत्साह जिनं उत्साह करें, निश संयम चन्द्र प्रकाश करें। समभाव समुद्र वढ़ावत हैं, हम पूजत तव गुण पावत है ॥४८४॥

ॐ ह्रीं उत्साह जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३२)

नमोऽस्तु नित्यं परमेश्वराय कृपा यदीयाक्षणसंनिधानात्। करोति चिंतामणिरीप्सितार्थमिवांचये तं परमेश्वराख्यं ॥४८५॥

भाषा-चिंतामणि सम चिंता हरिये, निज सम करिये भव तम हरिये।
परमेश्वर जिन ऐश्वर्य धरें, जो पूजे ताके विघ्न हरें ॥ ४८५ ॥

ॐ ह्रीं परमेश्वर जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३३)

यज्ज्ञानरत्नाकरमध्यवर्ती जगत्त्रयं विंदुसमं विभाति। तं ज्ञानसाम्राज्यपतिं जिनेंद्रं ज्ञानेश्वरं संप्रति पूजयामि ॥ ४८६ ॥

भाषा-ज्ञानेश्वर ज्ञान समुद्र पाय, त्रैलोक विंदु सम जहं दिखाय। निज आतमज्ञान प्रकाशकार, वंदूं पूजूं मैं बारबार ॥४८६॥

ॐ ह्रीं ज्ञानेश्वर जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३४)

तपोबृहद्भानुसमूहतापकृतात्मनैर्मल्यमनिर्मलानाम्। अस्मादृशां तद्गुणमाददानं संपूजयामो विमलेश्वरं तं ॥ ४८७ ॥

भाषा-कर्मोने आतम मलीन किया, तप अग्नि जला निज शुद्ध किया।
विमलेश्वर जिन मो विमल करो, मल ताप सकल ही शांत करो ॥ ४८७ ॥

ॐ ह्रीं विमलेश्वर जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३५)

यशः प्रसारे सति यस्य विश्वं सुधामयं चंद्रकलावदातं। अनेकरूपं विकृतैकरूपं जातं समर्चे हि यशोधरेशं ॥४८८॥

भाषा—यश जिनका विश्व प्रकाश किया, शशि कर इव निर्मल व्याप्त किया।
भट मोह अरीने शांत किया, यशधारी सार्थक नाम किया ॥ ४८८ ॥

ॐ ह्रीं यशोधर जिनेशाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३६)

क्रोधस्मराशातविघातनाय संजाततीव्रक्रुधिवात्मनाम। प्राप्तं तु कृष्णेति नु शुद्धियोगात् तं कृष्णमर्चे शुचितामपन्नं ॥४८९॥
भाषा—समता मय क्रोध विनाश किया, जग काम रिपूको शांत किया।
शुचिता धर शुचिकर नाथ जजूं, श्री कृष्णमती जिन नित्य भजूं ॥ ४८९ ॥

ॐ ह्रीं कृष्णमतये जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३७)

ज्ञानं मतिर्भाव उपाश्रयादिरेकार्थएवप्रणिधानयोगात्। ज्ञानेमतिर्यस्य समासजानेर्यथार्थनामानमहं यजामि ॥४९०॥
भाषा—शुचि ज्ञानमती जिन ज्ञान धरे, अज्ञान तिमिर सब नाश करे। जो पूजे ज्ञान वढ़ावत है, आतम अनुभव सुख पावत है ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानमतये जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३८)

समस्यमानान्यपदार्थजातं धुरंधरं धर्मरथांगनेमिः। जिनेश्वरं शुद्धमतिं यजेत प्राप्नोति शुद्धां मतिमेव ना सः ॥४९१॥
भाषा—शुद्धमती जिन धर्म-धुरंधर, जानत विश्व सकल एकीकर। शुद्ध बुद्धि होवे जो पूजे, ध्यान करे भवि निर्मल हूजे ॥

ॐ ह्रीं शुद्धमतये जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३९)

संसारलक्ष्म्या अतिनश्वरायै जन्मर्क्षमुद्रामिव कुत्सयन्त्या। भद्रा शिवश्रीरिति योगयुक्त्या श्रीभद्रमीशं रभसार्चयामि ॥४९२॥
भाषा—संसार विभूति उदास भए, शिवलक्ष्मी सार सुहात भए। निज योग विशाल प्रकाश किया, श्रीभद्र जिनं शिव वास लिया ॥

ॐ ह्रीं श्रीभद्र जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४०)

अनंतवीर्यादिगुणप्रसन्नमात्मप्रभवानुभवैकगम्यं। अनंतवीर्यं जिनपं स्तवीमि यज्ञार्थभागैरुपलाल्यमानं ॥ ४९३ ॥
भाषा—सत वीर्य अनन्त प्रकाश किये, निज आतम तत्व विकाश किये। जिन वीर्य अनन्त प्रभाव धरे, जो पूजे कर्म कलंक हरे ॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्य जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४१)

पूर्वं विसर्पिण्यथ कालमध्ये संजातकल्याणपरंपराणाम्। संस्मृत्य सार्थं प्रगुणं जिनानां यज्ञेसमाहूय यजे समस्तान् ॥४९४॥

भाषा दोहा–भूत भरत चौवीस जिन, गुण सुमरूं हरवार। मंगलकारी लोकमें, मुख शांती दातार ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे यागमण्डलेश्वरद्वितीयवलयोन्मुद्रितनिर्वाणाद्यनन्तवीर्यान्तेभ्यो भूतजिनेभ्यो पूर्णार्घं नि० ।

यहां २४ भूत जिनकी पूजा समाप्त हुई इसलिये दूसरे वलयपर या मण्डलके किनारे एक नारियल चढ़ावे ।

अब तीसरे वलयमे वर्तमान चौवीस जिन पूजा करनी ।

मनुनाभिमहीधरजातमभुवं मरुदेव्युदरावतरंतमहं । प्रणिपत्य शिरोभ्युदयाय यजे कृतमुख्यजिनं वृषभं वृषभं ॥४९५॥

भाषा चाल छन्द–मनु नाभि मही धर जाए, मरुदेवि उदर उतराए । युग आदि सुधर्म चलाया, वृषभेश जजों वृष पाया ॥

ॐ ह्रीं ऋषभ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४२)

जितशत्रुगृहं परिभूपयितुं व्यवहारदिशा तनुभूप्रभवं । नयनिश्चयतः स्वयमेवभुवमजितं जिनमर्चतु यज्ञधर ॥ ४९६ ॥

भाषा–जितशत्रु जने व्यवहारा, निश्चय आयो अवतारा । सब कर्मन जीत लिया है, अजितेश सुनाम भया है ॥

ॐ ह्री अजित जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४३)

दृढराजसुवंशनभोमिहरं त्रिजगत्रयभूषणमभ्युदयं । जिनसम्भवमूर्ध्वगतिप्रदमर्चनया प्रणमामि पुरस्कृतया ॥ ४९७ ॥

भाषा–दृढ़राज सुवंश अकाशे, सूरज सम नाथ प्रकाशे । जग भूषण शिव गति दानी, संभव जज केवलज्ञानी ॥४९६॥

ॐ ह्रीं संभव जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४४)

कपिकेतनमीश्वरमर्थयतो मृतिजन्मजरापदनोदयतः । भविकस्य महोत्सवसिद्धिमियादत एव यजे ह्यभिनंदनकं ॥४९८॥

भाषा–कपि चिन्ह धरे अभिनन्दा, भवि जीव करे आनन्दा । जम्मन मरणा दुख टारें, पूजे ते मोक्ष सिधारें ॥४९७॥

ॐ ह्रीं अभिनन्दन जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४५)

सुमति श्रितमर्त्यमतिप्रकरार्पणतोऽर्थकराख्यमवाप्तशिवं । महयामि पितामहमेतदधिजगतीत्रयमूर्जितभक्तिनुतः ॥ ४९९ ॥

भाषा–सुमतीश जजों सुखकारी, जो शरण गहें मतिधारी । मति निर्मल कर शिव पावें, जग भ्रमण हि आप मिटावें ॥४९९॥

ॐ ह्रीं सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४६)

धरणेशभवं भवभावमितं जलजप्रभमीश्वरमानमताम् । सुरसंपदियर्त्ति न केति यजे चरुदीपफलैः सुरवासभवैः ॥५००॥

भाषा–धरणेश सुनृप उपजाए, पद्मप्रभ नाम कहाए। है रक्त कमल पग चिन्हा, पूजत सन्ताप विछिन्ना ॥५००॥

ॐ ह्रीं पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४७)

शुभपार्श्वजिनेश्वरपादभुवां रजसां श्रयतः कमलाततयः। कति नाम भवंति न यज्ञभुवि नायितुं महयामि महध्वनिभिः ॥५०१॥

भाषा–जिन चरणा रज सिर दीनी, लक्ष्मी अनुपम कर कीनी। हैं धन्य सुपारश नाथा, हम छोड़े नहि जग साथा ॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४८)

मनसा परिचिंत्य विधुः स्वरसात् मम कांतिह्रतिर्जिनदेहघृणेः। इति पादभुवं श्रितवानिव तं जिनचंद्रपदांबुजमाश्रयत ॥५०२॥

भाषा–शशि तुम लपि उत्तम जगमें, आया वसने तव पगमें। हम शरण गही जिन चरणा, चंद्रप्रभ भवतम हरणा ॥५०२॥

ॐ ह्रीं चंद्रप्रभजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४९)

सुमदंतजिनं नवमं सुविधीतिपराह्मखंडमनंगहरं। शुचिदेहततिप्रसरं प्रणुताव सलिलादिगणैर्यजतां विधिना ॥ ५०३ ॥

भाषा–तुम पुष्पदंत जितकामी, है नाम सुविधि अभिरामी। वंदूं तेरे जुग चरणा, जासे हो शिवतिय वरणा ॥ ५०३ ॥

ॐ ह्रीं पुष्पदंतजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५०)

... ... ॥५०४॥

भाषा–श्री शीतलनाथ अकामी, शिव लक्ष्मीवर अभिरामी। शीतल कर भव आतापा, पूजूं हर मम संतापा ॥ ५०४ ॥

ॐ ह्रीं शीतलनाथजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५१)

श्रेयोजिनस्य चरणौ परिधार्य चित्ते संसारपंचतयदुर्भ्रमणव्यपायः।
श्रेयोऽर्थिनां भवति तत्कृतये मयाऽपि संपूज्यते यजनसद्विधिषु प्रशस्य ॥ ५०५ ॥

भाषा–श्रेयांस जिना जुग चरणा, चित धारु मंगल करणा। परिवर्तन पंच विनाशे, पूजनते ज्ञान प्रकाशे ॥ ५०५ ॥

ॐ ह्रीं श्रेयांसजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५२)

इक्ष्वाकुवंशतिलको वसुपूज्यराजा यज्जन्मजातकविधौ हरिणार्चितोऽभूत्।
तद्वासुपूज्यजिनपार्चनया पुनीतः स्यामद्य तत्प्रतिकृतिं चरुभिर्यजामि ॥ ५०६ ॥

भाषा—इक्ष्वाकु सुवंश सुहाया, वसुपूज्य तनय प्रगटाया। इन्द्रादिक सेवा कीनी, हम पूजें जिनगुण चीन्हीं ॥ ५०६ ॥

ॐ ह्रीं वासुपूज्यजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९३)

कांपिल्यनाथकृतवर्मगृहावतारं श्यामाजयाहजननीसुखदं नमामि।

कोलध्वजं विमलमीश्वरमध्वरेऽस्मिन्नर्चे द्विरुक्तमलहापनकर्मसिद्ध्यै ॥ ५०७ ॥

भाषा—कांपिल्य पिता कृतवर्मा, माता श्यामा शुचि धर्मा। श्री विमल परम सुखकारी, पूजा द्वै मल हरतारी ॥ ५०७ ॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९४)

साकेतनायकनृपस्य च सिंहसेननाम्नस्तनूजममरार्चितपादपद्मं।

संपूजयामि विविधार्हणया ह्यनंतनाथं चतुर्दशजिनं सलिलाक्षतौघैः ॥ ५०८ ॥

भाषा—साकेता नगरी भारी, हरिसेन पिता अविकारी। सुर असुर सदा जिन चरणा, पूजें भवसागर तरणा ॥ ५०८ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९५)

धर्मं द्विधोपदिशता सदसींद्रधार्ये किं किं न नाम जनताहितमन्वदर्शि।

श्रीधर्मनाथ ! भवतेति सदर्थनाम संप्राप्तयेऽर्चनविधिं पुरतः करोमि ॥ ५०९ ॥

भाषा—समवसत द्वैविध धर्मा, उपदेशो श्री जिनधर्मा। हितकारी तत्व बताए, जासे जन शिवमग पाए ॥ ५०९ ॥

ॐ ह्रीं धर्मनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९६)

श्रीहास्तिनागपुरपालकविश्वसेनः स्वांके निवेश्य तनयामृतपुष्टितुष्टः।

ऐराऽपि सा सुकुरुवंशनिधानभूमिर्यस्माद् बभूव जिनशांतिमिहाश्रयामि ॥ ५१० ॥

भाषा—कुरुवंशी श्री विश्वसेना, ऐरादेवी सुख दैना। श्री हस्तिनागपुर आए, जिन शांति जजों सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं शांतिनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९७)

श्रीकुंथुनाथजिनजन्मानिपद्निकायजीवाः सुखं निरुपमं बुभुजुर्विशंकं।

किं नाम तत्स्मृतिनिराकुलमानसोऽहं भुंक्ष्वे न सत्त्वरमतोऽर्चनमारभेय ॥ ५११ ॥

पूजत ले दर्व सु ताजे ॥ ५११ ॥

भाषा—श्री कुन्थु दयामय ज्ञानी, रक्षक षटकायी प्राणी, सुमरत आकुलता भाजे, पूजत ले दर्व सु ताजे ॥ ५११ ॥

ॐ ह्रीं कुन्थुनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५८)

सद्दर्शनप्लुतसुदर्शनभूपपुत्रं त्रैलोक्यजीववररक्षणहेतुमित्रम् ।
श्रीमित्रसेनजननीखनिरत्नमर्चे श्रीपुष्पचिह्नमरनाथजिनेंद्रमर्घ्यम् ॥ ५१२ ॥

भाषा—शुभदृष्टी राय सुदर्शन, अर जाए त्रय भू पर्शन । माता सेना उर रत्नं, धर चिन्ह सुमन जज यत्नं ॥ ५१२ ॥

ॐ ह्रीं अरनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५९)

कुंभोद्भवं धरणिदुःखहरं प्रजावत्सानंदकारकमतंद्रमुनींद्रसेव्यं ।
श्रीमल्लिनाथविभुमध्वरविघ्नशांत्यै संपूजये जलसुचंदनपुष्पदीपैः ॥ ५१३ ॥

भाषा—नृप कुम्भ धरणिसे जाए, जिन मल्लिनाथ मुनि नाए । जिन यज्ञ विघ्न हरतारे, पूजूं शुभ अर्घ उतारे ॥५१३॥

ॐ ह्रीं मल्लिनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६०)

राजत्सुराजहरिवंशनभोविभास्वान् वप्राविकाप्रियसुतो मुनिसुव्रताख्यः ।
संपूज्यते शिवपथप्रतिपत्सहेतुर्यज्ञे मया विविधवस्तुभिरर्हणेऽस्मिन् ॥ ५१४ ॥

भाषा—हरिवंश सु सुन्दर राजा, वप्रा माता जिन राजा । मुनि सुव्रत शिव पथ कारण, पूजूं सब विघ्न निवारण ॥५१४॥

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रत जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६१)

सन्मैथिलेशविजयाह्वगृहेऽवतीर्णं कल्याणपंचकसमर्चितपादपद्मं ।
धर्माम्बुवाहपरिपोषितभव्यशस्यं नित्यं नमिं जिनवरं महसार्चयामि ॥ ५१५ ॥

भाषा—मिथुलापुर विजय नरेन्द्रा, कल्याण पांच कर इन्द्रा । नमि धर्मामृत वर्षायो, भव्यन खेती अकुलायो ॥५१५॥

ॐ ह्रीं नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६२)

द्वारावतीपतिसमुद्रजयेशमान्यं श्रीयादवेशबलकेशवपूजितांह्रिम् ।
शंखांकमंबुधरमेचकदेहमर्चे सद्ब्रह्मचारिमणिनेमिजिनं जलाद्यैः ॥ ५१६ ॥

भाषा—द्वारावति विजयसमुद्रा, जन्मे यदुवंश जिनेन्द्रा। हरिबल पूजित जिन चरणा, शंखांक अंबुधर वरणा ॥५१६॥

ॐ ह्रीं नेमिनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६३)

काशीपुरीशनृपभूपणविश्वसेननेत्रप्रियं कमठशाठ्यविखंडनेनं।

पद्माहिराजविबुधव्रजपूजनांकं वंदेऽर्चयामि शिरसा नतमौलिनीतः ॥ ५१७ ॥

भाषा—काशी विश्वसेन नरेशा, उपजायो पार्श्वजिनेशा। पद्मा अहिपति पग वंदे, रिपु कमठ मान निःकंदे ॥५१७॥

ॐ ह्रीं पार्श्वजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६४)

सिद्धार्थभूपतिगणेन पुरस्क्रियायामानंदतांडवविधौ स्वजनुः शशंसे।

श्रीश्रेणिकेन सदसि ध्रुवभूपदाप्त्यै यज्ञेऽर्चयामि वरवीरजिनेंद्रमास्मिन् ॥ ५१८ ॥

भाषा—सिद्धार्थराय त्रय ज्ञानी, सुत वर्द्धमान गुण खानी। समवसृत श्रेणिक पूजे, तुम सम है देव न दूजे ॥५१८॥

ॐ ह्रीं वर्द्धमान जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६५)

अत्राहूतसुपर्वपर्वनिकरे बिंबप्रतिष्ठोत्सवे संपूज्याश्चतुरुत्तरा जिनवरा विंशत्प्रमाः संप्रति।

संजाग्रत्समयाद्यैकसुकृतानुद्धार्थं मोक्षं गतास्तेऽत्रागत्य समस्तमध्वरकृतं गृह्णंतु पूजाविधिं ॥ ५१९ ॥

भाषा दोहा—वर्तमान चौवीस जिन, उद्धारक भवि जीव। बिम्बप्रतिष्ठा साधने, यजूं परम सुखनीव ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् यागमण्डले मखमुख्यार्चिततृतीयवलयोन्मुद्रितवर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यहां १ नारियल तीसरे वलयमें कहींपर या मण्डलके किनारे रख दे। अब चौथे वलयमें भविष्य चौवीस तीर्थंकरोंकी पूजा करनी।

पद्मा चलेत्यंकनलुप्तिकामा जिनस्य पादावचलौ विचार्य। यत्पादपद्मे वसतिं चकार सोऽयं महापद्मजिनोऽर्च्यतेऽर्घैः ॥५२०॥

भाषा चौपाई—महापद्म जिन भावी नाथ, श्रेणिक जीव जगत विख्यात। लक्ष्मी चञ्चल लिपटी आन, तब चरणा पूजूं भगवान ॥

ॐ ह्रीं महापद्म जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६६)

देवाश्चतुर्भेदनिकायभिन्नास्तेषां पदौ मूर्धनि संदधानः। तेनैव जातं सुरदेवनाम तमर्चये यज्ञविधौ जलाद्यैः ॥ ५२१ ॥

भाषा—देव चतुर्विधि पूजे पाय, नाय नाय सुरप्रभ जिनराय। मैं सुमरण करके हरपाय, पूजूं हर्ष न अंग समाय ॥

ॐ ह्रीं सुरप्रभ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६७)

सेवार्थमुत्प्रेक्ष्य न भूतिदाता कारुण्यबुद्ध्यैव ददाति लक्ष्मीम् । यतो जिनः सुप्रभुरायसार्थं नामार्चयेऽहं त्रिविनाग्नरीयैः ॥५२२॥

भाषा—सुप्रभु जिनके वंदूं पाय, सेवकजन सुखसार लहाय । करुणाधारी धनदातार, जो अविनाशी जिन सुखकार ॥५२३॥

ॐ ह्रीं सुप्रभु जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६८)

न केनचित्पदविधायि मोक्षसाम्राज्यलक्ष्म्याः स्वयमेव लब्धं । स्वयंप्रभत्वं स्वयमेव जातं यस्यार्च्यते पादसरोजयुग्मं ॥५२३॥

भाषा—मोक्ष राज्य देवे नहिं कोय, स्वयं आत्मबल लेवें सोय । देव स्वयंप्रभ चरण नमाय, पूजूं मन वच ध्यान लगाय ॥

ॐ ह्रीं स्वयंप्रभ देवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६९)

सर्वं मनःकायवचःप्रहारे कर्मागसां शस्त्रमभूद् यतो यः । सर्वायुधाख्यामगमन्मयाद्य संपूज्यतेऽसौ क्रतुभागभाज्यैः ॥५२४॥

भाषा—मन वच काय गुप्ति धरतार, तीव्र शस्त्र अघ मारणहार । सर्वायुध जिन साम्य प्रचार, पूजत जग मंगल करतार ॥५२४॥

ॐ ह्रीं सर्वायुधदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७०)

कर्मद्विषां मूलमपास्य लब्धो जयोऽन्यमर्त्यैरपि योऽनवाप्यः । ततो जयाख्यामुपलभ्यमानो मयार्हणाभिः परिपूज्यतेऽसौ ॥५२५॥

भाषा—कर्म शत्रु जीतन बलवान, श्रीजयदेव परम सुखखान । पूजत मिथ्यातम विघटाय, तत्व कुतत्त्व प्रगट दरशाय ॥५२५॥

ॐ ह्रीं जयदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७१)

आत्मप्रभावोदयनान्वितांतं लब्धोदयत्वादुदयप्रभाख्यां । समाप यस्मादपि सार्थकत्वात् कृतार्चनं तस्य कृती भवामि ॥५२६॥

भाषा—आत्मप्रभाव उदयजिन भयो, उदयप्रभजिन तातैं थयो । पूजत उदय पुण्यका होय, पापबन्ध सब डाले खोय ॥५२६॥

ॐ ह्रीं उदयप्रभजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७२)

प्रभा मनीषा प्रकृतिर्मतिर्ज्ञप्रिभृत्युदीर्णैकफलेति मत्वा । जाता प्रभादेव इति प्रशस्तिस्ततोऽर्चनातोऽहमपि प्रयामि ॥ ५२७ ॥

भाषा—प्रभा मनीषा बुद्धिप्रकाश, प्रभादेवजिन छूटी आश । पूजत प्रभा ज्ञान उपजाय, संशयतिमिर सबै हट जाय ॥५२७॥

ॐ ह्रीं प्रभादेवजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७३)

उदंकदेव त्वयि भक्तिभोग्या घटी घटी सा न तदुच्यते हा । त्वामेव लब्ध्वा जननं प्रयातं वरं यतस्त्वामहं महामि ॥ ५२८ ॥

भाषा–भव्यभक्तिजिनराजकराय, सफल काल तिनका होजाय। देव उदंक पूज जो करें, मनुषदेह अपनी वर करें ॥५२८॥

ॐ ह्रीं उदंकदेवजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७४)

सुरासुरस्वांतगतभ्रमैकविध्वंसने प्रश्नकृतोपपत्त्या। कीर्तिं ययौ प्रोष्ठिलमुख्यनामस्तवैर्निरुक्तोऽहमुदंचयामि ॥ ५२९ ॥

भाषा–सुरविद्याधर प्रश्न कराय, उत्तर देत भरम टल जाय। प्रश्नकीर्तिजिन यशके धार, पूजत कर्मकलंक निवार ॥ ५२९ ॥

ॐ ह्रीं प्रश्नकीर्तिजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७५)

पापाश्रवाणां दलनाद् यशोभिर्व्यक्तेर्जयात् कीर्तिसमागमेन। निरुक्तलक्ष्म्यै जयकीर्तिदेवं स्तवस्रजा नित्यमुपाचरामि ॥५३०॥

भाषा–पाप दलनते जयको पाय, निर्मल यश जगमें प्रगटाय। गणधरादि नित वन्दन करें, पूजत पापकर्म सब हरें ॥५३०॥

ॐ ह्रीं जयकीर्ति देवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७६)

कैवल्यभानातिशये समग्रा बुद्धिप्रवृत्तिर्यत उत्तमार्था। तत्पूर्णबुद्धेश्चरणौ पवित्रावर्घ्येण याय जम भवभ्रमणछृत्यै ॥ ५३१ ॥

भाषा–बुद्धिपूर्ण जिन वंदूं पाय, केवलज्ञान ऋद्धि प्रगटाय। चरण पवित्र करण सुखदाय, पूजत भवबाधा नश जाय ॥५३१॥

ॐ ह्रीं पूर्णबुद्धिजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७७)

क्रोधादयश्चात्मसपत्नभावं स्वधर्मनाशान्न जहत्युदीर्णे। तेषां हतिर्येन कृता स्वशक्तेस्तं निःकषायं प्रयजामि नित्यं ॥ ५३२ ॥

भाषा–हैं कषाय जगमें दुखकार, आतमधर्मके नाशनहार। निःकषाय होंगे जिनराज, तातें पूजूं मंगल काज ॥५३२॥

ॐ ह्रीं निःकषाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७८)

मलव्यपायान्मननात्मलाभाद् यथार्थशब्दं विमलप्रभेति। लब्धं कृतौ स्वीयविशुद्धिकामाः संपूजयामस्तमनर्घ्यजातं ॥ ५३३ ॥

भाषा–कर्मरूप मल नाशनहार, आत्म शुद्ध कर्ता सुखकार। विमलप्रभ जिन पूजूं आय, जासे मन विशुद्ध होजाय ॥५३३॥

ॐ ह्रीं विमलप्रभदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७९)

भास्वद्गुणग्रामविभासनेन पौरस्त्यसंप्राप्तविभावितानं। संस्मृत्य कामं बहुलप्रभं तं समर्चये तद्गुणलब्धिलुब्धः ॥ ५३४ ॥

भाषा–दीप्तवंत गुण धारणहार, बहुलप्रभ पूजों हितकार। आतम गुण जासों प्रगटाय, मोहतिमिर क्षणमें विनशाय ॥५३४॥

ॐ ह्रीं बहुलप्रभदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८०)

नीराभ्ररत्नानि सुनिर्मलानि प्रवाद एपोऽनृतवादिनां वै। येन द्विधा कर्ममलो निरस्तः स निर्मलः पातु सदर्चितो माम् ॥५३५॥

भाषा–जलनभरत्न विमल कहवाय, सो अभूत व्यवहार वसाय। भाव कर्म अठकर्म महान, हत निर्मल जिन पूजूं जान ॥५३५॥

ॐ ह्रीं निर्मल जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८१)

मनोवचःकायनियंत्रणेन चित्राऽस्ति गुप्तिर्यदवाप्तिपूर्तेः । तं चित्रगुप्ताह्वयमर्चयामि गुप्तिप्रशंसाप्तिरियं मम स्यात ॥ ५३६ ॥

भाषा–मनवचकाय गुप्ति धरतार, चित्रगुप्ति जिन हैं अविकार। पूजूं पग तिन भाव लगाय, जासें गुप्तित्रय प्रगटाय ॥५३६॥

ॐ ह्रीं चित्रगुप्ति जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८२)

अपारसंसारगतौ समाधिर्लब्धो न यस्माद् विहितः स येन। समाधिगुप्तिंजिनमर्चयित्वा लभे समाधिं त्विति पूजयामि ॥५३७॥

भाषा–चिरभव भ्रमण करत दुख सहा, मरण समाधि न कवहूं लहा। गुप्ति समाधि शरणको पाय, जजत समाधि प्रगटहोजाय ॥

ॐ ह्रीं समाधिगुप्ति जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८३)

स्वयं विनाऽन्यस्य सुयोगमात्मस्वशक्तिमुद्भाव्य निजस्वरूपे। व्यक्तो बभूवेति जिनः स्वयंभूर्दध्यात् शिवं पूजनयानयार्च्यः ॥५३८॥

भाषा–अन्य सहाय विना जिनराज, स्वयं लेंय परमातमराज। नाथ स्वयंभू मग शिवदाय, पूजत बाधा सव टल जाय ॥५३८॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८४)

कंदर्पनाम स्मरसद्भटस्य मुधैव नामेति तदर्दनोद्यः । प्रशस्तकंदर्प इयाय शक्ति यतोऽर्चयेऽहं तदयोगबुद्ध्यै ॥ ५३९ ॥

भाषा–मदनदर्पके नाशनहार, जिनकंदर्प आतमबलधार। दर्प अयोग बुद्धिके काज, पूजूं अर्घ लिये जिनराज ॥ ५३९ ॥

ॐ ह्रीं कंदर्प जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८५)

अनेकनामानि गुणैरनंतैर्जिनस्य बोध्यानि विचारवद्भिः । जयं तथा न्यासमथैकविंशमनागतं संप्रति पूजयामि ॥ ५४० ॥

भाषा–गुण अनन्त ते नाम अनन्त, श्रीजयनाथ धरत भगवंत। पूजूं अष्टद्रव्य कर लाय, विघ्न सकल जासे टल जाय ॥५४०॥

ॐ ह्रीं जयनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८६)

अभ्यर्हितात्मप्रगुणस्वभावं मलापहं श्रीविमलेशमीशं । पात्रे निधायार्घ्यमफल्गुशीलोद्धरप्रशक्त्यै जिनमर्चयामि ॥ ५४१ ॥

भाषा–पूज्य आतम गुणधर मलहार, विमलनाथ जग परम उदार। शील परम पावनके काज, पूजूं अर्घ लेय जिनराज ॥५४१॥

ॐ ह्रीं विमल जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८७)

अनेकभाषा जगति प्रसिद्धा परंतु दिव्यो ध्वनिरर्हतो वै । एवं निरूप्यात्मनि तत्त्वबुद्धिमभ्यर्चयामो जिनदिव्यवादं ॥५४२॥

भाषा–दिव्यवाद अर्हन्त अपार, दिव्यध्वनि प्रगटावनहार । आतमतत्त्वज्ञाता सिरताज, पूजूं अर्घ लेय जिनराज ॥५४२॥

ॐ ह्रीं दिव्यवाद जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८८)

शक्तेरपारश्चित एव गीतस्तथापि तद्व्यक्तिमियर्ति लब्ध्या । अनंतवीर्य त्वमगाः सुयोगात्त्वामर्चये तत्पदघृष्टमूर्ध्ना ॥ ५४३ ॥

भाषा–शक्ति अपार आतम धरतार, प्रगट करें जिन योग सम्हार । वीर्य अनन्तनाथको ध्याय, नत मस्तक पूजूं हरषाय ॥

ॐ ह्रीं अनंतवीर्य जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८९)

काले भाविनि ये सुतीर्थधरणात् पूर्व प्ररूप्यागमे, विख्याता निजकर्मसंततिमपाकुस स्फुरच्छक्तयः ।

तानत्र प्रतिकृत्यपावतमखे संपूजिता भक्तितः, प्राप्ताशेषगुणस्तदीप्सितपदावाप्त्यै तु संतु श्रिये ॥ ५४४ ॥

भाषा दोहा–तीर्थराज चौवीस जिन, भावी भव हरतार । विम्बप्रतिष्ठा कार्यमें, पूजूं विघ्न निवार ॥ ५४४ ॥

ॐ ह्रीं विम्बप्रतिष्ठोद्यापने मुख्यपूजार्हचतुर्थवलयोन्मुद्रितानागतचतुर्विंशतिमहापद्माद्यनंतवीर्यान्तेभ्यो जिनेभ्यः पूर्णार्घं नि० ।

यहां १ नारियल चौथे वलयमें या मण्डलके एक तरफ रक्खे । अब पांचवें-वलयमें वीस विदेह तीर्थंकर पूजा करनी ।

सीमंधरं मोक्षमहीनगर्याः श्रीहंसचित्तोदयभानुमंतं । यत्पुंडरीकाख्यपुरस्वजात्या पूतीकृतं तं महसार्चयामि ॥ ५४५ ॥

भाषा छंदस्रग्विणी–मोक्ष नगरीपतिं हंस राजासुतं, पुंडरीकी पुरी राजने दुखहतं ।

श्रीमंधर जिना पूजते दुखहना, फेर होवे न या जगतमें आवना ॥ ५४५ ॥ ॐ ह्रीं सिमंधर जिनाय अर्घं निर्वं० ।

युग्मंधरं धर्मनयप्रमाणवस्तुव्यवस्थादिषु युग्मवृत्तेः । संधारणात् श्रीरुहभूपजातं प्रणम्य पुष्पांजलिनार्चयामि ॥ ५४६ ॥

भाषा–धर्मद्वय वस्तु द्वय नय प्रमाणद्वयं, नाथ जुगमंधरं कथितं व्रत द्वयं ।

भूपश्री रुह सुतं ज्ञानकेवल गतं, पूजिये भक्तिसे कर्मशत्रू हतं ॥ ॐ ह्रीं जुगमंधर जिनाय अर्घं निर्वपामीति० । (९१)

सुग्रीवराजोद्भवमेणचिह्नं सुसीमपुर्यां विजयाप्रसूतं । बाहुं त्रिलोकोद्धरणाय बाहुं मखे पवित्रेऽर्चितमर्घयामि ॥ ५४७ ॥

भाषा–भूपसुग्रीव विजयासे जाए प्रभू, एणचिन्हं धरे जीतते तीन भू ।

स्वच्छ सीमापुरी राजते बाहुजिन, पूजिये साधुको राग रुष दोष विन ॥५४७॥ ॐ ह्रीं बाहुजिनाय अर्घं निर्वपामीति० ।

निःशल्यवंशाभ्रगभस्तिमंतं सुनंदया लालितमुग्रकीर्तिं । अवंध्यदेशाधिपतिं सुबाहुं तोयादिभिः पूजितुमुत्सहेऽहं ॥ ५४८ ॥

भाषा–वंशनभ निर्मलं सूर्यसम राजते, कीर्तिमय वंध्यविन क्षेत्र शुभ शोभते ।

मात सुन्दर सुनन्दा सुतं भवहतं, पूजते बाहु शुभ भवभयं निर्गतं ॥ ॐ ह्रीं सुबाहुजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।(९३)

श्रीदेवसेनात्मजमर्यमांकं त्रिदेहवर्षेप्यलकापुरिस्थं । संजातकं पुण्यजनुर्धरत्वात् सार्थाख्यमर्चेऽत्र मखे जलाद्यैः ॥ ५४९ ॥

भाषा–जन्म अलकापुरी देवसेनात्मजं, पुण्यमय जन्मए नाथ संजातकं ।

पूजिये भावसे द्रव्य आठों लिये, और रस सागकर आतमरसको पिये ॥५४९॥ ॐ ह्रीं संजातक जिनाय अर्घं नि० ।

स्वयंकृतात्मप्रभवत्वहेतोः स्वयंप्रभुं सद्धृदयस्वभूतं । सन्मंगलापूःस्थमनुष्णकांतिचिह्नं यजामोऽत्र महोत्सवेषु ॥ ५५० ॥

भाषा–जन्मपुर मंगला चंद्र चिह्न धरे, आपसे आप ही भव उदधि उद्धरे ।

प्रभस्वयं पूजते विघ्न सारे टरे, होंय मंगल महा कर्मशत्रू डरे ॥ ॐ ह्रीं स्वयंप्रभ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९५)

श्रीवीरसेना प्रसवं सुसीमाधीशं सुराणामृषभाननं तं । ईशं सुसौभाग्यभुवं महेशमर्चे विशालैश्चरुभिर्नवीनैः ॥ ५५१ ॥

भाषा–वीरसेना सुमाता सुसीमापुरी, देवदेवी परमभक्ति उरमें धरी ।

देव ऋषभाननं आननं सार है, देखते पूजते भव्य उद्धार है ॥५५१॥ ॐ ह्रीं ऋषभानन देवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यस्यास्ति वीर्यस्य न पारमत्र तारागणस्येव नितांत रम्यं । अनंतवीर्यप्रभुमर्चयित्वा कृतीभवाम्यत्र मखे पवित्रे ॥ ५५२ ॥

भाषा–वीर्यका पार ना ज्ञानका पार ना, सुक्खका पार ना ध्यानका पार ना ।

आपमें राजते शांतमय छाजतें, अन्तविन वीर्यको पूज अघ भाजते ॥ ॐ ह्रीं अनन्तवीर्य जिनाय अर्घं निर्वं० । (९७)

वृषांकमुच्चैश्चरणे विभाति यस्यापरस्ताद् वृषभूतिहेतुः । सूरिप्रभुं तं विधिना महामि वार्मुख्यतत्त्वैः शिवतत्त्वलब्ध्यै ॥५५३॥

भाषा–अंकवृष धारते धर्म वृष्टी करें, भाव संतापहर ज्ञान सृष्टी करें ।

नाथ सूरिप्रभं पूजते दुखहनं, मुक्ति नारी वरं पादुपे निजधनं ॥५५३॥ ॐ ह्रीं सूरिप्रभ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वीर्यंगभूमीरुहपुष्पमिंद्रसल्लांछनं पुंडरपूस्तिरीटं । विशालमीशं विजयाप्रसूतमर्चामि तद्ध्यानपरायणोऽहं ॥ ५५४ ॥

भाषा–पुंडरं पुरवरं मात विजया जने, वीर्य राजा पिता ज्ञानधारी तने ।

जुग्म चरणं भजे ध्यान इकतान हो, जिन विशालप्रभं पूज अघहान हो ॥ ॐ ह्रीं विशालप्रभ जिनाय अर्घं नि० । (९९)

सरस्वतीपद्मरथांगजातं शंखांकमुच्चैः श्रियमीशितारं । संमान्य तं वज्रधरं जिनेंद्रं जलाक्षतैरर्चितमुत्करोमि ॥ ५५५ ॥

भाषा–वज्रधर जिनवरं पद्मरथके सुतं, शंख चिन्हं धरे मान रुष भयगतं ।

मात सरसुति बड़ी इन्द्र सन्मानिता, पूजते जासको पाप सब भाजता ॥५५५॥ ॐ ह्रीं वज्रधर जिनाय अर्घं नि० ।

वाल्मीकवंशांबुधिशीतरश्मिं दयावतीमातृकमंक्यगावं । सत्पुंडरीकिण्यवनं जिनेंद्रं चंद्राननं पूजयताज्जलाद्यैः ॥ ५५६ ॥

भाषा–चंद्र आननजिनं चंद्रको जयकरं, कर्मविध्वंसकं साधुजनशमकरं ।

मात करुणावती नग्र पुंडीकिनी, पूजने मोहकी राज्यधानी छिनी ॥ ॐ ह्रीं चंद्रानन जिनाय अर्घं निर्वपामीति० । (१०१)

श्रीरेणुकामातृकमब्जचिह्नं देवेशमुत्पुत्रमुदारभावं । श्रीचंद्रबाहुं जिनमर्चयामि कृतप्रयोगे विधिना प्रणम्य ॥ ५५७ ॥

भाषा–श्रीमती रेणुका मात है जासकी, पद्मचिह्नं धरे मोहको मात दी ।

चंद्रबाहुजिनं ज्ञानलक्ष्मीधरं, पूजते जासके मुक्तिलक्ष्मीवरं ॥ ॐ ह्रीं चंद्रबाहुजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१०२)

भुजंगमं स्वीयभुजेन मोक्षपंथावरोहादुधृतनामकीर्तिम् । महाबलक्ष्मापतिपुत्रमेनं चंद्रांकयुक्तं महिमाविशालं ॥ ५५८ ॥

भाषा–नाथ निज आतमबल मुक्ति पथ पग दिया, चंद्रमा चिन्ह धर मोहतम हर लिया ।

बलमहाभूपती हैं पिता जासके, गमभुजं नाथ पूगे न भवमें छके ॥५५८॥ ॐ ह्रीं भुजंगमजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्वालाप्रसूर्येन सुशांतिमाप्ता कृतार्थतां वा गलसेनभूपः । सोऽयं सुसीमापतिरीश्वरो मे बोधिं ददातु त्रिजगद्विलासां ॥५५९॥

भाषा–मात ज्वाला सती सेन गल भूपती, पुत्र ईश्वर जने पूजते सुरपती ।

स्वच्छ सीमानगर धर्मविस्तारकर, पूजते हो प्रगट बोधिमय भासकर ॥ ॐ ह्रीं ईश्वरजिनाय अर्घं निर्वपा० । (१०४)

नेमिप्रभं धर्मरथांगवाहे नेमिस्वरूपं तपनांकमीडे । वार्श्चदनैः शालिसुमप्रदीपैः धूपैः फलैश्चारुचरुमतानैः ॥ ५६० ॥

भाषा–नाथनेमिप्रभं नेमि हैं धर्मरथ, सूर्यचिह्नं धरे चालते मुक्तिपथ ।

अष्टद्रव्यं लिये पूजते अघ हने, ज्ञानवैराग्यसे बोधि पावें घने ॥१६०॥ ॐ ह्रीं नेमिप्रभजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीवीरसेनाप्रभवं प्रदुष्टकर्मारिसेनाकरिणे मृगेंद्रः । यः पुंडरीशं जिनवीरसेनं सद्भूमिपालात्मजमर्चयामि ॥ ९६१ ॥
भाषा—वीरसेना सुतं कर्मसेना हतं, सेनशूरं जिनं इन्द्रसे वंदितं ।
पुंडरीकं नगर भूमि पालक नृपं, हैं पिता ज्ञानसुरा करूं मे जपं ॥ ॐ ह्रीं वीरसेनजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।(१०६)
यो देवराजक्षितिपालवंशदिवामणिः पूर्विजयेश्वरोऽभूत । उमाप्रसूनो व्यवहारयुक्त्वा श्रीमन्महाभद्र उदर्च्यनेऽसौ ॥९६२॥
भाषा—नग्र विजया तने देव राजा पती, अर उमा मातके पुत्र संशय हती ।
जिन महाभद्रको पूजिये भद्रकर, सर्व मंगल करैं मोह संताप हर ॥९६२॥ ॐ ह्रीं महाभद्र जिनाय अर्घं नि० ।
गंगाखनिस्फारमणिं सुसीमापुरीश्वरं वै स्तवभूतिपुत्रं । स्वस्तिपदं देवयशोजिनेंद्रमर्चामि सत्स्वास्तिकलांछनीयं ॥ ९६३ ॥
भाषा—है सुसीमा नगर भूप भूतिस्तत्रं, मात गंगा जने द्योतते त्रिभुवं ।
लांक्षणं स्वस्तिकं जिन यशोदेवको, पूजिये वंदिये मुक्ति गुरु देवको ॥ ॐ ह्रीं देवयशोजिनाय अर्घं नि० । (१०८)
कनकभूपतितोकमकोपकं कृततपश्चरणादितमोहकं । अजितवीर्यजिनं सरसीरुहविशदचिह्नमहं परिपूजये ॥ ९६४ ॥
भाषा—पद्मचिन्हं धरे मोहको वश करे, पुत्र राजा कनक क्रोधको क्षय करे ।
ध्यान मंडित महावीर्य अजितं धरे, पूजने जासको कर्म—बंधन टरे ॥९६४॥ ॐ ह्रीं अजितवीर्य जिनाय अर्घं नि० ।
एवं पंचमकोष्ठपूजिताजिनाः सर्वे विदेहोद्भवा । नित्यं ये स्थितिमादधुः प्रतिपतत्तन्नाममंत्रोत्तमाः ॥
कस्मिंश्चित्समयेऽभ्रपट्टविधुमितं पूर्णं जिनानां मतं । ते कुर्वंतु शिवात्मलाभमनिशं पूर्णार्घसंमानिताः ॥ ९६५ ॥
भाषा दोहा—राजत वोस विदेह जिन, कबहिं साठ शत होंय । पूजत वंदत जासको, विघ्न सकल क्षय होंय ॥
ॐ ह्रीं बिम्बप्रतिष्ठाध्वरोद्यापने मुख्यपूजार्हपंचमवलयोन्मुद्रितविदेहक्षेत्रे सुषष्टिसहितैकशतजिनेशसंयुक्तनित्यविहरमाणविंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा । इसतरह पंचम वलयमें वीस जिन पूजा करके एक नारियल वहांपर या मण्डलके किनारे चढ़ावे ।
अब छठे वलयमें आचार्य परमेष्ठीके ३६ गुणोंकी पूजा करनी ।
मोहास्रयादाप्तदृशोः स पंचविंशातिचारसजनादवाप्ता । सम्यक्त्वशुद्धिं प्रतिरक्षतोऽर्चे आचार्यवर्यान् निजभावशुद्धान् ॥९६६॥
भाषा भुजंगप्रयात छन्द—हटाए अनन्तानुबन्धी कषायें, करणसे हैं मिथ्यात तीनों खपाए ।

अतीचार पच्चीसको हैं वचाए, सु आचार दर्शन परम गुरु धराए॥ ॐ ह्रीं दर्शनाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

विपर्ययादिप्रहृतेः पदार्थज्ञानं समासाद्य परात्मनिष्ठं। दृढ़प्रतीतिं दधतो मुनींद्रानर्चे स्पृहाध्वंसनपूर्णहर्षान्॥ ५६७॥

भाषा—न संशय विपर्यय न है मोह कोई, परम ज्ञान निर्मल धरें तत्त्व जोई।

स्वपरज्ञानसे भेदविज्ञान धारे, सु आचार ज्ञानं स्व अनुभव सम्हारे॥ ॐ ह्रीं ज्ञानाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घं नि०।

आत्मस्वभावे स्थितिमादधानांश्चारित्रचारुव्रतधौर्यधर्तृन्। द्विधा चरित्रादचलत्वमाप्तानार्यान् यजे सद्गुणरत्नभूषान्॥५६८॥

भाषा—सुचारित्र व्यवहार निश्चय सम्हारे, अहिंसादि पांचों व्रतें शुद्ध धारे।

अचल आत्ममें शुद्धता सार पाए, जजूं पद गुरूके दरव अष्ट लाए॥५६८॥ ॐ ह्रीं चारित्राचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो नि०।

वाह्यांतरद्वधतपोऽभियुक्तान् सुदर्शनाद्रिं हसतोऽचलत्वात्। गाढावरोहात्मसुखस्वभावान् यजामि भक्त्या मुनिसंघपूज्यान्॥५६९॥

भाषा—तपें द्वादशों तप अचल ज्ञानधारी, सहें गुरु परीषह सुसमता प्रचारी।

परम आत्म रस पीवते आपही तें, भजूं में गुरू छूट जाऊं भवों तें॥ ॐ ह्रीं तपाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०। (११३)

स्वात्मानुभावोद्भटवीर्यशक्तिदृढाभियोगावनतः प्रशक्तान्। परीषहापीडनदुष्टदोपागतौ स्ववीर्यप्रवणान् यजेऽहं॥ ५७०॥

भाषा—परम ध्यानमें लीनता आप कीनी, न हटते कभी घोर उपसर्ग दीनी।

सु आतम वली वीर्यकी ढाल धारी, परम गुरु जजूं अष्ट द्रव्यें सम्हारी॥५७०॥ ॐ ह्रीं वीर्याचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

चतुर्विधाहारविमोचनेन द्वित्र्यादिघस्रेपु तृषाक्षुधादेः। अम्लानभावं दधतस्तपस्थानर्चामि यज्ञे प्रवरान्वतारान्॥ ५७१॥

भाषा—तपः अनशनं जो तपें धीरवीरा, तजें चारविध भोजनं शक्ति धीरा।

कभी मास पक्षं कभी चार त्रय दो, सु उपवास करते जजूं आप गुण दो॥ ॐ ह्रीं अनशनतपोयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

त्रिभागभोज्ये क्षितिवेदवह्निग्रासाशने तुष्टिमतो मुनींद्रान्। ध्यानाववधानाद्यभिवृद्धिपुष्टान् निद्रालसौ जेतुमितान् यजामि॥५७२॥

भाषा—सु ऊनोदरी तप महा स्वच्छ कारी, करे नींद आलस्यका नहिं प्रचारी।

सदा ध्यानकी सावधानी सम्हारे, जजूं मैं गुरूको करम घन विदारें॥ ॐ ह्रीं अवमोदर्यतपोऽभियुक्ताचार्य परमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

शृङ्गाग्रलग्नं वसनं नवीनं रक्तं नीरीक्ष्यैव भुंजि करिष्ये। इत्यादिवृत्तौ निरतानलक्ष्यभावान् मुनींद्रानहमर्चयामि॥ ५७३॥

भाषा—जभी भोजना हेतु पुरमें पधारें, तभी दृढ़ प्रतिज्ञा गुरू आप धारें।

यही वृत्तिपरिसंख्य तप आशहारी, भजूं जिन गुरू जो कि धारें विचारी॥ ॐ ह्रीं वृत्तिपरिसंख्यातपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०

मिष्टाज्यदुग्धादिरसापवृत्तेः परस्य लक्ष्येऽप्यवभासनेन। त्यागे मुदं चेष्टितमस्रयोगाद् धर्तॄन् गणेशाग्रिपतीन् यजामि ॥५७४॥

भाषा—कभी छः रसोंको कभी चार त्रय दो, तजें राग वर्जन गुरू लोभजित हो।

धरें लक्ष्य आतम सुधा सार पीते, जजूं मैं गुरूको सभी दोष वीते॥ ॐ ह्रीं रसपरित्यागतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

दरीषु भूध्रोपरिषु श्मशाने दुर्गे स्थले शून्यगृहावलीषु। शय्यासने योग्यदृढासनेन संधार्यमाणान् परिपूजयामि ॥ ५७५ ॥

भाषा-कभी पर्वतोंपर गुहा वनमशाने, धरें ध्यान एकांतमें एकताने। धरें आसना दृढ़ अचल शांति धारी, जजूं मैं गुरूको भरम तापहारी॥

ॐ ह्रीं विविक्तशय्यासनतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्रीष्मे महीध्रे सरितां तटेषु शरत्सु वर्षासु चतुष्पथेषु। योगं दधानान् तनुकष्टदाने प्रीतान् मुनींद्रान् चरुभिः पृणामि ॥ ५७६॥

भाषा—ऋतू उष्ण पर्वत शरद्रितु नदी तट, अधोवृक्ष वर्षातमें याकि चउ पथ।

करें योग अनुपम सहें कष्ट भारी, जजूं मैं गुरूको सुसम दम पुकारी॥ ॐ ह्रीं कायक्लेशतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

संभाव्य दोषानुनयं गुरुभ्य आलोचनापूर्वमहर्निशं ये। तच्छुद्धिमात्रे निपुणा यतीशा संत्वर्घदानेन मुदंचितारः ॥ ५७७ ॥

भाषा—करें दोष आलोचना गुरु सकाशे, भरें दंड रुचिसों गुरू जो प्रकाशे।

सुतप अंतरंग प्रथम शुद्ध कारी, जजूं मैं गुरुको स्व आतम विहारी॥ ॐ ह्रीं प्रायश्चित्ततपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

सद्दर्शनज्ञानचरित्ररूपप्रभेदतश्चात्मगुणेषु पंच—पूज्येष्वशल्यं विनयं दधानाः मां पांतु यज्ञेऽर्चनया पंटिष्ठाः ॥ ५७८ ॥

भाषा—दरश ज्ञान चारित्र आदी गुणोंमें, परम पदमई पांच परमेष्ठियोंमें।

विनय तप धरें शल्य त्रयको निवारें, हमें रक्ष श्रीगुरू जजूं अर्घ धारें॥ ॐ ह्रीं विनयतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

दिक्संख्यसंघे खलु वातपित्तकफादिरोगक्रमजातिसंधौ। दयार्द्रचित्तान्मुनियैंगितज्ञांस्तद्दुःखहंतॄनहमाश्रयामि ॥ ५७९ ॥

भाषा—यती संघ दस विध यदी रोग धारे, तथा खेद पीड़ित मुनी हों विचारे।

करें सेव उनकी दया चित्त ठाने, जजूं मै गुरूको भरम ताप हाने॥ ॐ ह्रीं वैय्यावृत्यतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

श्रुतस्य बोधं स्वपरार्थयोर्वा स्वाध्याययोगादवभासमानान्। आम्नायपृच्छादिषु दत्तचित्तान् संपूजयामोऽर्घविधानमुख्यैः ॥५८०॥
भाषा—करें बोध निज तत्त्व पर तत्त्व रुचिसे, प्रकाशें परम तत्त्व जगको स्वमतिसे।
यही तप अमोलक करमको खपावे, जजूं मैं गुरूको कुबोधं नशावे॥ ॐ ह्रीं स्वाध्यायतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।
विनश्वरे देहकृते ममत्वत्यागेन कायोत्सृजतोपि पद्मा-सनादियोगानवधार्य चात्मसंपत्सु संस्थानहमंचयामि ॥ ५८१ ॥
भाषा—अपावन विनाशीक निज देह लखके, तजें सब ममत्वं सुधा आत्म चखके।
करें तप सु व्युत्सर्ग संतापहारी, जजूं मैं गुरूको परम पद विहारी॥ ॐ ह्रीं व्युत्सर्गतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।
येषां मनोऽहर्निशमार्त्तरौद्रभूमेरनंगीकरणाद्धि धर्म्ये। शुक्लोपकंठे परिवर्त्तमानं तानाश्रये बिंबविधानयज्ञे ॥ ५८२ ॥
भाषा—जु है आर्तरौद्रं कुध्यानं कुज्ञानं, उन्हें नहिं धरें ध्यान धर्मं प्रमाणं।
करें शुद्ध उपयोग कर्मप्रहारी, जजूं मैं गुरूको स्व अनुभव सम्हारी॥ ॐ ह्रीं ध्यानावलम्बननिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।
येषां भ्रुवः क्षेपणमात्रतोऽपि शक्रस्य शक्रत्वविघातनं स्यात्। एवंविधा अप्युदितक्रुधार्तौ क्षमां भजंते ननु तान् महामि ॥५८३॥
भाषा—करै कोय बाधा वचन दुष्ट बोले, क्षमा ढालसे क्रोध मनमें न कुछ लें।
धरें शक्ति अनुपम तदपि शाम्यधारी, जजूं मैं गुरूको स्व धर्मप्रचारी॥ ॐ ह्रीं उत्तमक्षमापरमधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।
न जातिलाभैश्वर्यविदंगरूपमदाः कदाचिज्जननं प्रयांति। येषां मृदिम्ना गुरुणार्द्रचित्तास्ते दम्नुरीशाः स्तवनाच्छित्रं मे ॥५८४॥
भाषा—धरै मद न तप ज्ञान आदी स्व मनमें, नरम चित्तसे ध्यान धारें सुवनमें।
परम मार्दवं धर्म सम्यक् प्रचारी, जजूं मैं गुरूको सुधा ज्ञान धारी॥ ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मधुरधराचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।
सर्वत्र निश्छद्मदशासु वल्लीप्रतानमारोहति चित्तभूमौ। तपोयमोद्भूतफलैरवंध्या शाम्यांबुसिक्ता तु नमोऽस्तु तेभ्यः ॥५८५॥
भाषा—परम निष्कपट चित्त भूमी सम्हारे, लता धर्म वर्धन करें शांति धारें।
करम अष्ट हन मोक्ष फलको विचारें, जजूं मैं गुरूको श्रुतज्ञान धारें॥ ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मपरिपुष्टाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।
भाषासमिता भयलोभमोहमूलंकपत्वादनुभूतया च। हितं मितं भाषयतां मुनीनां पादारविंदद्वयमर्चयामि॥ ५८६ ॥
भाषा—न रुष लोभ भय हास्य नहिं चित्त धारें, वचन सत्य आगम प्रमाणे उचारें।

परम हितमितं मिष्ट वाणी प्रचारी, जजूं मैं गुरूको सु समता विहारी ॥ ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मप्रतिष्ठिताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० ।

न लोभरक्षोऽभ्युदयो न तृष्णागृद्धी पिशाच्यौ सविधं सदेतः। तस्मात् शुचित्वात्मविभा चकास्ति येषां तु पादस्थलमर्चयेऽहं ॥५८७॥

भाषा—न है लोभ राक्षस न तृष्णा पिशाची, परम शौच धारें सदा जो अजाची ।

करैं आत्म शोभा स्व सन्तोष धारी, जजूं मैं गुरूको भवातापहारी ॥ ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० ।

मनोवचःकायभिदानुमोदादिभंगतश्चेंद्रिय जंतुरक्षा । वर्वर्ति सत्संयमबुद्धिधीरास्तेषां सपर्याविधिमाचरामि ॥ ५८८ ॥

भाषा—न संयम विरावें करे प्राणिरक्षा, दमैं इंद्रियोंको मिटावें कुइच्छा ।

निजानन्द राचें खरे संयमी हो, जजूं मै गुरूको यमी अर दमी हो ॥ ॐ ह्रीं उत्तमद्विविधसंयमपात्राचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० ।

तपोविभूषा हृदयं विभर्ति येषां महाघोरतपोगुणाग्र्याः । इंद्रादिधैर्यच्यवनं स्वतस्सं तया युता एव शिवैषिणः स्युः ॥ ५८९ ॥

भाषा—तपो भूषणं धारते यति विरागी, परम धाम सेवी गुणग्राम त्यागी ।

करें सेव तिनकी सुइन्द्रादि देवा, जजूं मै चरणको लहूं ज्ञान मेवा ॥ ॐ ह्रीं उत्तमतपोऽतिशयधर्मसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० ।

समस्तजंतुष्वभयं परार्थसंपत्करी ज्ञानसुदत्तिरिष्टा । धर्मौषधीशा अपि ते मुनीशास्त्यागेश्वरा द्रांतु मनोमलानि ॥ ५९० ॥

भाषा—अभयदान देते परम ज्ञान दाता, सुधर्मौषधी वाटते आत्म त्राता ।

परम त्याग धर्मी परम तत्त्व मर्मी, जजूं मैं गुरूको शमूं कर्म गर्मी ॥ ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मप्रवीणाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० ।

आत्मस्वभावादपरे पदार्था न हेऽथवाऽहं न परस्य बुद्धिः। येषामिति प्राणयति प्रमाणं नेषां पदार्चां करवाणि निसं ॥५९१॥

भाषा—न पर वस्तु मेरी न सम्बन्ध मेरा, अलख गुण निरंजन शमी आत्म मेरा ।

यही भाव अनुपम प्रकाशे सुध्यानं, जजूं मैं गुरूको लहूं शुद्ध ज्ञानं ॥ ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० ।

रंभोर्वशी यन्मनसोविकारं कर्तुं न शक्ताऽत्मगुणानुभावान् । शीलेशतामादधुरुत्तमार्थां यजामि तानार्यवरान् मुनींद्रान् ॥५९२॥

भाषा—परम शील धारी निजाराम चारी, न रम्भा सु नारी करे मन विकारी ।

परम ब्रह्मचर्या चलत एकतानं, जजूं मैं गुरूको सभी पापहानं ॥ ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यमहानुभावधर्ममहनीयाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० ।

संरोधनान्मानसभंगवृत्तेः विकल्पसंकल्पपरिक्षयाच्च । शुद्धोपयोगं भजतां मुनीनां गुप्तिं प्रशंस्यात्र यजामहे तान् ॥ ५९३ ॥

भाषा—मनः गुप्तिधारी विकल्प प्रहारी, परम शुद्ध उपयोगमें नित विहारी।

निजानन्द सेवी परम धाम वेवी, जजूं मैं गुरूको धरम ध्यान देवी ॥ ॐ ह्रीं मनोगुप्तिसंपन्नाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

धर्मोपदेशात्त्वते कथाया अभाषणात संभ्रमतादिदोषैः। वियोजनाद् ध्यानसुधैकपानाद् गुप्तिं वचोगामदितान् यजामि ॥५९४॥

भाषा—वचन गुप्तिधारी महा सौख्यकारी, करें धर्म उपदेश संशय निवारी।

सुधा सार पीते धरम ध्यान धारी, जजूं मैं गुरूको सदा निर्विकारी ॥ ॐ ह्रीं वचनगुप्तिधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

वन्याः समिद्धीरचितां दृपत्मूत्कीर्णामिवांगप्रतिमां निरीक्ष्य। कंडूतिनांगानि लिहंति येषां धाराग्रमर्घेण यजामि सम्यक् ॥५९५॥

भाषा—अचल ध्यान धारी खड़ी मूर्ति प्यारी, खुजावें मृगी अंग अपना सम्हारी।

धरी काय गुप्ति निजानन्द धारी, जजूं मैं गुरूको सु समता प्रचारी ॥ ॐ ह्रीं कायगुप्तिसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

सामायिकं जाहति नोपदिष्टं त्रिकालजातं ननु सर्वकाले। रागक्रुधोर्मूलनिवारणेन यजामि चावश्यककर्मधातॄन् ॥ ५९६ ॥

भाषा—परम साम्य भावं धरें जो त्रिकालं, भरम राग रुष द्वेष मद मोह टालं।

पिवैं ज्ञानरस शांति समता प्रचारी, जजूं मैं गुरुको निजानन्द धारी ॥ ॐ ह्रीं सामायिकावश्यककर्मधारिभ्यःआचार्यपर० नि०।

सिद्धश्रुतिं देवगुरुश्रुतानां स्मृतिं विधायापि परोक्षजातं। सद्वंधनं नित्यमपार्थहानं कुर्वंति तेषां चरणौ यजामि ॥ ५९७ ॥

भाषा—करैं वंदना सिद्ध अरहन्तदेवा, मगन तिन गुणोंमें रहें सार लेवा।

उन्हींसा निजातम जु अपने विचारें, जजूं मैं गुरूको धरम ध्यान धारें॥ ॐ ह्रीं वंदनावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

तेषां गुणानां स्तवनं मुनींद्रा वचोभिरुद्धूतमनोमलांकैः। कुर्वंति चावश्यकमेव यस्मात् पुष्पांजलिं तत्पुरतः क्षिपामि ॥५९८॥

भाषा—करें संस्तवं सिद्ध अरहन्तदेवा, करें गानगुणका लहें ज्ञान मेवा।

करें निर्मलं भावको पाप नाशें, जजूं मैं गुरूको सु समता प्रकाशे ॥ ॐ ह्रीं स्तवनावश्यकसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

मलोत्सृजादौ कचनाप्तदोषं प्रतिक्रमेणापनुदंति वृद्धं। साधुं समुद्दिश्य निशादिवीयदोषान् जहत्यर्चनया धिनोमि ॥ ५९९ ॥

भाषा—लगे दोष तन मन वचनके फिरनसे, कहें गुरु समीपे परम शुद्ध मनसे।

करें प्रतिक्रमण अर लहें दंड सुखसे, जजूं मैं गुरूको छुटूं सर्व दुःखसे ॥ ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकनिरताचार्यपर० नि०।

स्वो नाम चात्माऽध्ययते यदर्थः स्वाध्याययुक्तो निजभानुबुद्धः। श्रुतस्य चिंताऽपि तदर्थबुद्धिस्तामाश्रये स्वाभिमतार्थसिद्ध्यै ॥

भाषा–करें भावना आतमकी ज्ञान ध्यावें, पढ़े शास्त्र रुचिसे सुबोधं बढ़ावे।

यही ज्ञान सेवा करम मल छुड़ावे, जजूं मैं गुरूको अबोधं हटावे॥ ॐ ह्रीं स्वाध्यावश्यककर्मनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

भुजप्रलंबादिविधिज्ञतायाः पौरस्त्यमाप्याधिगमं वहंतः। व्युत्सर्गमात्रा वशिनः कृतार्था अस्मिन् मखे यांतु विधिज्ञपूजां ॥६०१॥

भाषा–तजें सब ममत्त्वं शरीरादि सेती, खड़े आतम ध्यावें छुटे कर्म रेती।

लहैं ज्ञानभेदं सु व्युत्सर्ग धारें, जजूं मैं गुरूको स्व अनुभव विचारें॥ ॐ ह्रीं व्युत्सर्गावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि०।

गुणोद्देशा देषा प्रणिधिवशतोऽनंतगुणिनां। कृता ह्याचार्याणामपचितिरियं भावबहुला॥

समस्तान् संस्मृत्य श्रमणमुकुटानर्घमलघु। प्रपूर्त्तं संदब्धं मम मखविधिं पूरयतु वै॥ ६०२॥

भाषा दोहा–गुण अनन्त धारी गुरू, शिवमग चालन हार। संघ सकल रक्षा करें, यज्ञ विघ्न हरतार॥

ॐ ह्रीं अस्मिन्प्रतिष्ठोद्यापने पूजार्हमुख्यषष्ठवलयोन्मुद्रित आचार्यपरमेष्ठिभ्यस्तद्गुणेभ्यश्च पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इस तरह पूजा करके एक नारियल छठे वलयमें या मण्डलके किनारे रक्खे।

अब सातवे वलयमें स्थापित उपाध्याय परमेष्ठीके २५ गुणोंकी पूजा करनी।

आचारांगं प्रथमं सागारमुनीशचरणभेदकथं। अष्टादशसहस्रपदं यजामि सर्वोपकारसिद्ध्यर्थं॥ ६०३॥

भाषा द्रुतविलंबित छन्द–प्रथम अंग कथत आचारको, सहस अष्टादश पद धारतो।

पढ़त साधु सु अन्य पढ़ावते, जजूं पाठकको अति चावसे॥

ॐ ह्रीं अष्टादश सहस्रपदकाचारांगज्ञाताउपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सूत्रकृतांगं द्वितीयं षट्त्रिंशत्सहस्रपदकृतमहितं। स्वपरसमयविधानं पाठकपठितं यजामि पूजार्हं॥ ६०४॥

भाषा–द्वितीय सूत्रकृतांग विचारते, स्वपर तत्त्व सु निश्चय लावते। पद छतीस हजार विशाल हैं, जजूं पाठक शिष्य दयालु हैं॥

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशत्सहस्रपदसंयुक्तसूत्रकृतांगज्ञाताउपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थानांगं द्विकचत्वारिंशत्पदकं षडर्थदशसरणेः। एकादिसुभेदयुजः कथकं परिपूजये वसुभिः॥ ६०५॥

भाषा–तृतिय अंग स्थान छः द्रव्यको, पद हजार बियालिस धारतो। एक द्वै त्रय भेद वखानता, जजूं पाठक तत्त्व पिछानता ॥
ॐ ह्री द्विचत्वारिंशत्पदसंयुक्तस्थानांगज्ञाताउपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

समवायांगं लक्षैकं चतुरितषष्ठीसहस्रपदविशदं। द्रव्यादिचतुष्टयेन तु साम्योक्तिर्यत्र पूजये विधिना ॥ ६०६ ॥
भाषा–द्रव्य क्षेत्र समय अर भावसे, साम्य झलकावे विस्तारसे। लख सहस चौसठ पद धारता, जजूं पाठक तत्त्व विचारता ॥
ॐ ह्रीं एकलक्षषष्ठि पदन्याससहस्रसमवायांगज्ञाताउपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

व्याख्याप्रज्ञप्त्यंगं द्विलक्षसहिताष्टविंशतिसहस्रपदं। गणधरकृतषष्टिसहस्रप्रश्नोक्तिर्यत्र पूज्यते महसा ॥ ६०७ ॥
भाषा–प्रश्न साठ हजार वखानता, सहस अठविंशति पद धारता। द्विलख और विशद परकाशता, जजूं पाठक ध्यान सम्हारता ॥
ॐ ह्रीं द्विलक्षअष्टविंशतिसहस्रपदरंजितव्याख्याप्रज्ञप्त्यंगज्ञाताउपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञातृधर्मकथांगं शरलक्षसषट्कपंचाशत्। पदमहितं वृषचर्चाप्रश्नोत्तरपूजितं महये ॥ ६०८ ॥
भाषा–धर्म चर्चा प्रश्नोत्तर करे, पांच लाख सहस छप्पन धरे। पद सु मध्यम ज्ञान वढ़ावता, जजूं पाठक आतम ध्यावता ॥
ॐ ह्रीं पंचलक्षषट्पंचाशतसहस्रपदसंगतज्ञातृधर्मकथांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

उपासकपाठकशिवलक्षससप्ततिसहस्रपदभंगं। (?) व्रतशीलाधानादिक्रियाप्रवीणं यजामि सलिलाद्यैः ॥ ६०९ ॥
भाषा–व्रत सुशील क्रिया गुण श्रावका, पद सु लक्ष इग्यारह धारका। सहस सप्तति और मिलाइये, जजूं पाठक ज्ञान वढ़ाइये ॥
ॐ ह्रीं एकादशलक्षसप्ततिसहस्रपदशोभितोपासकाध्ययनांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतकृदंगं दश दश साधुजनोपसर्गकथकमाधितीर्थम्। तेषां निःश्रेयसलंभनमपि गणधरपठितं यजामि मुदा ॥ ६१० ॥
भाषा–दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थंकर शिवतिय वरे। सहस अठाइस लख तेइसा, पद यजूं पाठक जिन सारिसा ॥
ॐ ह्रीं त्रिविंशतिलक्षआठविंशतिसहस्रपदशोभितांतकृतदशांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

उपपादानुत्तरकं द्विचत्वारिंशल्लक्षसहस्रपदं। (?) विजयादिषु नियमेन मुनिगतिकथकं यजामि महनीयं ॥ ६११ ॥
भाषा–दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थ अनुत्तर अवतरे। सहस चव चालिस लख बानवे, पद धरे पाठक बहुज्ञान दे ॥
ॐ ह्रीं द्विनवतिलक्षचतुर्चत्वारिंशतपदशोभितानुत्तरोपपादिकांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रश्नव्याकरणांगं त्रिणवतिलक्षाधिषोडशसहस्रपदं । नष्टोद्दिष्टंसुखलाभगतिभाविकथं पूजये चरुफलाद्यैः ॥ ६१२ ॥
भाषा–प्रश्न व्याकरणांग महान ये, सहस सोलह लाख तिरानवे । पद धरे सुख दुःख विचारता, जजूं पाठक धर्म प्रचारता ॥
ॐ ह्रीं त्रिनवतिलक्षषोड़शसहस्रपदशोभितप्रश्नव्याकरणांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अंगं विपाकसूत्रं कोट्येकचतुरशीतिसहस्रपदं । कर्मोदयसत्त्वानानोदीर्णादिकथं यजनभागतोऽर्चामि (?) ॥ ६१३ ॥
भाषा–सहस चवरसि कोटी एक पद, धरत सूत्रविपाक सुज्ञान मद। करम-बंध उदय सत्त्वादि कथ, जजूं पाठक जीते कामरथ ॥
ॐ ह्रीं एककोटिचतुरशीतिसहस्रपदशोभितविपाकसूत्रांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्पादपूर्वकोटीपदपद्धतिजीवमुखपद्कं । निजनिजस्वभावघटितं कथयत्प्रांचामि भक्तिभरः ॥ ६१४ ॥
भाषा–कथत पद् द्रव्योंकी सारता, एक कोटी पदको धारता । पूर्व है उत्पाद सु जानकर, जजूं पाठक निज रुचि ठानकर ॥
ॐ ह्रीं उत्पादपूर्वाधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अग्रायणीयपूर्वंपण्णवतिकोटिपदं तु यत्र तत्त्वकथा । सुनयदुर्णयतत्स्वप्रामाण्यप्ररूपकं प्रयजे ॥ ६१५ ॥
भाषा–सुनय दुर्नय आदि प्रमाणता, नवति छः कोटी पद धारता । पूर्व अग्रायण विस्तार है, जजूं पाठक भवदधि तार है ॥
ॐ ह्रीं अग्रायणीयपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वीर्यानुवादमधिसप्ततिलक्षपादं द्रव्यस्वतत्त्वगुणपर्ययवादमर्थ्यं । तत्तत्स्वभावगतिवीर्यविधानदक्षं संपूजये निजगुणप्रतिपत्तिहेतोः ॥
भाषा–द्रव्य गुण पर्यय बल कथत है, लाख सत्तर पद यह धरत है । पूर्व है अनुवाद सु वीर्यका, जजूं पाठक यतिपद धारका ॥
ॐ ह्रीं वीर्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायपरष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

नास्त्यस्तिवादमधिषष्टिसुलक्षपादं सप्तोद्भंगरचनाप्रतिपत्तिमूलं । स्याद्वादनीतिभिरुदस्तविरोधमात्रं संपूजये जिनमतप्रसवैकहेतुम् ॥
भाषा–नास्ति अस्ति प्रवाद सुअंग है, साठ लख मध्यम पद संग है। सप्तभंग कथत जिन मार्गकर, जजूं पाठक मोह निवारकर॥
ॐ ह्रीं अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानप्रवादमभिकोटिपदं तु हीनमेकेन त्राणामितभानवित्रर्णनांकं । कुज्ञानरूपातिमिरौघहरं समर्चे यत्पाठकैः क्षणमिते समये विचार्यम् ॥
भाषा–ज्ञान आठ सुभेद प्रकाशता, एककम कोटीपद धारता । सतत ज्ञान प्रवाद विचारता, जजूं पाठक संशय टारता ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सत्यप्रवादमधिकं रसपादजातैः कोटीपदं निखिलसत्यविचारदक्षं। श्रोतृप्रवक्तृगुणभेदकथापि यत्र तं पूर्वमुख्यमभिवादय उक्तमंत्रैः ॥

भाषा—कथत सत्य असत्य सुभावको, कोटि अरु पदधारी पूर्वको। पठत सत्यप्रवाद जिनागमा, जजूं पाठक ज्ञाता आगमा ॥८१९॥

ॐ ह्रीं सत्यप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० स्वाहा । (१६२)

आत्मप्रवादरसविंशतिकोटिपादान जीवस्य कर्तृगुणभोक्तृगुणादिवादान् ।
शुद्धेतरप्रणयतत्कथनं तु येषु वंदामहे तदभिलाप्यगुणप्रवृत्त्यै ॥ ८२० ॥

भाषा—सकल जीव स्वरूप विचारता, कोटि पद छव्वीस सुधारता। पठत आत्मप्रवाद महानको, जजूं पाठक दुर्मति हानको ॥८२०॥

ॐ ह्रीं आत्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१६३)

कर्मप्रवादसमये विधुसंख्यकोटीसंख्यानशीतिलयुतान् वसुकर्मणां च ।
सत्त्वापकर्षणानिधत्तिमुखानुवादे पद्यान् स्थितानामितपूजनया धिनोमि ॥ ८२१ ॥

भाषा—कर्मबंध विधान वखानता, कोटि पद अस्सीलाव धारता। पठत कर्म प्रवाद सुध्यानसे, जजूं पाठक शुद्ध विधानसे ॥८२१॥

ॐ ह्रीं कर्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० । (१६४)

प्रत्याहृते श्चतुरशीतिसुलक्षपद्यान् निक्षेपसंस्थितिविधानकथप्रसिद्धान् ।
न्यासप्रमाणनयलक्षणसंयुजोऽर्चे यागार्चने श्रुतधरस्तवनोपयुक्तान् ॥ ८२२ ॥

भाषा—नयप्रमाण सुन्यास विचारता, लख पद चौरासी धारता । पूर्व प्रत्याहार जु नाम है, जजूं पाठक रमताराम है ॥८२२॥

ॐ ह्रीं प्रत्याहारपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० स्वाहा । (१६५)

विद्यानुवादभुवि चन्द्रसुकोटिकाष्टलक्षाः पदा यदधिमंत्रविधिप्रकारः ।
संरोहिणीप्रभृतिदीर्घविदां प्रसंगस्तं पूजये गुरुमुखांबुजकोशजातं ॥ ८२३ ॥

भाषा—मंत्र विद्याविधिको साधता, लक्ष दशकोटि पद धारता। पूर्व है अनुवाद सुज्ञानका, जजूं पाठक सन्मति दायका ॥८२३॥

ॐ ह्रीं विद्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० स्वाहा । (१६६)

कल्याणवादमननश्रुतमंगमुख्यं षड्विंशतिप्रमितकोटिपदं समर्चे ।
यत्रास्ति तीर्थंकरकामबलत्रिखंडिजन्मोत्सवादिविधिरुत्तमभावना च ॥ ६२४ ॥

भाषा—पुरुष त्रेशठ आदि महानका, कथत वृत्त सकल कल्याणका । कोटि छब्बिस पदको धारता, जजूं पाठक अघ सब टारता ॥
ॐ ह्रीं कल्याणवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० स्वाहा । (१६७)

प्राणप्रवादमभिवादयतां नराणां विश्वप्रमाणमितकोटिपदाभियुक्तं ।
काऽऽर्तिर्भवेन्निरयघोरभवस्य चायुर्वेदादिसुस्वरभृतं परिपूजयामि ॥ ६२५ ॥

भाषा—कथत भेद सुवैद्यक शास्त्रका, कोटि तेरह पदका धारका । पूर्व नाम सुप्राण प्रवाद है, जजूं पाठक सुर नत पाद है ॥१६८॥
ॐ ह्रीं प्राणप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० । (१६८)

क्रियाविशालं नवकोटिपदैर्युक्तं सुसंगीतकलाविशिष्टं । छन्दोगणाद्याननुभावयंतमध्यापकानत्र विधौ यजामि ॥ ६२६ ॥

भाषा—कथत छंदकला संगीतको, कोटि नव पद मध्यम रीतको । पूर्व नाम सु क्रिया विशाल है, जजूं पाठक दीनदयाल है ॥६२६॥
ॐ ह्रीं क्रियाविशालपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० । (१६९)

त्रैलोक्यबिंदौ शिवतत्वचिंता सार्द्धा सुकोटी द्विदशप्रमाणाः । पदास्त्रिलोकीस्थितिसद्विधानमत्रार्चये भ्रांतिविनाशनाय ॥६२७॥

भाषा—तीन लोक विधान विचारता, कोटि अर्द्ध स द्वादश धारता । पूर्वबिंदु त्रिलोक विशाल है, जजूं पाठक करत निहाल है ६२७॥
ॐ ह्रीं त्रैलोक्यबिंदुपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० । (१७०)

इत्थं श्रीश्रुतदेवतां जिनवरांभोध्युद्गतामृद्धिभृन्मुख्यैर्ग्रंथनिबंधनाक्षरकृतामालोकयंतीं त्रयं ।
लोकानां तदवाप्तिपाठनधियोपाध्यायशुद्धात्मनः कृत्वाराधनसद्विधिं धृतमहार्घेणार्चये भक्तितः ॥६२८॥

भाषा—दोहा—अंग इकादश पूर्वदश, चार सुज्ञायक साध । जजूं गुरूके चरण दो, यजन सु अव्याबाध ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठोत्सवसद्विधानेमुख्यपूजार्हसप्तमवलयोन्मुद्रितद्वादशांगश्रुतदेवताभ्यस्तदाराधकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यश्च पूर्णार्घं नि० ।

अब एक नारियल सातवें वलयमें मंडलके किनारे रक्खे । आगे आठवें वलयमें स्थापित साधु परमेष्ठीके २८ गुणोंकी पूजा करनी ।

जीवाजीवद्विरधिकरणव्याप्तदोषव्युदासात् सूक्ष्मस्थूलव्यवहृतिहतेः सर्वथात्यागभावात् ।

मूर्धन्यासं सकलविरतिं संदधानान्मुनींद्रा–नाहिंसाख्यव्रतपरिवृतान्न पूजये भावशुद्ध्या ॥ ६२९ ॥
भाषा–नाराचछंद–तजे सु रागद्वेष भाव शुद्ध भाव धारते, परम स्वरूप आपका समाधिसे विचारते।
करें दया सुप्राणि जंतु चर अचर बचावते, जजों यती महान प्राणिरक्ष व्रत निभावते ॥
ॐ ह्री अहिंसामहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
मिथ्याभाषासकलविगमात् प्राप्तवाक्शुद्ध्युपेतान् स्याद्वादेशान् विविधसनयैर्धर्ममार्गप्रकाशम्।
संकुर्वाणानतिचरणधीदूरगानात्मसंवित्–सम्राज्यस्तांश्चरुफलगणैःपूजयाम्यध्वरेऽस्मिन् ॥ ६३० ॥
भाषा–असत्य सर्व त्याग वाक् शुद्धता प्रचारते, जिनागमानुकूल तत्त्व सत्त्य सत्त्य धारते।
अनेक नय प्रकारसे वचन विरोध टारते, जजों यती महान सत्यव्रत सदा सम्हारते ॥ ६३० ॥
ॐ ह्री अनृतपरित्यागमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७२)
आकर्तव्ये (ध्वनि ?) शिवपदगृहे रंतुकामाः पृथक्त्वं देहात्मीयं करगतमिवाध्यक्षमादर्शयंतः।
प्राणग्राहं तृणमपि परैरप्रदत्तं सजंत–स्तापंतां मां चरणवरिवस्याप्रशक्तं मुनींद्राः ॥ ६३१ ॥
भाषा–अचौर्यव्रत महान धार शौच भाव भावते, न लेत हैं अदत्त तृण जलादि रागभावते।
सुतृप्त हैं महान आत्म जन्य सौख्य पावते, जजों यती सदा सु ज्ञान ध्यान मन रमावते ॥ ६३१ ॥
ॐ ह्रीं अचौर्यमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७३)
तिर्यग्मर्त्यामरगतिगता याः स्त्रियः काष्ठाचित्रा–लेप्याश्मान्याश्चिदचिदुदधिस्थास्तवस्तास्त्रियोगं।
स्वप्ने जाग्रद्दिशि कतिचिदप्यर्तिमुद्राः स्मरंतो (?) ये वै शीलं परिदृढमगुस्तान्यजेऽहं तिशुद्ध्या ॥ ६३२ ॥
भाषा–सु ब्रह्मचर्य व्रत महान धार शील पालते, न काष्ठमय कलत्र देव भामनी विचारते।
मनुष्यणी सु पशुतिया कभी न मन रमावते, जजों यती न स्वप्नमाहिं शीलको गमावते ॥
ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७४)
रागद्वेषाद्यभिकृतपरावृत्तदोषांतरंगा ये बाह्या अप्युदितदशधा ते ह्यकिंचन्यभावात

नापि स्थैर्यं दधुरुरुगुणाग्राहिणी स्वांतमध्ये ग्रंथा येषां चरणधरणि पूजयाम्यादरेण ॥ ६३३ ॥

भाषा—न रागद्वेष आदि अंतरंग संग धारते, न क्षेत्र आदि बाह्य संग रंक भी सम्हारते ।
धरें सुसाम्यभाव आप पर पृथक् विचारते, जजों यती ममत्त्व हीन साम्यता प्रचारते ॥ ६३३ ॥

ॐ ह्रीं परिग्रहत्यागव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७५)

ईर्यापथास्तिमितचकितस्तब्धदृष्टिप्रयोगा—भावाच्छुद्धोयुगमितधरालोकनेनापि येषां ।
वर्षाकालावनियवसभूजंतुजातिं विहाय तीर्थश्रेयोगुरुनतिवशाद् गच्छतोऽर्चे यतींद्रान् ॥ ६३४ ॥

भाषा—सुचार हाथ भूमि अग्र देख पाय धारते, न जीवघात होय यत्न सार मन विचारते ।
सु चार मास दृष्टि काल एक थल विराजते, जजूं यती सु सन्मती जो ईर्या सम्हारते ॥

ॐ ह्रीं ईर्यासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७६)

लोभक्रोधाद्यरिगणजयाद् भीतिमोहापमर्दा- निःशल्याद्यान् जिनवचिसुधाकंठपानप्रपुष्टान् ।
याथातथ्यं श्रुतनिगमयोर्जानतःप्रश्नकर्तु—र्वाभिप्रायं वचनसमितिधारकान् पूजयामि ॥ ६३५ ॥

भाषा—न क्रोध लोभ हास्य भय कराय साम्य धारते, वचन सुमिष्ट इष्ट मित प्रमाण ही निकारते ।
यथार्थ शास्त्र ज्ञायका सुधा सु आत्म पीवते, जजूं यतीश द्रव्य आठ तत्त्व माहिं जीवते ॥ ६३५ ॥

ॐ ह्रीं भाषासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घंनिर्वपामीति स्वाहा । (१७७)

पट्चत्वारिंशदतिचरणाम्रेडितत्यागयोगात् दोषा चातुर्दशमलभुवां हापनात् कायहानिं ।
अप्यासीनाममृतधिषणाभ्यासतोग्रे कृतार्था (?) मन्वानास्तेऽशनाविरतयः पांतु पादाश्रितं मा ॥ ६३६ ॥

भाषा—महान दोष छ्यालिसों सुटार ग्रास लेत हैं, पड़े जु अन्तराय तुर्त ग्रास त्याग देत हैं ।
मिले जु भोग पुण्यसे उसीमें सब्र धारने, जजूं यतीश काम जीत रागद्वेष टारते ॥

ॐ ह्रीं एषणासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७८)

वस्तुग्राहं त्व परिणामादाननिक्षेपयोगा (?)—भावः पूर्वं दृढपरिचयाद्विद्यते शुद्ध एव ।

पिच्छाकुंडीग्रहणमपि ये रक्षणाचारहेतोः कुर्वतोऽप्यत्र निहितदृशस्तान्यजे सत्समित्यै ॥ ६३७ ॥

भाषा—धरें उठाय वस्तु देख शोध खूब लेत हैं, न जंतु कोय कष्ट पाय इम विचार लेत हैं।

अतः सु मोर पिच्छिका सुमार्जिका सुधारते, जजूं यती दया निधान जीव दुःख टारते ॥

ॐ ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७९)

व्युत्सर्गाख्यां समितिमघृणां नासिकानेत्रपायू–पस्थस्थानान्मलत्दतिविधौ सूत्रमार्गानुकूलं ।

रक्षंतोऽन्यानपि सदयतां पोषयंतोऽप्युदग्रां, धन्या दांतेंद्रियपारकरा आददंत्वर्चनां मे ॥ ६३८ ॥

भाषा—धरें जु अंग नेत्र नासिकादि मल सु देखके, न होय जंतु घात थान शुद्धता सुपेखके।

परम दया विचार सार व्युत्सर्ग साधते, जजूं यतीश चाह दाह शांति पय बुझावते ॥

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गसमितिपालकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८०)

उष्णः शीतो मृदुलकठिनौ स्निग्धरूक्षौ गुरुर्वा, स्तोकः स्पर्शोऽष्टतय उदितस्पर्शनात् सप्रमादं ।

रागद्वेषावपि न दधतश्चेतनाचेतनेषु, किं च स्त्रीणां वपुषि विषये तान्यजेहं मुनींद्रान् ॥ ६३९ ॥

भाषा—न उष्ण शीत मृदु कठिन गुरु लघु सपर्शते, न चीकने रूक्ष वस्तुसे मिलाप पावते।

न रागद्वेषको करें समान भाव धारते, जजूं यती दमे सपर्श ज्ञान भाव सारते ॥

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८१)

मिष्टस्तिक्तो लवणकटुकाम्ल एवं रसज्ञाग्राही प्रोक्तो रसनविषयस्तत्र रागक्रुधोर्वा ।

सागात्सर्वप्रकृतिनियतेः पुद्गलस्य स्वभावं, संजानंतो मुनिपरिवृढाः पांतु मामर्चितास्ते ॥ ६४० ॥

भाषा—न मिष्ट तिक्त लौण कटुक आतम स्वाद चाहते, करत न रागद्वेष शौच भावको निवाहते।

सुजानके सुभाव पुद्गलादि साम्य धारते, जजूं यती सदा जु चाह दाहको निवारते ॥

ॐ ह्रीं रसनेंद्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८२)

वातद्वेषस्तुहिनविकृतेरुष्णताद्वेष ऊष्म्य–व्यापांगस्य प्रकृतिनियमात् सुप्रसिद्धोऽ [illegible] :

साम्यस्वामी ह्यशुभशुभगद्वैधगंधौ विजानन्, वस्तुग्राहं भजति समतां तं यतींद्रं यजेऽहं ॥ ६४१ ॥
भाषा—जगत पदार्थ पुद्गलादि आत्म गुण न त्यागते, सुगन्ध गन्ध दुःखदाय साधु जहां पावते ।
न रागद्वेष धार घ्राणका विषय निवारते, जजूं यतीश एक रूप शांतता प्रचारते ॥
ॐ ह्रीं घ्राणेंद्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८३)
यद्यद्दृश्यं नयनविषये तेषु तेष्वात्मना वै, जन्माग्राहि त्रिजगदभितश्चक्रमावर्तपातात् ।
कृष्णे पीते हरिदरुणयोरर्जुने पौद्गलेक्षणोर्व्यापारोऽसन्निति परिणतः पूज्यतेऽसौ मयात्र ॥ ६४२ ॥
भाषा—सफेद लाल कृष्ण पीत नील रंग देखते, स्वरूप ओ कुरूप देख वस्तु रूप पेखते ।
करें न रागद्वेष साम्य भावको सम्हारते, जजूं यती महान चक्षु रागको निवारते ॥
ॐ ह्रीं चक्षुरिंद्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८४)
एकः स्तोत्रं रचयितु मुदा गद्यपद्यानवद्यैर्वाक्यैरन्यः श्वपच जननी तेऽद्य भार्या ममेति ।
श्रुत्वा शब्दं श्रवसि जडतामेत्य तोषं न कोपं, धत्ते शक्तोऽप्यमरमहितस्तस्य पूजां विदध्मः ॥ ६४३ ॥
भाषा—करे श्रुती बनाय एक गद्य पद्य सारते, कहे असभ्य बात एक क्रूरता प्रसारते ।
न रोष तोष धारते पदार्थको विचारते, जजूं यती महान कर्ण रागद्वेष टारते ॥
ॐ ह्रीं श्रोत्रेंद्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८५)
साम्यं यस्य स्फुरति हृदये निर्व्यलीकं कदाचि, दायातेऽपि ध्रुवमशुभसमयात्वद्धपाकावतारे (?)
घोरापीडासदासि वपुषि स्पृड्मूर्तिं संदधानो, बाहुभ्यामंबुधिमिव तरसेष साधुर्मयार्च्यः ॥ ६४४ ॥
भाषा—धरें महान शांतता न रागद्वेष भावते, चलें नहीं सुयोगसे विराट कष्ट आवते ।
तरें समुद्र कर्मको जहाज ध्यान खेवते, यजूं यती स्वरूप मांहि बैठ तत्त्व वेवते ॥
ॐ ह्रीं सामायिकावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८६)
स्मारं स्मारं प्रकृतिमहिमानं तु पंचेश्वराणां, प्रसक्षं वा मननविषयं वंदमानस्त्रिकालं ।

कर्मव्यूहक्षपणमसमं चर्करीसात्मवंतं, शुद्धस्फारं गमयति शिवं तं महांतं यजामि ॥ ६४५ ॥

भाषा-करें त्रिकाल वन्दना मुपूज्य सिद्ध साधुको, विचार वार वार आत्म शुद्ध गुण स्वभावको ।
करें जु नाश कर्म जो कि मोक्षमार्ग रोकते, यजूं यती महान माथ नाय नाय ढोकते ॥

ॐ ह्रीं वंदनावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८७)

चेतोरक्षःप्रसरणनिराकर्मणो तीर्थनाथ-पादाब्जेषु प्रतिगुणगणे दत्तचित्तो मुनींद्रः ।
तेषां स्तोत्रं पठति परमानंदमात्मानुभावं, किं वा शुद्धं सृजति स मया पूज्यते तद्गुणाप्त्यै ॥ ६४६ ॥

भाषा-करें सुगान गुण अपार तीर्थनाथ देवके, मन पिशाचको विडार स्वात्मसार सेवके ।
बनाय शुद्ध भाव माल आत्मकंठ डारते, जजूं यती महान कर्म आठ चूर डारते ॥

ॐ ह्रीं स्तवनावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८८)

दोषाभावोऽप्यथ निशिदिवाहारनीहारकृत्ये ज्ञाताज्ञातप्रमदवशतो जंतुरभ्यर्दितः स्यात् ।
नित्यं तस्य प्रतिभयलवं व्युत्सृजानः स्वयं यो दोषव्रातैर्नहि जुडति तं धीरवीरं यजामि ॥ ६४७ ॥

भाषा-करें विचार दोष होय नित्य कार्य साधते, क्षमा कराय सर्व जंतु जाति कष्ट पावते ।
अलोचना गुरुसे स्वःोपको मिटावते, जजूं यती महान ज्ञान अम्बुमें नहावते ॥

ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८९)

नित्यं चेतःकपिरचलतां नैति तद्यंत्रणार्थं स्वाध्यायाख्यैः प्रगुणनिगडैर्बंधमानीय भद्रे ।
मार्गे युंज्याच्छ्रुतपरिणतात्मीयमोदावधानो वृत्तिं शुद्धां श्रयति स महानर्घ्यतेऽनर्घ्यबुद्धिः ॥ ६४८ ॥

भाषा-रखें सुत्रांय मन कपी महान है जुनट खदा, बनाय सांकलान शास्त्र पाठमें जुटावता ।
धरें स्वभाव शुद्ध नित्य आत्मको रमावते, जजूं यती उदय महान ज्ञानसूर्य पावते ॥

ॐ ह्रीं स्वाध्यायावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९०)

आमे भांडे कुथितकुणपे यादृशी नश्यहेय-बुद्धिः काये सततनियता वीतरागेश्वराणां ।

व्यक्तीकर्तुं शिखरिविपिनांतस्तनोर्निर्ममत्वे कायोत्सर्गं रचयति मुनिः सोऽत्रपूजां प्रयातु ॥ ६५९ ॥

भाषा—तजैं ममत्त्व कायका इसे अनित्य जानते, जु कांच खण्ड मृत्तिका सु पिण्ड सम प्रमाणते ।
खड़े वनी गुफा महा स्वध्यान सार धारते, जजूं यती महान मोह रागद्वेष टारते ॥

ॐ ह्रीं कायोत्सर्गावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९१)

पूर्वं हर्म्ये माणिगणाचितानेकपर्यंकशायी सोऽयं घोरस्वनमृगपतित्रस्तनागेंद्रकारे ।
भूग्रग्रावोपरितनभुवि स्वप्नवत्किंचिदात्त—निद्रो यस्य स्मरणमपि संहंति पापं स मेऽर्च्यः ॥ ६६० ॥

भाषा—करैं शयन सु भूमिमें कठोर कंकड़ानिकी, कभी नहीं चितारते पलंग खाट पालकी ।
मुहूर्त एक भी नहीं गमावते कुनींदमें, जजूं यतीश सोवते सु आतम तत्त्व नींदमें ॥

ॐ ह्रीं भूशयननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९२)

ग्रीष्मे रेणूत्करविकरणव्यग्रवातप्रसर्पद्—धूलिपुंजे मलिनवपुषि त्यक्तसंस्कारवांछः ।
अस्नानत्वं विजनसरसीसंनिधानेऽपि येषां तेषां पादांबुजयुगमहं पारिजातैरुदर्चे ॥ ६६१ ॥

भाषा—करैं नहीं नहान सर्व राग देहका हते, पसेव ग्रीष्ममें पड़े न शीत अम्बु चाहते ।
वनी मवल पवित्र और मंत्र शुद्ध धारते, जजूं यतीश शुद्ध पाद कर्म मैल टारते ॥

ॐ ह्रीं अस्नाननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९३)

वाल्कं फालं वसनमुपसंव्यानकोपीनखंड—कादाचित्केऽप्युपधिसमये नैव वांछंस्तपस्वी ।
दैगंबर्यं परमकुशलं जातरूपप्रबुद्धं, संधार्यैवं नयति परमानंदधात्रीं तमर्चे ॥ ६६२ ॥

भाषा—करैं नहीं कबूल छाल वस्त्र खण्ड धोवती, दिगानि वस्त्र धार लाज संग त्याग रोवती ।
वने पवित्र अंग शुद्ध वालसे विचार हैं, जजूं यतीश काम जीत शील खड्ग धार हैं ॥

ॐ ह्रीं सर्वथावस्त्रत्यागनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९४)

क्षौरं शस्त्रोज्झनिपराधीनतापात्रमेव (?) जूडा मूर्धन्यतुलकृमिदा भूतशीर्षाकृतिस्था ।

दोषायैवेति विहितकचोत्पाटनो मुष्टिमात्रात्, साक्षान्मोक्षाध्वनिधृतिपदः पूज्यते श्रौतकर्मा ॥ ६९३ ॥
भाषा—करैं सु केशलोंच मुष्टि मुष्टि धैर्य भावते, लखाय जन्म जन्तुका स्व केश ना बढ़ावते।
ममत्व देहसे नही न शस्त्रसे नुचावते, जजूं यती स्वतन्त्रता विहार चित रमावते ॥
ॐ ह्रीं कृतकेशलोचनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१९५)
एकद्वित्रिप्रभृतिदिवसप्रोषधादिप्रकर्तु–रास्यम्लानिर्भवति नितरां दंतशुद्धिं विनाऽत्र।
दौर्गंध्यांधुं वपुषमकृतस्थैर्यमापन्निदानं, जानन् योगं मलिनयति नो तं समर्चे मुनींद्रम् ॥ ६९४ ॥
भाषा—करैं न दन्तवन कभी तजा सिगार अंगका, लहैं स्व खानपान एकवार साध्य अंगका।
तथापि दंत कणिका महान ज्योति त्यागती, जजूं यतीश शुद्धता अशुद्धता निवारती ॥
ॐ ह्री दंतधावनवर्जननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१९६)
यांचादैन्योदरविघटनादींगितादीनि येषां, निर्मूलंतो मनसि च मनालाभलाभांतराये। (?)
तुल्या दृष्टिस्तदपि सकृदेकाह्निभुक्तिप्रमाणं, तेषां धर्म्यावगमसुगमत्वाय पादौ यजामि ॥ ६९५ ॥
भाषा—धरैं न चाह भोग रोगके समान जानते, शरीर रक्ष काज एक वार भक्त ठानते।
सकल दिवस सु ध्यान शास्त्र पांठमें वितावते, जजूं यती अलाभ अन्न लाभ सा निभावते ॥
ॐ ह्रीं एकभक्तनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१९७)
यावदेहं स्थितिधृतिधराशक्तिमंगीकरोति, यावज्जंघावलमचलतां नोज्जिहीते मुनित्वे।
यावत्स्थाप्ये तदपगमने भोजनत्याग एवं, सन्यासस्य ग्रहणमिति यद् यस्य नीतिस्तमर्चे ॥ ६९६ ॥
भाषा—खड़े रहैं सुलेय अन्न देह शक्ति देखते, न होय वल विहार तब मरण समाधि पेखते।
करैं सु आत्मध्यान भी खड़े खड़े पहाड़ पर, जजूं यती विराजते निजानुभव चटान पर ॥
ॐ ह्री आस्थितभोजननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१९८)
अष्टाविंशतिसद्गुणग्रथितसदूरत्नयाभूषणं, शीलेशित्वतनुत्ररक्षितव. : कामेः ३

आर्हंसादिपदस्य बीजम- घं येषां परं पावनं, साधूनां समुदायमुत्तमकुलालंकारमाशास्महे ॥ ६५७ ॥

भाषा—दोहा—अठविंशति गुण धर यती, शील कवच सरदार । रत्नत्रय भूषण धरें, टारें कर्म प्रहार ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठोत्सवे मुख्यपूजार्हं अष्टमवलयोन्मुद्रितसाधुपरमेष्ठिभ्यस्तन्मूलगुणग्रामेभ्यश्च पूर्णाऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूर्णार्घ देकर एक नारियल आठवें वलयपर या मंडलके किनारे रक्खे ।

अब नौमें वलयमें स्थित ४८ ऋद्धिधारी मुनीश्वरोंकी पूजा करनी ।

त्रैलोक्यवर्तिसकलं गुणपर्ययाढ्यं यस्मिन्करामलकवत् प्रतिवस्तुजातं ।

आभासते त्रिसमयप्रतिबद्धमर्चे कैवल्यभानुमाधिपं प्रणिपत्य मूर्ध्ना ॥ ६५८ ॥

भाषा—दोहा—लोकालोक प्रकाशकर, केवलज्ञान विशाल । जो धारें तिन चरणको, पूजूं नम निज भाल ॥

ॐ ह्रीं सकललोकालोकप्रकाशकनिरावरणकैवल्यलब्धिधारकेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९९)

वक्रर्जुभावघटितापरचित्तवर्तिभावावभासनपरं विपुलर्जुभेदात् । ज्ञानं मनोऽधिगतपर्ययमस्य जातं तं पूजयामि जलचंदनपुष्पदीपैः॥६

भाषा—वक्र सरल पर चित्त गत, मनपर्यय जानेय । ऋजू विपुलमति भेद धर, पूजूं साधु सुध्येय ॥

ॐ ह्रीं ऋजुमतिविपुलमतिमनःपर्ययधारकेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२००)

देशावधिं च परमावधिमेव सर्वावध्यादिभेदमतुलावमदेशपृक्तं । ज्ञानं निरूप्य तदवाप्तियुतं मुनींद्रं संपूज्य चित्तभवसंशयमाहरामि ॥

भाषा—देश परम सर्वा अवधि, क्षेत्र काल मर्याद । द्रव्य भावको जानता, धारक पूजूं साध ॥

ॐ ह्रीं अवधिधारकेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२०१)

अन्योपदेशमनपेक्ष्य यथा सुकोष्ठे बीजानि तद्गृहपतिर्विनियुज्यमानः ।

ग्रंथार्थबीजबहुलान्यनतिक्रमाणि संधारयन्नृषिवरोऽर्च्यत उवस्थमंत्रैः (?) ॥ ६६१ ॥

भाषा—कोष्ठ धरे बीजानिको, जानत जिम क्रमवार । तिम जानत ग्रंथार्थको पूजूं ऋषिगुण सार ॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्ध्यर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२०२)

एकं पदार्थमुपगृह्य मुखांतमध्यस्थानेषु तच्छ्रुतसमस्तपदग्रहोक्तिम् ।

पादानुसारिधिषणाद्यभियोगभाजां संपूज्य तन्मतिधरं तु समर्चयामि ॥ ६६२ ॥

भाषा—ग्रंथ एक पद ग्रह कहीं, जानत सब पद भाव। बुद्धि पाद अनुसारि धर, जजूं साधु धर भाव ॥

ॐ ह्रीं पादानुसारीबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०३)

कालादियोगमनुसृत्य यथाक्षमत्र कोटिप्रदं भवति बीजमनिंद्रियादि।

वीर्यांतरायशमनक्षयहेत्वनेकपादावधारणमतीन् परिपूजयामि ॥ ६६३ ॥

भाषा—एक बीज पद जानके, कोटिक पद जानेय। बीज बुद्धि धारी मुनी, पूजूं द्रव्य सुलेय ॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०४)

ये चक्रिसैन्यगजवाजिखरोष्ट्रमर्त्यनानाविधस्वनगणं युगपत् पृथक्त्वात्।

गृह्णंति कर्णपरिणामवशान्मुनींद्रास्तानर्घयामि क्रतुभागसमर्पणेन ॥ ६६४ ॥

भाषा—चक्री सेना नर पशू, नाना शब्द करात। पृथक् पृथक् युगपत सुने, पूजूं यति भय जात ॥

ॐ ह्रीं सभिन्नश्रोत्रऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०५)

दूरस्थितान्यपि सुमेरुविधुप्रभास्वत्सन्मण्डलानि करपादनखांगुलीभिः।

संस्पर्शशक्तिसहितर्द्धिवशात् स्पृशंतस्तान् शक्तियुक्तपरिणामगतान् यजामि ॥ ६६५ ॥

भाषा—गिरि सुमेरु रविचंद्रको, कर पदसे छू जात। शक्ति महत धारी यती, पूजूं पाप नशात ॥

ॐ ह्रीं दूरस्पर्शशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०६)

नास्वादयंति न च तत्सदने समीहा तत्रापि शक्तिरमितेति रसग्रहादौ।

ऋद्धिप्रवृद्धिसहितात्मगुणान् सुदूरस्वादावभासनपरान् गणपान् यजामि ॥ ६६६ ॥

भाषा- दूरक्षेत्र मिष्टान्न फल, स्वाद लेन बल धार। ना वांछा रस लेनकी, जजूं साधु गणधार ॥

ॐ ह्रीं दूरास्वादनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०७)

उत्कृष्टनासिकहृषीकगतिं विहाय तत्स्थोर्ध्वगंधसमवायनशक्तियुक्तान्।

उत्कृष्टभागपरिणामविधौ सुदूरगंधावभासनमतौ नियतान् यजामि ॥ ६६७ ॥

भाषा—घ्राणेंद्रिय मर्यादसे, अधिक क्षेत्र गंधान। जान सकत जो साधु हैं, पूजूं ध्यान कृपान ॥

ॐ ह्रीं दूरघ्राणविषयग्राहकशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०८)

निर्णीतपूर्णनयनोत्थहृषीकवार्ता चक्रेश्वरस्य नियता तदधिक्यभावात्।

दूरावलोकनजशक्तियुतान् यजामि देवेंद्रचक्रधरणींद्रसमर्चितांह्रिं ॥ ६६८ ॥

भाषा—नेत्रेंद्रियका विषय बल, जो चक्री जानन्त। तातें अधिक सुजानते, जजूं साधु बलवंत ॥

ॐ ह्रीं दूरावलोकनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०९)

श्रोत्रेंद्रियस्य नवयोजनशक्तिरिष्टा नातः परं तदधिकावनिसंस्थशब्दान्।

श्रोतुं प्रशक्तिरुदयत्यतिशायिनी च येषां तु पादजलजाश्रयणं करोमि ॥ ६६९ ॥

भाषा—कर्णेंद्रिय नवयोजना, शब्द सुनत चक्रीश। तातें अधिक श्रुशक्तिधर, पूजूं चरण मुनीश ॥

ॐ ह्रीं दूरश्रवणशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१०)

अभ्यासयोगविहृतावपि यन्मुहूर्तमात्रेण पाठयति दिग्भ्रमपूर्वसार्थं।

शब्देन चार्थपरिभावनया श्रुतं तच्छक्तिप्रभूनाधियजामि मखस्य सिद्धचै ॥ ६७० ॥

भाषा—विन अभ्यास मुहूर्तमें, पढ़ जानत दश पूर्व। अर्थ भाव सब जानते, पूजूं यती अपूर्व ॥

ॐ ह्रीं दशपूर्वित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२११)

एवं चतुर्दशसुपूर्वगतश्रुतार्थं शब्देन ये ह्यमितशक्तिमुदाहरंति।

तानत्र शास्त्रपरिलब्धिविधानभूतिसंपत्तयेऽहमधुनार्हणया धिनोमि ॥ ६७१ ॥

भाषा—चौदह पूर्व मुहूर्तमें, पढ़ जानत अविकार। भाव अर्थ समझें सभी, पूजूं साधु चितार ॥

ॐ ह्रीं चतुर्दशपूर्वित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१२)

अन्योपदेशविरहेऽपि सुसंयमस्य चारित्रकोटिविधयः स्वयमुद्भवंति।

प्रत्येकबुद्धमतयः खलु ते प्रशस्यास्तेषां मनाक् स्मरणतो मम पापनाशः ॥ ६७२ ॥

भाषा—विन उपदेश सुज्ञान लहि, सयम विधि चालन्त । बुद्धि अमल प्रत्येक धर, पूजूं साधु महन्त ॥

ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्धित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१३)

न्यायागमस्मृतिपुराणपठिसभावेऽप्याविर्भवंति परवादविदारणोद्धाः ।

वादित्वबुद्धय इति श्रमणाः स्वधर्मं निर्वाहयंति समये खलु तान् यजामि ॥ ६७३ ॥

भाषा—न्याय शास्त्र आगम बहु, पढ़े विना जानन्त । परवादी जीतें सकल, पूजूं साधु महन्त ॥

ॐ ह्रीं वादित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१४)

जंघाग्निहेतिकुसुमच्छदतंतुबीजश्रेणीसमाजगमना इति चारणांकाः ।

ऋद्धिक्रियापरिणता मुनयः स्वशक्तिसंभाविताश्त इह पूजनमालभंतु ॥ ६७४ ॥

भाषा—अग्नि पुष्प तंतू चलें, जंघा श्रेणी चाल । चारण ऋद्धि महान धर, पूजूं साधु विशाल ॥

ॐ ह्रीं जलजंघातंतुपुष्पपत्रबीजश्रेणिवह्न्यादिनिमित्ताश्रयचारणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१५)

आकाशयाननिपुणा जिनमंदिरेषु मेर्वाद्यकृत्रिमधरासु जिनेशचैत्यान् ।

वंदंत उत्तमजनानुपदेशयोगानुद्धारयंति चरणौ तु नमामि तेषां ॥ ६७५ ॥

भाषा—नभमें उड़कर जात हैं, मेरु आदि शुभ थान । जिन वन्दत भविबोधते, जजूं साधु सुख खान ।

ॐ ह्रीं आकाशगमनशक्तिचारणर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१६)

ऋद्धिः सुविक्रियगता बहुलप्रकारा तत्र द्विधाविभजनेष्वणिमादिसिद्धिः ।

मुख्यास्ति तत्परिचयप्रतिपत्तिमन्त्रान् यायज्मि तत्कृतविकारविवर्जितांश्च ॥ ६७६ ॥

भाषा—अणिमा महिमा आदि बहु, भेद विक्रिया रिद्धि । धरैं करैं न विकारता, जजूं यती समृद्धि ॥

ॐ ह्रीं अणिमामहिमालघिमागरिमाप्राप्तिप्राकाम्यवशित्वेशित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१७)

अन्तर्दधिप्रमुखकामविकीर्णशक्तिर्येषां स्वयं तपस उद्भवति प्रकृष्टा ।

तद्विक्रियाद्वितयभेदमुपागतानां पादप्रधावनविधिर्मम पातु पाणिं ॥ ६७७ ॥

भाषा–अंतर्दधि कामेच्छ बहु, ऋद्धि विक्रिया जान। तप प्रभाव उपजे स्वयं, जजूं साधु अघहान ॥

ॐ ह्रीं विक्रियायां अंतर्धानादिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१८)

षष्ठाष्टमद्विदशपक्षकमासमात्रानुष्ठेयभुक्तिपरिहारमुदीर्य योगं।

आमृत्युमुग्रतपसा ह्यनिवर्तकास्ते पांत्वर्चनाविधिमिमं परिलंभयंतु ॥ ६७८ ॥

भाषा–मास पक्ष दो चार दिन, करत रहें उपवास। आमरणं तप उग्र धर, जजूं साधु गुणवास ॥

ॐ ह्रीं उग्रतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१९)

घोरोपवासकरणेऽपि बलिष्ठयोगान् दौर्गंध्यविच्युतमुखान् महदीप्तदेहान्।

पद्मोत्पलादिसुरभिश्वसनान्मुनींद्रान् यायज्मि दीप्ततपसो हरिचन्दनेन ॥ ६७९ ॥

भाषा–घोर कठिन उपवास धर, दीप्तमई तन धार। सुरभि श्वास दुर्गंधविन, जजूं यती भव पार।

ॐ ह्रीं दीप्तऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२०)

वैश्वानरौघपतितांबुकणेन तुल्यमाहारमाशु विलयं ननु याति येषां।

विण्मूत्रभावपरिणाममुदेति नो वा ते सन्तु तप्ततपसो मम सद्विभूत्यै ॥ ६८० ॥

भाषा–अग्नि माहिं जल सम विलय, भोजन पय होजाय। मल कफ मूत्र न परिणमें, जजूं यती उमगाय ॥

ॐ ह्रीं तप्ततपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२१)

हारावलीप्रभृतिघोरतपोऽभियुक्ताः कर्मप्रमाथनधियो यत उत्सहंते।

ग्रामाटवीष्वशनमप्यतिपातयंति ते सन्तु कार्मणतृणाग्निचयाः प्रशांत्यै ॥ ६८१ ॥

भाषा–मुक्तावली महान तप, कर्मन नाशन हेतु। करत रहें उत्साहसे, जजूं साधु सुख हेतु ॥

ॐ ह्रीं महातपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२२)

कासज्वरादिविविधोग्ररुजादिसत्त्वेप्वप्यच्युतानशनकायदमान् श्मशाने।

भीमादिगह्वरदरीतटिनीषु दुष्टसंक्लृप्तबाधनसहानहमर्चयामि ॥ ६८२ ॥

भाषा—कास श्वास ज्वर गृसित हो, अनशन तप गिरि साध। दुष्टन कृत उपसर्ग सह, पूजूं साधु अबाध ॥

ॐ ह्रीं घोरतपऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२३)

पूर्वोदितासु विधियोगपरंपरासु स्फारीकृतोत्तरगुणेषु विकाशवत्सु।

येषां पराक्रमहतिर्न भवेत्तमर्चे पादस्थलीमिह सुघोरपराक्रमाणां ॥ ६८३ ॥

भाषा—घोर घोर तप करत भी, होत न बलसे हीन। उत्तर गुण विकसित करें, जजूं साधु निज लीन ॥

ॐ ह्रीं घोरपराक्रमऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२४)

दुःस्वप्नदुर्गतिसुदुर्मतिदौर्मनस्त्वमुख्याः क्रिया व्रतविघातकृते प्रशस्ताः।

तासां तपोविलसनेन समूलकाषं घातोऽस्ति ने सुरसमर्चितशीलपूज्याः ॥ ६८४ ॥

भाषा—दुष्ट स्वप्न दुर्मति सकल, रहित शील गुण धार, परमब्रह्म अनुभव करें, जजूं साधु अविकार ॥

ॐ ह्रीं घोरब्रह्मचर्यगुणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२५)

अन्तर्मुहूर्त्तसमये सकलश्रुतार्थसंचितनेऽपि पुनरुद्भटसूत्रपाठाः।

स्वच्छा मनोऽभिलषिता रुचिरस्ति येषां कुर्यान्मनोबलिन उत्तममांतरं मे ॥ ६८५ ॥

भाषा—सकल शास्त्र चिन्तन करें, एक मुहूर्त मंझार। घटत न रुचि मन वीरता, जजूं यती भवतार ॥

ॐ ह्रीं मनोबलऋद्धिप्राप्तेयोऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२६)

जिह्वाश्रुतावरणवीर्यशमक्षयाप्तांतर्मुहूर्त्तसमयेषु कृतश्रुतार्थाः।

प्रश्नोत्तरोत्तरचयैरपि शुद्धकण्ठदेशाः सुवाक्यबलिनो मम पांतु यज्ञं ॥ ६८६ ॥

भाषा—सकल शास्त्र पढ़ जात हैं, एक महूर्त्त मंझार। प्रश्नोत्तर कर कंठ शुचि, धरत यजूं हितकार ॥

ॐ ह्रीं बचनबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२७)

मेर्वादिपर्वतगणोद्धरणेषु शक्ता रक्षःपिशाचशतकोटिबलाधिवीर्याः।

मासर्तुवत्सरयुगाशनमोचनेऽपि हानिर्न कायबलिनः परिपूजयामि ॥ ६८७ ॥

भाषा—मेरु शिखर राखन बली, मास वर्ष उपवास । घटै न शक्ति शरीरकी, यजूं साधु सुखवास ॥

ॐ ह्रीं कायबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२८)

स्पर्शात्कराङ्घ्रिजनिताद् गदशांतनं स्यादामर्षजा यत्र इति प्रतिपत्तिमाप्तात् । (?)
येषां च वायुरपि तत्स्पृशतां रुजार्तिनाशाय तन्मुनिवराग्रधरां यजामि ॥ ६८८ ॥

भाषा—अंगुली आदि सपर्शते, श्वास पवन छू जाय । रोग सकल पीड़ा टले, जजूं साधु सुख पाय ॥

ॐ ह्रीं आमर्षौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२९)

निष्ठीवनं हि मुखपद्मभवं रुजानां शांत्यर्थमुत्कटतपोविनियोगभाजां ।
क्ष्वेलौषधास्त इह संजनितावताराः कुर्वंतु विघ्ननिचयस्य हतिं जनानां ॥ ६८९ ॥

भाषा—मुखते उपजे राल जिन, शमन रोग करतार । परम तपस्वी वैद्य शुभ, जजूं साधु अविकार ॥

ॐ ह्रीं क्ष्वेलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३०)

स्वेदावलंबितरजोनिचयो हि येषामुत्क्षिप्य वायुविसरेण यदंगमेति ।
तस्याशु नाशमुपयाति रुजां समूहो जल्लौपधीशमुनयस्त इमे पुनन्तु ॥ ६९० ॥

भाषा—तन पसेव सह रज उड़े, रोगीजन छू जाय । रोग सकल नाशे सही, जजूं साधु उमगाय ॥

ॐ ह्रीं जल्लौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३१)

नासाक्षिकर्णरदनादिभवं मलं यन्नैरोग्यकारि वमनज्वरकासभाजां ।
तेषां मलौषधसुकीर्तिजुषां मुनीनां पादार्चनेन भवरोगहतिर्नितांतं ॥ ६९१ ॥

भाषा—नाक आंख कर्णादि मल, तन स्पर्श होजाय । रोगी रोग शमन करैं, जजूं साधु सुख पाय ॥

ॐ ह्रीं मलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३२)

उच्चार एव तदुपाहितवायुरेणू अंगस्पृशौ च निहतः किल सर्वरोगान् ।

पादप्रधावनजलं मम मूर्ध्निपातं किं दोपशोपणविधौ न समर्थमस्तु ॥ ६९२ ॥

भाषा—मल निपात पर्शी पवन, रजकण अंग लगाय । रोग सकल क्षणमें हरे, जजूं साधु अघ जाय ॥

ॐ ह्रीं विजौपधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३३)

प्रसंगदंतनखकेशमलादिरस्य सर्वो हि तन्मिलितवायुरपि ज्वरादि ।

कासापतानवमिशूलभगंदराणां नाशाय ते हि भविकेन नरेण पूज्याः ॥ ६९३ ॥

भाषा—तन नख केश मलादि बहु, अंग लगी पवनादि । हरै मृगी शूलादि बहु, जजूं साधु भववादि ॥

ॐ ह्रीं सर्वौपधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३४)

येपां विपाक्तमशनं मुखपद्मयातं स्यान्निर्विपं खलु तदंह्रिधरापि येन ।

स्पृष्टा सुधा भवति जन्मजरापमृत्युध्वंसो भवेत्किमु पदाश्रयणे न तेपाम् ॥ ६९४ ॥

भाषा—विप मिश्रित आहार भी, जहं निर्विप होजाय । चरण धरें भू अमृती, जजूं साधु दुख जाय ॥

ॐ ह्रीं आस्याविपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३५)

येपां सुदूरमपि दृष्टिसुधानिपातो यस्योपरिस्खलति तस्य विपं सुतीव्रं ।

अप्याशु नाशमयते नयनाविपास्ते कुर्वंत्वनुग्रहममी क्रतुभागभाजः ॥ ६९५ ॥

भाषा—पड़त दृष्टि जिनकी जहां, सर्वहिं विप टल जाय । आतम रमी शुचि संयमी, पूजूं ध्यान लगाय ॥

ॐ ह्रीं दृष्टयविपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३६)

ये यं ब्रुवंति यतयोऽकृपया म्रियस्व सद्यो मृतिर्भवति तस्य च शक्तिभावात ।

येपां कदापि न हि रोपजनिर्घटेत व्यक्ता तथापि यजतास्यविपान् मुनींद्रान् ॥ ६९६ ॥

भाषा—मरण होय तत्काल यदि, कहें साधु मर जाव । तदपि क्रोध करते नहीं, पूजूं बल दरशाव ॥

ॐ ह्रीं आशीविपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३७)

येपामशातनिचयः स्वयमेव नष्टोऽन्येपां शिवोपचयनात्सुखमाददानाः ।

ते निग्रहाक्तमनसो यदि संभवेयुर्दृष्ट्यैव हंतुमनिशं प्रभवो यजे तान् ॥ ६९७ ॥
भाषा—दृष्टि क्रूर देखें यदी, तुर्त काल वश थाय। निज पर सुखकारी यती, पूजूं शक्ति धराय ॥
ॐ ह्रीं दृष्टिविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२३८)

क्षीराश्रवर्द्धिमुनिवर्यपदांबुजातद्वंद्वाश्रयाद् विरसभोजनमप्युदश्वित्।
हस्तार्पितं भवति दुग्धरसाक्तवर्णस्वादं तदर्चनगुणामृतपानपुष्टाः ॥ ६९८ ॥
भाषा—नीरस भोजन कर धरे, क्षीर समान बनाय। क्षीरस्रावी ऋद्धि धरे, जजूं साधु हरषाय ॥
ॐ ह्रीं क्षीरश्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२३९)

येषां वचांसि वहुलार्तिजुषां नराणां दुःखमघातनतयापि च पाणिसंस्था।
भुक्तिर्मधुस्वदनवत् परिणामवीर्यास्तानर्चयामि मधुसंश्रविणो मुनींद्रान् ॥ ६९९ ॥
भाषा—वचन जास पीड़ा हरे, कटु भोजन मधुराय। मधुश्रावी वर ऋद्धि धरे, जजूं साधु उमगाय ॥
ॐ ह्रीं मधुश्राविऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४०)

रूक्षान्नमर्पितमथो करयोस्तु येषां सर्पिःस्ववीर्यरसपाकवदाविभाति।
ते सर्पिराश्रविण उत्तमशक्तिभाजः पापाश्रवप्रमथनं रचयंतु पुंसाम् ॥ ७०० ॥
भाषा—रुक्ष अन्न करमें धरे, घृत रस पूरण थाय। घृतश्रावी वर ऋद्धि धर, जजूं साधु सुख पाय ॥
ॐ ह्रीं घृतश्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।(२४१)

पीयूषमाश्रवति यत्करयोर्धृतं सद् रूक्षं तथा कटुकमम्लतरं कुभोज्यं।
येषां वचोऽप्यमृतवत् श्रवसोर्निर्धत्तं संतर्पयत्सुभृतामपि तान् यजामि ॥ ७०१ ॥
भाषा—रुक्ष कटुक भोजन धरे, अमृत सम होजाय, अमृत सम वच तृप्ति कर, जजूं साधु भय जाय ॥
ॐ ह्रीं अमृतश्राविऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४२)

यद्दत्तशेषमशनं यदि चक्रवर्तिसेनाऽपि भोजयति सा खलु तृप्तिमेति।

तेऽक्षीणशक्तिललिता मुनयो दृगाध्वजाता ममाशु वसुकर्महरा भवंतु ॥ ७०२ ॥

भाषा—दत्त साधु भोजन बचे, चक्री कटक जिमाय। तदपि क्षीण होवे नहीं, जजूं साधु हरपाय ॥

ॐ ह्रीं अक्षीणमहानसर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४३)

यत्रोपदेशसरसि प्रसरच्युतेऽपि तिर्यग्मनुष्यविबुधाः शतकोटिसंख्याः।

आगत्य तत्र निवसेयुरबाधमानास्तिष्ठंति तान्मुनिवरानहमर्चयामि ॥ ७०३ ॥

भाषा—सकुड़े थानकमें यती, करते वृष उपदेश। बैठे कोटिक नर पशू, जजूं साधु परमेश ॥

ॐ ह्रीं अक्षीणमहालयऋद्धिधारकेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४४)

इत्थं सत्तपसः प्रभावजनिताः सिद्ध्यृद्धिसंपत्तयो येषां ज्ञानसुधाप्रलीढहृदयाः संसारहेतुच्युताः।

रोहिण्यादिविधाविदोदितचमत्कारेषु संनिःस्पृहा नो वांछंति कदापि तत्कृतविधिं तानाश्रये सन्मुनीन् ॥७०४॥

भाषा—या प्रमाण ऋद्धीनको, पावत तप परभाव। चाह कछू राखत नहीं, जजूं साधु धर भाव ॥

ॐ ह्रीं सकलऋद्धिसम्पन्नसर्वमुनिभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अत्रैव चतुर्विंशतितीर्थेशां चतुर्दशशतं मतं। सत्रिपंचाशता युक्तं गणिनां प्रयजाम्यहं ॥ ७०५ ॥

भाषा—दोहा—चौदासे त्रेपन मुनी, गणी तीर्थ चौवीस। जजूं द्रव्य आठों लिये, नाय नाय निज शीस ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थेश्वराग्रिमसमावर्तिसत्रिपंचाशच्चतुर्दशशतगणधरमुनिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४५)

मद्वेदनिधिद्व्यग्रखत्रयांकान्मुनीश्वरान्। सप्तसंघेश्वरांस्तीर्थकृत्सभानियतान्यजे ॥ ७०६ ॥

भाषा—अडतालीस हजार अर, उन्निस लक्ष प्रमाण। तीर्थंकर चौवीस यति, संघ यजूं धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थंकरसभासंस्थायि एकोनत्रिंशल्लक्षाष्टचत्वारिंशत्सहस्रप्रमितमुनीन्द्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति० (२४

इस तरह नौवें वलयकी पूजा करके एक नारियल उस वलयमें या मंडपके किनारे रक्खे।

अब चार कोनेमें स्थापित जिनप्रतिमा, मंदिर, शास्त्र व जिनधर्मकी पूजा करनी।

अकृत्रिमाः श्रीजिनमूर्त्तयो नव सपंचविंशाः खलु कोट्यस्तथा।

लक्षास्त्रिंपंचाशमितास्त्रिसगुणाः कृष्णाः सहस्राणि शतं नवानां ॥ ७०७ ॥

भाषा-दोहा-नौसे पचिस कोटि लख, त्रेपन अट्ठावीस । सहस ऊनकर बावना, बिम्ब प्रकृत नम शीस ॥

ॐ ह्रीं नवशतपंचविंशतिकोटित्रिपंचाशल्लक्षसप्तविंशतिसहस्रनवशताष्टचत्वारिंशत्प्रमितअकृत्रिमजिनबिम्बेभ्योऽर्घं नि०। (२४७)

द्विहीनपंचाशदुपात्तसंख्यकाः प्रणम्य ताः पूजनया महाम्यहं ।
अष्टौ कोट्यस्तथा लक्षाः षट्पंचाशमितास्तथा । सहस्रं सप्तनवतेरेकाशीतिश्चतुःशतं ॥ ७०८ ॥
एतत्संख्यान् जिनेंद्राणामकृत्रिमजिनालयान् । अत्राहूय समाराध्य पूजयाम्यहमध्वरे ॥ ७०९ ॥

भाषा दोहा-आठ कोड़ लख छप्पने, सत्तानवे हजार । चारि शतक इक असी जिन, चैत्य अकृत भज सार ।

ॐ ह्रीं अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतएकाशीतिसंख्याकृत्रिमजिनालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यो मिथ्यात्वमतंगजेषु तरुणक्षुन्नुन्नसिंहायते एकांतातपतापितेषु समरुत्पीयूषमेघायते ।
श्वभ्रांधप्रहिसंपतत्सु सदयं हस्तावलंबायते स्याद्वादध्वजमागमं तमभितः संपूजयामो वयं ॥ ७१० ॥

भाषा चौपाई-जय मिथ्यात्व नागको सिंहा, एक पक्ष जल धरको मेहा ।
नरक कूपते रक्षक जाना, भज जिन आगम तत्त्व खजाना ॥

ॐ ह्रीं स्याद्वादअंकितजिनागमायाऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४९)

जिनेंद्रोक्तं धर्मं सुदशयुतभेदं त्रिविधया, स्थितं सम्यक्रत्नत्रयलतिकयाऽपि द्विविधया ।
प्रणीतं सागारेतरचरणतो ह्येकमनघं दयारूपं वंदे मखभुवि समास्थापितमिमं ॥ ७११ ॥

भाषा भुजंगप्रयात छन्द-जिनेन्द्रोक्त धर्मं दयाभाव रूपा, यही द्वैविधा संयमं है अनूपा ।
यही रत्नत्रय मय क्षमा आदि दशधा, यही स्वानुभव पूजिये द्रव्य अठधा ॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणोत्तमादित्रिलक्षणसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूप तथा मुनिगृहस्थाचारभेदेन द्विविध तथा दयारूपत्वेनैकरूपजिनधर्मायऽर्घं नि०।

यागमंडलसमुद्धृता जिनाः सिद्धवीतमदनाः श्रुतानि च । चैत्यचैत्यगृहधर्ममागमं संयजामि सुविशुद्धिपूर्तये ॥७१२॥

भाषा दोहा-अर्हतसिद्धाचार्य गुरु, साधु जिनागम धर्म । चैत्य चैत्य ग्रह देव नव, यज मण्डल कर सर्म ॥

ॐ ह्रीं सर्वयागमण्डलदेवताभ्यः पूर्णार्घम् । चारों कोनोंपर चार नारियल चढ़ावे ।

शांतिः पुष्टिरनाकुलत्वमुदितभ्राजिष्णुताविष्कृतिः संसारार्णवदुःखदावशमनं निःश्रेयसोद्भूतिता ।
सौराज्यं मुनिवर्यपादवरिवस्याप्रक्रमो निस्तशो भूयादभ्रशराक्षिनायकमहापूजाप्रभावान्मम ॥ ७१३ ॥

।।पा अडिल्ल—सर्व विघ्न क्षय जाय शांति बाढ़े सही, भव्य पुष्टता लहैं क्षोभ उपजे नहीं ।
पंच कल्याणक होंय सबहि मंगल करा, जासे भवदधि पार लेय शिवघर शिरा ॥

इत्याशीर्वादः—पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

फिर—आचार्य भक्ति, अर्हन्त भक्ति, सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, चारित्रभक्ति पढ़े जो अन्तमें दी हुई है ।

पश्चात् शांतिपाठ विसर्जन करके यागमण्डलकी पूजा समाप्त करे । जबसे यह मण्डल पूजा शुरू हो तबसे पूर्ण होने तक सब नरनारियोंको एकाग्र हो सुनना चाहिये । जिसको कोई प्रकारकी बाधा मेटनी हो वह शांतिसे जावे, टिकट द्वारपर दे देवे, यदि लौटकर आना हो तो एक दूसरे प्रकारका टिकट रक्खा जावे जो छुट्टीका हो सो दे दिया जावे । जब यह लौटे फिर वह टिकट दे दिया जावे । मण्डल पूर्ण होनेपर सबके टिकट ले लिये जावें । यही क्रम हरएक दिन मण्डपके लिये हो । अब मण्डप चारों तरफसे बंद कर दिया जावे वह वेदीके आगे जो दो चबूतरे हैं वहां तीनों तरफ परदा रहे व पहले चबूतरेके आगे अलग परदा रहे । अब सब परदा बंदकर दिये जावें ।

अध्याय तीसरा ।

गर्भकल्याणक ।

यागमंडलकी पूजा दिनमें समाप्त हो जानेपर यदि तीसरे पहर समय हो तब तो संध्यासे पहले नीचेकी क्रिया की जावे । यदि दिनमें समय न हो तो रात्रिको क्रिया की जावे ।

(१) इन्द्रकी स्वर्गपुरीकी सभा व कुवेरको आदेश—वेदीके आगे जो दो चबूतरे हैं, एकपर यागमंडल है दूसरा खाली है । यागमंडल प्रतिष्ठा होने तक रहने दिया जावे । पहले चबूतरेके आगे परदा डालकर दूसरेपर परदेके भीतर पहले सभा लगाई जावे । सौधर्म इन्द्र व इन्द्राणी सिंहासनपर बैठें, कुछ देवता इधर उधर बैठें, सामने उपदेशी भजन गाजे बाजेके साथ होरहे हों ऐसा सामान रचकर

पमें टिकटोंके द्वारा नरनारी एकत्र हों तब परदा उठाया जावे। परदा उठनेके पहले सूचक पात्र सबको यह सूचना करे—

इन्द्र अपनी सभामें बैठकर श्रीऋषभदेव तीर्थंकरका जन्म होगा ऐसा स्मरण करते हैं और कुवेरको आज्ञा देते हैं कि वह अयोध्या-रीकी रचना करे तथा राजाके आंगनमें रत्नवृष्टि करे तथा कुमारिका देवियोंको आज्ञा करे कि वे माताका गर्भ शोधन करें।

परदा यकायक उठे तब भजन हो रहे हों। कुछ देर भजन होकर इन्द्र–इन्द्राणी सिंहासनसे उठकर खड़े हों तब सभा निवासी र देव भी खड़े हों और नीचे प्रकार श्री जिनेन्द्रकी स्तुति सब मिलकर हाथ जोड़कर करें, भजन गाना बंद हो। यदि वाजेके साथ ति पढ़ी जासके तो वैसा किया जावे अन्यथा योंही पढ़ी जाय पर स्पष्ट शुद्ध पढ़ी जाय। आचार्य पढ़नेमें मदद देवें।

द त्रिभंगी—जय जय जिन स्वामी अन्तरयामी परमातम सब दोष हरे। निज ज्ञान प्रकाशे भ्रमतम नाशे शुद्धातम शिवराज करे॥
तुम अनुभव सागर अमृत गागर जो भरकर निज कंठ धरे। सो सुख निज पावे क्षोभ मिटावे कर्म-बंधका नाश करे॥

ाई—जय जय मोह महातम भारी, नाशन तुम सूरज अविकारी। जय जय मिथ्यातम निशिनाशी, शशि अविकार महान प्रकाशी॥
जय जय भव्य भ्रमर हुल्लासी, चरणकमल शम गंध सुवासी। जय जय शांति भाव प्रगटावन, धर्म सरोवर शमजल धारण॥
जय जय कर्म महागिरि चूरण, तुम हीं वज्र अद्भुत बल पूरण। जय जय चाह दाह प्रशमावन, तुम हि मेघजल सुंदर पावन॥
जय जय काम शत्रु सिरनाशन, ब्रह्मचर्य असिधार प्रकाशन। जय जय क्रोध पिशाच विनाशन, क्षमा वज्रधर इंद्र प्रकाशन॥
जय जय मान नाग क्षयकारी, सिंह प्रबल मार्दव गुणधारी, जय जय माया लता उखाड़न, आर्जव शस्त्र धार अति पावन॥
जय जय लोभ कालिमाटारन, शौचामृत शुचि गुण विस्तारन। जय जय अविरति पंथ हटावन, संयम संरक्षक अति पावन॥
जय जय योग चलन थिरकारी, शुक्ल ध्यान दृढ़ भित्ति करारी। हे जिननाथ पाप हम टालो, भक्ति आपनी देय सम्हालो॥
भवसागरसे नाथ उबारो, कर्म आस्रवन छिद्र निवारो। सुखसागरमें नाव डुबाओ, ममता मल विकार हटवाओ॥

स्तुति पढ़कर सब बैठ जावे। कुछ मिनट पीछे इन्द्र आज्ञा करें—

धनद कुबेर—(ऐसा कहते ही सभामें बैठा कुबेर हाथजोड़ खड़ा होजाता है) तुम्हें सुखद बात सुनाता हूं। इस बातके कहनेसे ही पुण्य कमाता हूं।

कुछ काल पीछे सर्वार्थसिद्धिका वज्रनाभि अहमिन्द्र चयेगा और नाभिराय मरुदेवीके पवित्र गर्भमें अवतरेगा। तुम शीघ्र अयोध्या

नगरकी रचना करके शोभा करो, रमणीक मनोहर नेत्रप्रिय रत्नोंकी आभा करो, सुन्दर अद्वितीय राज्य महल बनाओ।

नाभिराजा मरुदेवीको पवित्र जलसे स्नान कराओ। परम पुनीत वस्त्राभूषणोंसे सज्जित करो और मनोहर सिंहासनपर बिठा लोकके सर्व आसनोंको लज्जित करो। कुबेर! श्री ऋषभनाथ प्रथम तीर्थंकरका उदय होगा। जगतका मोह मिथ्यात्व अन्धकार सब क्षय होगा। छः मास पूर्वसे नौ मास गर्भ तक रत्नवृष्टि करो। राजाका महल मनोज्ञ रत्नोंकी वर्षासे पूर्ण करो। कुमारिका देवियोंको आज्ञा करो कि—

ये माताकी सेवामें आएं, गर्भकी शोधना कर पुण्य कमाएँ।

कुबेर सुनकर आनंदित होता है और उत्तर देता है—"धन्य! धन्य! महाराज! जगतका पुण्योदय हुआ है जो तीर्थंकरका जन्म होनेवाला है। इस सम्वादको जानकर जो आनन्द हुआ है वह वचन अगोचर है। कृपानाथने जो आज्ञा की है उसे बजा लाऊंगा। तीर्थंकरके माता-पिताकी सेवा करके पुण्य कमाऊंगा। महाराज, आज मेरा जन्म धन्य हुआ जो मुझे यह परम कल्याणमय कार्य करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। तब इन्द्र-इन्द्राणीके सिवाय अन्य सब सभाके देव उठकर यह छन्द मिलकर पढ़ते हैं—

गीता छंद—धन जन्म सुरका आज ही, सम्वाद सुखकर हम सुना। श्री तीर्थंकरका जन्म होगा, पुण्य हो यासे घना॥
भवि जीव शिवकी राह पावेंगे मिटा मिथ्यातको। हम भी पियें अमृत महा, जिन तत्त्वका भव घातको॥

अब परदा गिर जावे।

(२) नगर, राजमहलकी रचना, माता पिताकी भक्ति व रत्नवृष्टि—फिर परदेके भीतर जो मूल वेदीकी दाहनी ओर वेदी है वहां राजमहलकी रचना दर्शनीय यथायोग्य करनी चाहिये। दूसरे चबूतरे पर राजा रानीकी सभा बनानी चाहिये। कुछ लोग सभासद बैठे हों, सामने भजन उपदेशी होता हो। ऊपरसे रत्नवृष्टि करनेका प्रबन्ध ऐसा किया जावे कि मंडपका कुछ हिस्सा खोल दिया जावे वहां बांसपर दो देव दूर दूर बैठ रत्नवृष्टि करें या ऊपरका भाग न खुल सके तो एक मजबूत बांस या बल्ली ऐसी बंधी हो जिसपर दो इन्द्र या देव चढ़कर बैठ जावें और रत्नवृष्टि करें। जिसतरह हो आकाशसे रत्नवृष्टि होनेका प्रबन्ध किया जावे।

रत्नवृष्टिमें—कुछ पन्ने, कुछ नीलम, कुछ लाल, कुछ पुखराज तथा बहुतसे चांदी सोनेके बने तारे सितारे तथा फूल इतने छोड़े जावें कि दर्शकोंको दिखे कि रत्नवृष्टि देवगण कर रहे हैं। पुष्प भी मिला सके हैं। माता-पिता बैठे हों, सामने भजन सुन रहे हों ऐसी स्थितिमें परदा उठे। परदा उठनेके पहले सूचक पात्र यह बता देवे कि श्री नाभिराजा और मरुदेवीके राजमहलमें रत्नवृष्टि

होगी तथा देवियां गर्भशोधनके लिये पधारेंगी। परदा उठते ही कुछ ही देर बाद आचार्य यह मंत्र पढ़े—

"ॐ ह्रीं धनाधिपते अर्हत्प्रतिसौधे रत्नवृष्टिं मुंचतु मुंचतु स्वाहा।" ऐसा तीन वार पढ़े। पढ़नेका समाप्त होते ही ऊपरसे रत्न-वृष्टि हो तब सब दर्शकगण जय जय शब्द कहें और मण्डपके बाहर गंभीर बाजे बजे। धीरे२ दो तीन मिनट तक वृष्टि होनी चाहिये।

फिर कुवेर कुछ देवोंके साथ राज-सभामें आवे, साथमें दो थाल लावें एकमें वस्त्र रमणीक हों एकमें आभूषण हों। (नोट—वस्त्र सदा शुद्ध देशी यथासम्भव हाथके बने रंगीन व गोटे आदिसे सज्जित हों)—विनय करता हुआ आकर उन दोनों थालोंको सामने टेबुलपर रखकर नत मस्तक हो हाथजोड़ स्तुति पढ़े—

छन्दपद्धरी—जय नाभिराय कुलकर महान, चौदम मनु मनुष्योंमें प्रधान। जब कल्पवृक्ष सब नष्ट थाय, तब नरनारी तुम पास आय॥
कर दीन वचन मुखसे उचार, जीवें कैसे हैं हम लचार। तब खानपान विधि सब बताय, तिनका जीवन जासो टिकाय॥
जय धन्य धन्य स्वामी दयाल, तुम प्रजा रक्ष सब कर निहाल। तुम गुण रत्न की खान जान, हम करत पूज्य तुम महा मान॥
जय देवी मरुदेवी महान, तुम जगत पूज्य हो शील थान। तुम सुन्दर गुणसे शोभ मान, तुम सम नहि माता जगत जान॥
तुमसे जगका उपकार मान, आए तुमरे ढिग करन मान। यह भेट इन्द्र भेजी अबार, कीजे कबूल हो ज्ञान धार॥

फिर मस्तक नमा नमन करे। राजा बैठनेकी आज्ञा करे, उन थालोंको कोई मुसाहब भीतर ले जावें पश्चात् १०-१२ भाई गरीब दशामें राजसभामें आवें और कहें—

धन्य धन्य प्रजानाथ। आपके दर्शनसे हम हुए सनाथ॥

हम निर्धन आपकी शरण आए हैं। आपसे आशाकी पूर्ति जान आपसे मन लगाए हैं। आप दीनोंके क्लेश निवारक हैं, आप अशरणोंको शरण धारक हैं। ऐसा कह मस्तक नमाकर एक तरफ खड़े होजावें। तब नाभिराय एक मुसाहबको आज्ञा करें। इन याचकोंको तृप्त करो, इन रत्नोंको जिन्हें धनदने बरसाया है इनको देकर इनकी आशा पूरी करो, ये बड़ी आश लगाकर आए हैं। इनको निर्धनसे धनवान करो, अपने समान करो, रत्न दे इनका सन्मान करो। तब दो मुसाहब उठते हैं। बिखरे हुए रत्नोंको बटोरकर उनको बांट देते हैं। वे उनको अपनी झोलीमें लेते हुए कहते हैं—

पद्धरी छंद—जय हो जय हो नाभिराज, हम दीन किये धनवान आज।

तुम धन्य धन्य दानी विशाल, तुम सम जगमें नहिं कोई कृपाल ॥

ऐसा कह जय जय कहते हुए लौट जाते हैं। फिर राजा नाभिराय और रानी मरुदेवी भीतर चले जाते हैं, सभा लगी रहती है।

फिर आठ कुमारिका देवियें (कन्याएं) कुंभ कलश प्राशुक जलसे भरा, नारियलसे ढका, पुष्पमालासे सुशोभित मस्तकपर या दोनों हाथोंपर लिये हुई आती हैं और सामने खडी होजाती हैं। कुबेर उठते हैं और कहते है—इन्द्रकी आज्ञा है—हे कुमारिकादेवियों ! श्री मरुदेवीके गर्भकी शोधना करो, माता मरुदेवी जगतजननी हैं उनकी सेवाकरो, उनके मनको प्रसन्न रक्खो, उनकी आज्ञामें अपना चित्त तल्लीन रक्खो।

(१) तब आचार्य नीचे लिखा मंत्र पढ़ एक कन्याको पूर्वदिशामें स्थापित करें। उसपर पुष्प क्षेपण करे "ॐ महति महसां श्रीदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं हे श्रीं नित्ये स्त्रं स क्ष्मी ह्वी स्वां लां झ्रौं तीर्थंकरसवित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु कुरु व मं ह स त पं श्रीदेव्यै स्वाहा।"(२) फिर दूसरी कन्याको नीचे लिखा मंत्र पढ़ आग्नेयदिशामें स्थापित करे। उसपर पुष्प क्षेपण करे। "ॐ महति महसा ह्रीं देवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं हे ह्रीं नित्ये स्त्रं स क्ष्मी ह्वी स्वां लां झ्रौं तीर्थंकर सवित्री स्नापय स्नापय गर्भशुद्धिं कुरु२ व म ह स त पं ह्रीदेव्यै स्वाहा।"

(३) फिर तीसरी कन्याको नीचे लिखा मंत्र पढ पुष्प क्षेपण कर दक्षिणदिशामें स्थापित करे। "ॐ महति महतां धृतिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं द धृति नित्ये स्त्रं स क्ष्मी ह्वी स्वा लां झ्रौं तीर्थंकरसवित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु २ व म ह स त प धृति देव्यै स्वाहा।"

(४) फिर चौथी कन्याको नीचे लिखा मंत्र पढ पुष्प क्षेपण कर नैऋत्यदिशामें स्थापित करे। "ॐ महति महता कीर्तिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं हे कीर्ति नित्ये स्त्रं स क्ष्मी ह्वीं स्वा लां झ्रौं तीर्थंकरसवित्री स्नापय २ गर्भशुद्धि कुरु २ वं म ह सं त प कीर्ति देव्यै स्वाहा।"

(५) फिर पांचमी कन्याको नीचे लिखा मंत्र पढ़ पुष्प क्षेपण कर पश्चिमदिशामें स्थापित करे। 'ॐ महति महता बुद्धिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं हे बुद्धि नित्ये स्त्रं स क्ष्मीं ह्वीं स्वा लां झ्रौं तीर्थंकर सवित्रीं स्नापय२ गर्भ शुद्धि कुरु कुरु वं म ह स त्त पं बुद्धिदेव्यै स्वाहा।"

(६) फिर छठी कन्याको नीचे लिखा मंत्र पढ़ वायव्यदिशामें पुष्पक्षेप स्थापित करे। ॐ महति महता लक्ष्मीदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं हे लक्ष्मी नित्ये स्त्रं स क्ष्मीं ह्वीं स्वां लां झ्रौं तीर्थंकरसवित्री स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु कुरु व मं हं स तं पं लक्ष्मीदेव्यै स्वाहा।"

(७) फिर सातमी कन्याको नीचे लिखा मंत्र पढ़ पुष्प क्षेपण कर उत्तरदिशामें स्थापित करे। "ॐ महति महतां शांतिदेवि महादेवि

ऐं ह्रीं श्री ह्रें शांति नित्यै स्व सं क्ष्रीं इवीं स्वां लां झ्रौ तीर्थंकर सवित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु २ वं मह्रं सं तं पं शांतिदेव्यै स्वाहा।"

(८) फिर आठमी कन्याको नीचे लिखा मंत्र पढ़ उसपर पुष्प क्षेपण कर ईशानदिशामें स्थापन करे। "ॐ महति महतां पुष्टिदेवि महा-देवि ऐं ह्री श्री ह्रे पुष्टिं नित्यै स्वं सं क्ष्रीं इवीं स्वां लां झ्रौ तीर्थंकर सवित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु वं मं हं सं तं पं पुष्टिदेव्यै स्वाहा।"

इसतरह श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी, शांति और पुष्टि इन आठ दिक् कुमारी देवियोंको आठ दिशामें स्थापित करे फिर आचार्य नीचे लिखा मंत्र पढे और उन सबपर पुष्प क्षेपण कर कहे "ॐ दिक्कुमार्यो जिनमातरमुउपेत्यपरिचरतपरिचरत स्वाहा।"

दोहा-श्री जिनमाता सेव नित, करत रहो सुख पाय। पुण्यलाभ हो जाससे, पातक जाय पलाय।

फिर कुबेरादि चले जावें, मात्र देवियां खडी रह जावें, परदा पड़ जावे।

(३) पांच मिनटके भीतर उसी दूसरे चबूतरेपर ऐसी रचना करे कि एक लेटने लायक सिंहासन सुन्दर सफेद वस्त्रोंसे सज्जित विछावे। एक ऊची टेबुलपर आठ मंगल द्रव्य स्थापित करे तथा एक मंजूषा स्फटिकमणिकी व कांचकी इतनी बड़ी बनावे जिसमें वह प्रतिमा जिसकी प्रतिष्ठाकी विधि करनी हो सीधी आसके बैठे या खडे। अब जिन माता उस सिंहासनपर बैठी हो। इन आठ कन्याओके कलश दूसरी टेबुलपर रख दिये जावें। परदेके भीतर माताको ये देवियां किसी बडे थालमें बिठाकर थोड़े कुम्भके जलसे स्नान करावें, नए शुद्ध वस्त्र पहनावें। कुछ आभूषण रहने दिया जावें, माता वस्त्रसे सजकर सिंहासनपर बैठी हो, मंजूषा पासमें रक्खी हो। इन देवियोंमेंसे कोई हाथोंमें कड़े पहनाती हो, कोई गलेमें हार पहनानेको हार लिये खडी हो, कोई तिलक देनेको चंदन लिये खड़ी हो, एक देवीके हाथमें दर्पण हो, एक पुष्पकी माला लिये हो, एक अतरदान लिये खडी हो, एकके हाथमें सुन्दर झारी जलसे भरी एक थालमें रक्खी हो, एकके हाथमें पखा हो। इस तरह देवियां कायदेसे खडी हों तब परदा उठे। सब लोग कहें श्री जिनमाताकी जय, उधर बाजे बजते हों, इधर देवी कडे पहनाकर गलेमें हार डाले, पुष्पमाला डाले, तिलक करे, अतर सुंघावें, दर्पण दिखावे, माता हाथमें अतर लेकर वस्त्रोंमें लगावें। फिर झारीसे थालमें ही हाथ धोवे। दो देवियां उस मंजूषाके भीतर चंदनसे लेप करके एक थालमें रख-कर धोवें फिर भीतर मध्यमें व सब ओर चंदनसे साथिया बनावें। फिर सब देवियां खड़ी हो यह स्तुति पढ़ें—

छन्द-मात तोहि सेवके सुतृप्तिता हमें भई, रागद्वेष टार वीतराग बुद्धि परिणई।
तू ही लोकमाहिं श्रेष्ठ भार्या सुभाग है, इन्द्र तोरी भक्तिमें प्रवीण किये राग है॥

धन्य धन्य हस्त यह सफल भए सु आज हीं, अंग२ धन्य है कृतार्थ भए आज हीं ।

धन्य धन्य देवि पुण्य आतमा विशाल हो, पुत्रका सुलाभ हो सुधर्मका प्रचार हो ॥इतनेमें परदा गिर जावे ।

(४) माता रातको यही सोवे, देवियां भी यही रहें, उनके आरामका भी वही प्रबन्ध हो। इसतरह आज दिन रातकी क्रिया समाप्त की जावे । फिर यदि समय हो तो धर्मोपदेश दिया जावे । दूसरे दिन बड़े सवेरेसे गर्भकल्याणककी विशेष विधि की जावे ।

(४) माताका स्वप्न देखना–रात्रिको आचार्य प्रतिष्ठायोग्य प्रतिमाओंकी जांच कर वेदीमें स्थापित करे। उनको स्वच्छ करके विराजमान करे तथा जिसकी प्रतिष्ठा विधि करनी हो उसको केसर चंदनसे लेपकर मजूषामे बिराजमान करे, शेषमें भी केसर चदन लेपे तथा हरएक बिम्बको वस्त्रसे ढक देवे, मंजूषाके ऊपर भी वस्त्र ढकदेवे, प्रतिमाको मजूषामें रखते हुए नीचे लिखा श्लोक व मंत्र पढ़े—

यो गंगांबुसुरत्नपुष्पकृतभूपस्कारमिंद्रासन, द्रक्कूपं प्रमदाकुलीकृतजगद्गर्भं प्रविश्योत्तमे ।

लग्ने वामतिरंजयन् रविरिह प्राची परानुग्रह–ग्राहोद्यद्धृतिवर्द्धतेस्म सुदृशां सोऽयं जिनस्तन्मुदे ॥ २८ ॥

ॐ णमोर्हते केवलिने परमयोगिने शुक्लध्यानाग्निनिर्दग्धकर्मेन्धनाय सौभाग्य शाताय वरदाय अष्टादशदोषविवर्जिताय स्वाहा ।

फिर सर्व प्रतिमापर पुष्प क्षेपे ।

बडे सवेरे सूर्योदय पहले मंडपमें नरनारी टिकटोंसे एकत्र होते रहें उधर मंगलीक वाजे मंडपके बाहर बजें । इधर दूसरे चबूतरेपर शय्यापर जिनमाता लेटी रहे उसके पास गोदके वहां प्रतिमा सहित मजूषा रक्खी रहे जो अभी कपड़ेसे ढकी रहे । देवियां आठों अर्दलीमें खडी हों, मंगलद्रव्य एक तरफ रक्खे हो तथा १६ स्वप्नोंकी मूर्तियां या चित्र एक मेजपर जो कुछ नीचे हो सुन्दरतासे रक्खे जांय जिनको सब कोई देख सकें । बाजा कुछ देर बज चुके तब परदा उठाया जावे, उस समय वे देवियां नीचे भांति मंगलगीत पढ़ें—

गीताछंद–अरहंत सिद्धाचार्य पाठक साधु पद वंदन करूं, निर्मल निजातम गुण मनन कर पाप ताप शमन करूं ।

अब रात्रि तम विघटा सकल ह्यां प्रात होत सुकाल है, भानु उदयाचलपे आया नभ किया सब लाल है ॥

पक्षी मनोहर शब्द बोलें गंध पवन चलात है, चहुंओर है भगवान सुमरण वृक्ष प्रफुलित पात है ।

बाजे बजें रमणीक माता गीत मंगल होरहे, तजिये शयन उठ जगत प्यारी वीनती हम कर रहे ॥

है समय सामायिक मनोहर ध्यान आतम कीजिये, है कर्म नाशन समय सुन्दर लाभ निज सुख लीजिये ।

इतने हीमें माता आंखें मलती उठकर बैठ जाती है, मंजूषा पासमें रक्खी है और बैठे ही वैसे स्तुति पढ़ती है—

* गीता—वंदौं परम अरहंत सिद्ध सु साधु संयम गुण धरे, अविकार परमातम निजातम सुख मनोहर संचरे।
धन धन प्रभात प्रकाश पाया जनो सम्यकृता पगी, अब रात्रि तम मिथ्यात जों सत्र विघट भानु कला जगी ॥

इतना कह हाथ जोड़ मस्तक झुका कर नमन करे फिर कुछ देर ठहरकर कहे—

गीत—मैंने देखे सखी सोलह सुपने, सोलह सुपने, सोलह सुपने, मैंने देखे सखी सोलह सुपने ॥ टेक ॥
शुक्र सु गज ऐरावत देखो, मेघ समान सु गरज घने। द्वितिय सफेद बैल दृढ़ देखा, उन्नत कंधा शब्द भने ॥ मैंने० ॥
तीजे सिंह धवल शुभ देखा, कंधे लाल सुवर्ण बने। सिंहासन थित धवल लक्ष्मी देखी, नाग सूंड़ घट न्हवन सने ॥ मैंने० ॥
पांचे फूल माल द्वय गंधित, भ्रमर भणत गुणनाथ तने। छट्ठे शशि पूरण तारात्रत, अमृत झरता जगत तने ॥ मैंने० ॥
सप्तम सूर्य निशातम हारी, पूर्व दिशासे उादत ठने। सुवरण कलश दोय जल पूरण, कमलपत्रसे ढकित घने ॥ मैंने० ॥
नोमे मीन युगल सर रमते, देखे चंचल भाव जने। दसवें हंस रमनयुत सरवर, कमल गंधयुत लहर ठने ॥ मैंने० ॥
सागर दर्पण सम निर्मल लख, उठत तरंगनि हंसत घने। बारम सिंहासन सुवरणमय, सिंह सहित मणि जड़ित बने ॥ मैंने० ॥
तेरम स्वर्ग विमान रतन मय, भेजत सुर अनुराग घने। चौदम नागभुवन भू उठतो, देखा क्रांति अपार जने ॥ मैंने० ॥
पंद्रम रत्न—राशि द्युति पूरण, दुख दलिद्र संसार हने। सोलम धूम रहित अग्नी शिख, कर्मबंध जलजात घने ॥ मैंने० ॥
उन्च वृषभ सुवरणमय आयो, मुख प्रवेश करता अपने। ऐसे स्वप्न कबहिं नहिं देखे, अचरज होत हृदय अपने ॥ मैंने० ॥

इतना जब पढ़ चुके तब परदा गिर जावे। तब आध घंटेकी छुट्टी होजावे।

(९) नित्य पूजा होम—फिर आचार्य व इन्द्र आदि स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहन कर आवें, दूसरा चबूतरा खाली होजावे। वेदीमें स्थित मूल पूज्य प्रतिमाका अभिषेक पूजन व होम करे। प्रथम ही आचार्य तथा इन्द्र (ये दो अवश्य हों) व अन्य बैठकर अंगशुद्धि व सकलीकरण करें—जो पहले अध्यायमें कहे गए हैं उनमेंसे थोड़ी विधि करे अर्थात् नं० (१) (२) (३) (४) व (६) इनसे स्नान धोती, दुपट्टा, मुकुट आदिकी शुद्धि करे। फिर अंगरक्षाके लिये नं० (१) ॐ णमो अरहंताणं से नं० (११) तक पढ़कर

* (यद्यपि जिनधर्मका प्रचार ऋषभदेवके ज्ञान होने बाद हुआ था तथापि यहां प्रतिष्ठाका भाव बताना है इससे यथायोग्य कार्य ऋषभदेवके मिससे दिखाया गया है)।

रक्षा करे-अर्थात् हाथोंकी मस्तकादिकी व पगोंकी रक्षा करे। फिर जो अभिषेककी विधि संक्षेपमें यागमण्डलकी पूजामें कह चुके हैं उस तरह अभिषेक करके नित्य देव शास्त्र गुरु पूजा व सिद्ध पूजा करे। फिर तीनों कुण्डोंमें दो दो इन्द्र बैठकर होम करे। १०८ आहुति नीचे लिखा मंत्र पढकर डालें। "ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशांतिं कुरु कुरु स्वाहा" फिर शांतिपाठ विसर्जन करे। इसको सब नरनारी देखें। फिर पर्दा दोनो चबूतरोंपर व सर्व तरफसे पड जावे।

परदेके बाहर सूचक पात्र एक सितार लिये घूमता हुआ भजन गाता रहे जबतक तय्यारी न हो। जब तैयारी होजावे तब वह कहे—अब राजा नाभिरायकी सभा लगती है इसमें माता मरुदेवी आकर स्वप्नोका फल पूछेगी जिसको श्री नाभिराय बतायंगे। आपको और अपनी अर्द्धांगिनी तथा सभानिवासी जनोंको आनन्दित करेंगे।

(६) राजाकी सभामें प्रश्नोंका फल—दूसरे चबूतरे पर राजा नाभि सभासदों सहित बैठे हों, आगे एक उपदेशी भजन होरहा हो, इतनेमें परदा उठे। भजन होचुके तब माता मरुदेवी आठ देवियोंके साथ बस्त्राभूषणसे सज्जित आवे। देवियोंके हाथोंमें खड्ग आदि नानाप्रकारके सुन्दर शस्त्र हों। देवीको आते देखकर राजा कहें—प्रिये! आइये, विराजिये, अर्ध सिंहासनपर सुशोभित हूजिये, यह सभा आपके पधारनेसे प्रफुल्लित होरही है। रानी मरुदेवी बांईतरफ बैठजावे और नीचे लिखें गीतमें वर्णन करें—

छन्द गीता—हे नाथ! पिछली रातमें हम सुपन सोला देखिया, गज बैल सिंह सुदेवि कमला न्हवनं करत हिं पेखिया।
द्वय पुष्पमाल सु चन्द्र पूरण सूर्य सुवरण कलश दो, युग मीन सरवर कमल युत सागर सु सिंहासन भलो॥
रमणीक सुर्ग विमान उतरत नाग भवन सु आवतो, सुरतन राशि सुत्रांति पूरण अगनि धूम न पावतो।
तब अन्तमें इक वृषभ मेरे मुख प्रवेश करत भया। इनको सुफल कहिये प्रभू मुझ दीनपर करके दया॥

महाराज कुछ देर विचारते हैं और तब अवधिज्ञानसे सब हाल जानकर इसतरह कहते हैं—

गीता छंद—गज देखनेसे देवि तेरे पुत्र उत्तम होयगा। वर वृषभका है फल यही वह जगत गुरु भी होयगा॥ १॥
वर सिंह दर्शनसे अपूरब शक्ति धारी होयगा। पुष्पमालासे वह उत्तम तीर्थ करता होयगा॥ २॥
कमला न्हवनका फल यही सुरगिरि न्हवन सुरपति करैं। अर पूर्ण शशिके देखनेसे जगत जन सब सुख भरैं॥ ३॥
वर सूर्यसे वह हो प्रतापी कुंभ युगसे निधिपती। सर देखनेसे सुभग लक्षण धार होवे जिनपती॥ ४॥
युग मीन खेलत देखनेसे हे प्रिये चित धर सुनो। होवे महा आनन्दमय वह पुत्र अनुपम गुण सनो॥ ४ अ।

सागर निरखते जगतका गुरु सर्वज्ञानी होयगा। वर सिंह आसन देखनेसे राज्य स्वामी होयगा॥ ५॥
अर सुर विमान सुफल यही वह स्वर्गसे चय होयगा। नागेंद्र भवन विशालमे वह अवधिज्ञानी होयगा॥ ६॥
बहु रत्न-राशि दिखावसे वह गुण खजाना होयगा। वर धूम रहित जु अग्निसे वह कर्म ध्वंसक होयगा॥ ७॥
वर वृषभ मुख परवेश फल श्री वृषभ तुझ वपु अवतरे। हे देवि तू पुण्यातमा आनन्द मंगल नित भरे॥ ८॥

माताका मन इस फलको सुनकर प्रफुल्लित होगया तब सब देवियां मिलकर जो अबतक विनयसे खडी थीं मंगलगान करने लगीं।

गीत छंद धोदका-हम जिनराज जनम सुन पाये। हर्ष भयो नहीं अंग समाए॥
धन्य नाथ तुम जगत पिता हो। धन्य मात तुम सुखदाता हो॥
धन्य समय यह परम सुहावन। आज भए हम जन सब पावन॥
आज जगतका भाग्य सुहाया। वृषभनाथ सम्वाद सुनाया॥
या युगके तीर्थंकर प्रथमा। प्रगट होंयगे तारण अधमा॥
हम वन्दन कर दुःख नशावें। भव आताप सकल प्रशमावें॥
धन्य नाथ तुम दीन दयाला। करहु कृपा हम होय निहाला॥ अन्तमें परदा पड़ जावे।

तब सूचक पात्र परदेके बाहर सितार बजाता हुआ कुछ गाता हुआ, कुछ देर पीछे सूचित करे कि तीर्थंकरके गर्भमें आनेका सम्वाद जानकर इन्द्रादिक देव सब राजाके गृहमें आएंगे और भक्ति करके अपना जन्म सफल मनाएंगे

(७) इन्द्रोंका आकर गर्भकल्याणक करना-तब परदेके भीतर यह रचना की जाय। दूसरे चबूतरेपर तीर्थंकरकी प्रतिमा जिस मंजूषामें है उसको ऊंचे स्थानपर विराजमान करे, वस्त्र ऊपरसे निकाल देवे जिससे प्रतिमा शीशेके भीतरसे दिख सके। पास ही एक चौकीपर प्रतिमाकी मंजूषासे कुछ ही नीचे माता बैठी हो तथा पास ही पिता बैठे हों, देवियां विनय सहित खडी हों, मंगल द्रव्य आठों एक तरफ रक्खे हों और एक मण्डल २४ कोठोंका सुन्दर एक छोटी चौकीपर मांड़ा जावे, वह प्रतिमाके आगे विराजमान किया जावे। कुछ सभासद भी कायदेसे बैठे हों, आगे उपदेशी भजन होते हों तब परदा उठाया जावे। उधर इन्द्र इन्द्राणी व अनेक इन्द्र-समूह बाजा बजाते हुए व नीचे लिखा मंगलगीत गाते हुए मंडपकी तीन प्रदक्षिणा देकर राजसभामें प्रवेश करें—

गीत—जय तीर्थंकर जय जगतनाथ, अवतरे आज हम हैं सनाथ। धन भाग महारानी सुहाग, जो उर आए जिन सुरग त्याग ॥१॥
हम भक्ति करन उमगे अपार, आए आनंद धर राज्यद्वार। हम अंग सफल अपना करेंय, जिन मात पिता सेवा करेंय ॥२॥
यह जगत तात यह जगत मात, यह मंगलकारी जग त्रिख्यात। इनकी महिमा नहिं कही जाय, इन आतम निश्चय मोक्ष पाय॥३॥
जिनराज जगत उद्धार कार, त्रय जगत पूज्य अघ चूरकार। तिनके प्रगटावनहार नाथ, हम आए तुम घर नाय माथ ॥४॥

ऐसा गीत गाते हुए राजसभामे आकर मात पिताको देखकर आनंदित हो मस्तक नत हो भूमिपर दंडवत् करते हैं और दो थाल वस्त्राभूषणसे सज्जित हों जिनको देव साथ लावें, उनको उन माता पिताके आगे एक टेबुल हो उसपर रख भेट करते हुए नीचे लिखा गान पढते हैं। यहांपर इन्द्र नृत्य व गान कर सक्ते हैं।

गान इन्द्रका—तुम देखे दरश सुख पाए नयना। सुख पाए नयना, सुख पाए नयना ॥तुम०॥ टेक॥ तुम जग ताता तुम जग माता, तुम वन्दनसे भव भय ना ॥ तुम० ॥ १ ॥ तुम गृह तीर्थंकर प्रभु आए, तुम देखे सोलह सुपना ॥ तुम० ॥ २ ॥ तुम भव त्यागी मन वैरागी, सम्यक्दृष्टी शुचि वयना ॥ तुम० ॥३॥ तुम सुत अनुपम ज्ञान विराजे, तीन ज्ञानधारी सुजना ॥ तुम० ॥ ४ ॥ तुम सुत राज्य करै सुरनरपे, नीति निपुण दुखं उद्धरना ॥ तुम० ॥ ५ ॥ तुम सुत साधु होय वन विहरे, तप साधत कर्मन झरना ॥ तुम० ॥ ६ ॥ तुम सुत केवल ज्ञान प्रकाशे, जग मिथ्यातम सव हरना ॥ तुम० ॥ ७ ॥ तुम सुत धर्म तत्त्व सव भाषे, भवि अनेक भवसे तरना ॥ तुम० ॥ ८ ॥ कर्म वंध हर शिवपुर पहुंचे, फिर कबहूं नहिं अवतरना ॥ तुम० ॥ ९ ॥ हम सव आज जन्म फल मानो, गर्भोत्सव कर अघ दहना ॥ तुम ॥ १० ॥

फिर इन्द्र इन्द्राणी मिलकर खडे हो मंडलकी पूजा करें, सव बैठ जावें। यहां २४ तीर्थंकरोंकी माताओंकी पूजा करनी है—

प्रथम-स्तुति सहित स्थापना।

वंशक्षायिकदृक्समिद्धसुधियां योस्मिन्मनूनामभू-द्ये चेक्ष्वाकुकुरुग्रनाथहरियुग्वंशाः पुरोवेधसा
आधानादिविधिप्रबन्धमहिताः सृष्टास्तदुत्थार्यभू -भर्तृस्वामिकजीविता सुकुलजा जैन्यो जयंसंविकाः ॥ १० ॥
मृसादित्रयदृग्विशुद्ध्यनुगचित्सत्कर्मणोआगम-द्रव्यो गोतमगोत्रभागभिजनो नेमिस्तथा सुव्रतः।
तद्वत्काश्यपगोत्रिणस्तदितरे णोकर्मनो आगम-द्रव्योद्येष्वभवन स्वयं यदुदरेष्वंवाः प्रसीदंतु ताः ॥ ११ ॥

मरुदेवीं वृषस्यांबा विजयामजितस्य च । सुषेणां संभवेशस्य सिद्धार्थां नंदनप्रभोः ॥ १२ ॥
सुमंगलाह्वां सुमतेः सुसीमां पद्मरोचिषः । वसुंधरां सुपार्श्वस्य लक्ष्मणां चन्द्रलक्ष्मणः ॥ १३ ॥
रामां श्रीपुष्पदंतस्य सुनन्दां शीतलार्हतः । विष्णुश्रियं श्रेयसश्च वासुपूज्यप्रभोर्जयाम् ॥ १४ ॥
सुशर्मलक्ष्मीं विमलार्हतोऽनंतस्य सुव्रताम् । ऐरिणीं धर्मनाथस्य कमलां शांतिशिनः ॥ १५ ॥
सुमित्रां कुंथुनाथस्य अरभर्तुः प्रभावतीम् । मल्लेः पद्मावतीं वप्रां सुव्रतस्य मुनीशिनः ॥ १६ ॥
विनतां नमिनाथस्य शिवां नेमिजिनेशिनः । देवदत्तां च पार्श्वस्य वीरस्य प्रियकारिणीम् ॥ १७ ॥
चतुर्विंशतिमप्येताः सवित्रीस्तीर्थकारिणाम् । स्थापयामीह तद्गर्भपवित्रितजगत्त्रयाः ॥ १८ ॥

यह स्तुति पढ पुष्प क्षेपे ।

भाषा दोहा—श्री जिन चौविस मात शुभ, तीर्थंकर उपजाय । कियो जगत कल्याण बहु, पूजों द्रव्य मंगाय ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्रमातरोऽत्रावतर २ संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ २ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट् सन्निधिकरणम् ।

छंद चाली—भरि गंगा-जल अविकारी, मुनि चित सम शुचिता धारी । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेंद्रमातृभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

घसि केशर चंदन लाऊं, भव ताप सकल प्रशमाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेंद्र मातृभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ अक्षत दीर्घ अखण्डे, तृष्णा पर्वत निज खण्डे । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेंद्रमातृभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुवरण मय पावन फूला, चित काम व्यथा निर्मूला । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेंद्रमातृभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताजा पकवान बनाऊं, जासे क्षुद रोग नशाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेंद्रमातृभ्यो चरुं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक रत्नन मय लाऊं, सब दर्शनमोह हटाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूपायन धूप जलाऊं, कर्मनका वंश मिटाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल उत्तम उत्तम लाऊं, शिव फल उद्देश बनाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेंद्रमातृभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुचि आठों द्रव्य मिलाऊं, गुण गाकर मन हरपाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येक अर्घ गर्भकल्याणक तिथिका ।

गीताछंद–सर्वार्थसिद्धि विमानसे जिन ऋषभ चय आए यहां, मरुदेवि माता गरभ शोभे होय उत्सव शुभ तहां ।
आषाढ़ वदि दुतिया दिना सब इन्द्र पूजें आयके, हमहूं करैं पूजा सुमाता गुण अपूरव ध्यायके ॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णा द्वितीयायां श्री वृषभनाथजिनेंद्र गर्भधारिकाय माता मरुदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

दोहा–जेठ अमावस सार दिन, गर्भ आय अजितेश । विजया माता हम जजें, मेटैं सर्व कलेश ॥

ॐ ह्रीं जेठकृष्णामावस्या श्री अजितजिनेंद्रगर्भधारिकाय श्री विजयादेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

संकरछंद–फागुन असित सित अष्टमीको गर्भ आए नाथ, धन पुण्य मात सुसैनका संभव धरे सुख साथ ।
उपकार जगका जो भया सुर गुरु कथत थक जाय, हम ल्यायके शुभ अर्घ पूजें विघ्न सब टल जाय ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णाष्टम्यां श्री संभवतीर्थंकरगर्भधारिकाय माता सुसैनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

गाथा छन्द–गर्भस्थिति अभिनन्दा, वैसाख सित अष्टमी दिना सारा । सिद्धार्था शुभ माता पूजूं चरण सुजान उपकारा ॥

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्लाष्टम्यां श्री अभिनंदननाथं गर्भधारिकाय श्री सिद्धार्थादेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

सोरठा-श्रावण सित पख आप, मात मंगला उर वसे। श्री सुमतीश जिनाय, पूजूं माता भावसों ॥

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ला द्वितीयायां श्री सुमति जिनेन्द्र गर्भे धारिकाय श्री मंगलादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५)

छंद शिखरणी-वदी षष्ठी जानो सुभग महिना माघ सुदिना, सु सीमा माताके गर्भ तिष्ठै पद्म सुजिना।
जजों लेके अर्घं मात देवी द्वन्द चरणा, कटैं जासे हमरे सकल कर्म लेहु शरणा ॥

ॐ ह्रीं माघ कृष्ण षष्ठयां श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्रं गर्भे धारिकाय श्री सुसीमादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६)

छंद धोदका-भादव शुक्ल छठी तिथि जानी, गर्भ धरे पृथवी महरानी। श्री सुपार्श्व जिननाथ पधारे, जजूं मात दुख टाल हमारे ॥

ॐ ह्रीं भाद्वशुक्लाष्टम्यां श्री सुपार्श्वजिनेंद्र गर्भधारिकाय पृथ्वीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७)

छंद शिखरणी-सुभग चैतर महिना असित पखमें पांचम दिना, सुलखना माताने गर्भ धारे चंद्र सु जिना ॥
जजों लेके अर्घं मात जिनके शुद्ध चरणा, कटैं जासे हमरे सकल कर्म लेहु शरणा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपचम्यां श्री चन्द्रप्रभुजिनेंद्र गर्भे धारिकाय सुलक्षणादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८)

सोरठा-पुष्पदंत भगवान, मात रमाके अवतरे। फागुन नौमि महान, जजौं मातके चरण जुग ॥

ॐ ह्रीं फागुणकृष्णनवम्यां पुष्पदंतजिनेंद्र गर्भे धारिकाय रमादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९)

चाली-वदि चैत तनी छठ जानी, सीतल प्रभु उपजे ज्ञानी। नंदा माता हरखानी, पूजूं देवी उर आनी ॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्ण अष्टम्यां श्री सीतल जिनं गर्भे धारिकाय श्री नंदादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१०)

चाली-वदि जेठ तनी छठि जानी, विष्णुश्री मात वखानी। श्रेयांसनाथ उपजाए, पूजूं माता गुण गाए ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्ण षष्ठयां श्री श्रेयांसनाथं गर्भे धारिकाय श्री विष्णुश्रीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११)

चाली-आषाढ़ वदी छठि गाई, श्री वासपूज्य जिनराई। सु जया माता हरखानी, पूजूं ता पद उर आनी ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णाषष्ट्यां श्री वासपूज्यजिनं गर्भे धारिकाय श्री जयादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१२)

छंद मालती-जेठ वदी दसमी गणिये शुभ, मात सुश्यामा गर्भ पधारे, नाथ विमल आकुलता हारी, तीन ज्ञानधर धर्म प्रचारे।
ता माताका धन्य भाग है, पूजत हैं हम अर्घ सुधारे, मंगल पावें विघ्न नशावें, वीतरागता भाव सम्हारे ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्टकृष्णदशम्यां श्री विमलनाथं गर्भे धारिकाय श्री श्यामादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)

अडिल्ल—एकम कातिक कृष्ण गर्भमें आयके, नाथ अनंत सु सुरजा माता पायके ।
पूजूं देवी सार धन्य तिस भाग है, जासे विघ्न पलाय उदय सौभाग है ॥

ॐ ह्रीं कातिककृष्णा एकम् श्री अनंतनाथं गर्भे धारिकाय श्री सुरजादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

अडिल्ल—मात सुव्रता धर्म जिनं उर धारियो, तेरसि सुदि वैशाख सु सुख संचारियो ।
पूजूं माता ध्याय धर्म उद्धारणी । शिवपद जासे होय सुमंगल कारिणी ॥

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ल त्रयोदश्यां श्री धर्म जिनं गर्भे धारिकाय श्रीसुव्रतादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)

शिखरनी—महा ऐरादेवी परम जननी शांति जिनकी । सुदी सातें भादों करत पूजा इन्द्र तिनकी ।
जजूं मै ले अर्घ मात जिनके द्वंद चरणा । भजे मम अघ सारे नसत भव है जास शरणा ॥

ॐ ह्रीं भादो शुक्ला सप्तम्यां श्री शांतिजिनं गर्भे धारिकाय श्री ऐरादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)

चाली—सावन दशमी अंधियारी, जिन गर्भ रहे सुखकारी । प्रभु कुन्थु श्रीमती माता, पूजूं जासों लहुं साता ॥

ॐ ह्रीं श्रावण कृष्ण दशम्यां श्रीकुंथ जिनं गर्भे धारिकाय श्रीमती देव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)

छंदमालती—है गुण शील तनी सरिता, अरनाथ तनी जननी सुख खानी, मित्रा नाम प्रसिद्ध जगतमें, सेव करत देवी हरखानी ।
मुक्ति होनको यश धारत है, सम्यक् रत्नत्रय पहचानी, फागुनकी सित तीज दिना अर, गर्भ धरे जजिहों महरानी ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्ला तृतीयायां श्री अरनाथं गर्भे धारिकाय श्री मित्रादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)

दोहा—चैत्र शुक्ल पड़िवा वसे, मल्लिनाथ जिनदेव । प्रजावतीके गर्भमें, जजूं मात कर सेव ॥

ॐ ह्री चैत्रशुक्ल एकं श्री मल्लिजिनं गर्भे धारिकाय श्री प्रजावतीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)

अडिल्ल—श्रावण वदि दुतिया दिन सुव्रतनाथ जू, श्यामा उरमें वसे ज्ञान त्रय साथ जू ।
ता माताके चरणकमल पूजें सदा, मंगल होय महान विघ्न जावैं विदा ॥

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णा द्वितीयाया श्री मुनिसुव्रतजिनं गर्भे धारिकाय श्यामादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)

सोरठा—नमिनाथ भगवान, विपुला माता उर वसे । क्वार वदी दुज जान, ता देवी पूजूं मुदा ॥

ॐ ह्रीं आश्विन कृष्ण द्वितीयायां श्रीनमिनाथं गर्भे धारिकाय विपुलादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)

मालती—कार्तिक मास सुदी छठिके दिन श्री जिन नेम प्रभू सुखकारी । मात शिवाके गर्भ पधारे मुदित भए जगके नरनारी ॥
धन्य मात शिव–पथ अनुगामी मोक्ष नगरकी है अधिकारी । पूजूं द्रव्य आठ शुभ लैके मिटत कालिमा कर्म अपारी ॥

ॐ ह्रीं कार्तिक शुक्ला षष्ठ्यां श्रीनेमिजिनं गर्भे धारिकाय शिवादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)

चाली छन्द—वैसाख वदी दुज जाना, श्रीपार्श्वनाथ भगवाना । वामा देवी उर आए, पूजत हम भाव लगाए ॥

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्णा द्वितीयाया श्रीपार्श्वजिनं गर्भे धारिकाय वामादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)

छन्द मालती—मास अषाढ़ सुदी छठिके दिन, श्री जिन वीर प्रभू गुणधारी । त्रिशला माता गर्भ पधारे, सकल लोकको मंगलकारी ॥
मोक्षमहलकी है अधिकारी, शांत सुधाकी भोगनहारी । जजूं मातके चरण युगलको, हरूं विघ्न होऊं अविकारी ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़ शुक्ला षष्ठ्या श्री वीर प्रभु गर्भे धारिकाय श्री त्रिशलादेव्यै अर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

जयमाल ।

छंद स्रग्विणी—धन्य है धन्य हैं मात जिननाथकी, इन्द्र देवी करैं भक्ति भावां थकी । पूजि हों द्रव्य ले विघ्न सारे टलें, गर्भ कल्याण पूजन सकल अघ दलें ॥ १ ॥ रूपकी खान हैं शीलकी खान हैं, धर्मकी खान हैं ज्ञानकी खान हैं । पुण्यकी खान हैं, सुक्खकी खान हैं, तीर्थजननी महा शांतिकी खान हैं ॥ २ ॥ भेद विज्ञानसे आप पर जानतीं, जैन सिद्धांतका मर्म पहचानतीं । आत्म–विज्ञानसे मोहको हानतीं, सत्य चारित्रसे मोक्ष पथ मानतीं ॥ ३ ॥ होत आहार नीहार नहिं धारतीं, वीर्य अनुपम महा देह विस्तारती । गर्भ धारण किये दुःख सब टालतीं, रूपको ज्ञानको वृद्धि कर डालतीं ॥४॥ मात चौविस महा मोक्ष अधिकारिणी, पुत्र जनती जिन्हें मोक्षमें धारिणी । गर्भ कल्याणमें पूजते आपको, हो सफल यज्ञ यह छांड़ संतापको ॥५॥

घत्ता त्रिभंगीछंद—जय मंगलकारी मात हमारी बाधाहारी कर्म हरो, तुम गुण शुचिधारी हो अविकारी सम दम यम निज मांहि धरो ।
हम पूजें ध्यावें मंगल पावें शक्ति बढ़ावें तृप पाके । जिन यज्ञ मनोहर शांत सुधाकर सफल करैं तव गुण गाके ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिन मातृभ्यः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

फिर इन्द्र व अन्य जो यज्ञके पात्र वहां हों माता पिता सब खडे हो सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति व शांतिभक्ति करें (जो पाठके अन्तमें हैं) और कायोत्सर्ग रूपमें १०८ दफे णमोकारमंत्र जपकर मंजूषापर पुष्प क्षेपण करें तथा अन्य प्रतिमाओंपर जो प्रतिष्ठाके लिये हों पुष्प क्षेपण करें–विसर्जन पढ़ इस समयकी पूजा समाप्त करें।

(८) देवियोंका माताकी सेवा व प्रश्नोत्तर करना–तीसरे पहर या रात्रिको जब अवसर हो तब फिर मण्डप नरनारियोंसे भरा जावे। परदेके भीतर दूसरे चबूतरेपर इस भांति दर्शनीय रचना रची जावे–एक सिंहासनपर माता बैठी हो, मंजूषा वस्त्रसे ढकी पासमें विराजित हो। आठ कुमारिका देवियें तरह २ सेवा कर रही हो, आठ मंगल द्रव्य एक ओर रक्खे हों, एक देवी तलवार लिये पीछे खड़ी हों, दो देविया दोनों ओर चमर कर रही हों, एक देवी पखा लिये धीरे २ पंखा कर रही हो, एक अतरदान लिये हो, एक फूलोंका गुलदस्ता, एक पानीकी झारी, एक माताके चरण दाबती हो। ऐसी दशामें परदा उठे। पहले ही सूचक पात्र यह सभाको कहे कि दिक्कुमारिया माताकी सेवा कर रही हैं तथा तरह २ के प्रश्नोत्तर करके माताको प्रसन्न कर रही हैं। जब परदा उठ जावे तब दो मिनट पीछे दो चमर १ तलवार व १ पंखेवाली इन चारको छोड़कर शेष चार देवियां अपने हाथकी वस्तु एक ओर रखकर बैठ जावें और नम्बरवार या क्रमवार मातासे प्रश्नोत्तर करें।

प्रश्न १–दोहा–सरल उच्च छाया सहित, वृक्ष नाम क्या होय। कौन मनोहर अंग तव, एक शब्द क्या होय ॥

उत्तर माता–सालकानन–अर्थात् दोहा–साल वृक्ष वन और सुन, केश सहित मुख अंग। सालकानन वाक्यमें, उभय अर्थका संग॥

प्रश्न (२)–कः सुपिंजरेमें रहें, कः निष्ठुर वाणि। कः आधार जीवका, कः अखर चुत जाणि ॥ इस दोहेको पूरा कीजिये।

माता उ०–शुकः सुपिंजरमें रहे, काकः निष्ठुर वाणि। लोकः अधार जीवका, श्लोक अखर चुत जाणि ॥

प्रश्न (३)–कौन गर्भमें आपके, कौन नहीं तुझ पास। कौन हते भूखा मनुष, उत्तरकी अरदास ॥

उ० माता–तुक् अर्थात् पुत्र, शुक् अर्थात् शोक, रुक् अर्थात् रोग। दोहा–पुत्र देवि मम गर्भमें, शोक नहीं मुझ पास। रोग हने भूखा मनुष, यही बात है खास।

प्रश्न (४)–रुचिकर भोजन कौन है, गहराको जल थान। कौन नाथ है आपका, उत्तर दीजे जान ॥

उत्तर–रूप, कूप, भूप, अर्थात्–रुचिकर भोजन दाल है, गहरा कूप वखान। भूप नाथ मेरा सही, देवी उत्तर जान ॥

प्रश्न (५)—नाम जिनेन्द्र बखानिये, हाथी लक्षण और। एक वाक्यमें अर्थ दो, कह दीजे बुधि खोल ॥
उत्तर—सुरवरद अर्थात्—देवोंको वर देत है, प्रभु सुखरद बखान। सुन्दर शब्द सुदातको, धारक नाग प्रमाण ॥

प्रश्न (६)—तुमसी त्रिया कौन जग आन। उत्तर माता—तीर्थंकर सुत जनै महान।
प्रश्न (७)—जगमें सुभट कौनसे माय। उत्तर—जे नर जीतें विषय कषाय।
प्रश्न (८)—कौन कहावे कायर दीन। उत्तर—इन्द्रीमद मेटन बल हीन।
प्रश्न (९)—कौन सत्पुरुष नर भव धार। उत्तर—जो साधै पुरुषारथ चार।
प्रश्न (१०)—कौन कापुरुष कहिये मर्म। उत्तर—जो शठ साध न जाने धर्म।
प्रश्न (११)—धिक किनको कहिये सर्वंग। उत्तर—जे नर करें प्रतिज्ञा भंग।
प्रश्न (१२)—कहे कौन नर नित्य पवित्त। उत्तर—ब्रह्मचर्य धारी दिढ़ चित्त।
प्रश्न (१३)—कौन पशू मानुष आकार। उत्तर—जिनके हिरदे नाहिं विचार।
प्रश्न (१४)—वधिर कौनसे उत्तर देह। उत्तर—जैन सिद्धांत सुनैं नहिं जेह।
प्रश्न (१५)—मूक नाम नर कैसे लहैं। उत्तर—जो हित सांच वचन नहिं कहैं।
प्रश्न (१६)—लाम्बी भुजा कौन कर हीन। उत्तर—जिन पूजा मुनि दान न कीन।
प्रश्न (१७)—कौन पांगले पांव समेत। उत्तर—जे तीरथ परसे न अचेत।
प्रश्न (१८)—कौन कुरूप जननि कहु एह। उत्तर—शील सिंगार विना नर जेह।
प्रश्न (१९)—वेग कहा करिये वड़ भाग। उत्तर—दिक्षा ग्रहण जगतको त्याग।
प्रश्न (२०)—जियको कौन शरण है माय। उत्तर—पंच परम गुरु सदा सहाय।
प्रश्न (२१)—कौन तपस्वी भव-दुख भरैं। उत्तर—आतम अनुभव विन तप करैं।
प्रश्न (२२)—जगमें कौन रतन है सार। उत्तर—सम्यग्दर्शन रत्न अपार।
प्रश्न (२३)—को विन नर यह पशू समान। उत्तर—विद्या विन नर पशू समान।

प्रश्न (२४)-कौन हते त्रय जग वश होय। उत्तर-मोह हते त्रय जग वश होय।
प्रश्न (२५)-क्या बिन गृहधारी दुख पाय। उत्तर-पैसे बिन नित ही दुख पाय।
प्रश्न (२६)-नाम पुरुष कैसे सफलाय। उत्तर-जो पुरुषारथ करै बनाय।
प्रश्न (२७)-कौन पुत्र है मृतक समान। उत्तर-विद्या विनय हीन सुत जान।
प्रश्न (२८)-काकी भक्ति करे सुख होय। उत्तर-श्री जिनराज भक्ति सुख होय।
प्रश्न (२९)-कासे नर जग उन्नति करै। उत्तर-वृथा समय नहिं खोवै करै।
प्रश्न (३०)-प्रात प्रथम क्या करिये माय। उत्तर-सामायिक शुभ ध्यान लगाय।
प्रश्न (३१)-कन्या कैसे सार गनाय। उत्तर-जो विद्या पढ़ विनय कराय।
प्रश्न (३२)-कौन समय कन्या वर जोगं। उत्तर-जब युवति दृढ़ हो सुत जोग।
प्रश्न (३३)-कैसा वर कन्या वर जोग। उत्तर-उद्योगी युवान दृढ़ योग।
प्रश्न (३४)-कौन नार ग्रह सुमति बढ़ाय। उत्तर-मिष्ट वचन भावी सुख दाय।
प्रश्न (३५)-कौन काज उत्तम है माय। उत्तर-आतम ध्यान परम सुखदाय।
प्रश्न (३६)-कौन कथासे पाप नशाय। उत्तर-धर्म कथासे पाप नशाय।
प्रश्न (३७)-को व्यवहार धर्म सुखदाय। उत्तर-धर्म अहिंसा जग सुखदाय।
प्रश्न (३८)-कौन धनी जगमें सुख पाय। उत्तर-सन्तोषी दानी सुख दाय।
प्रश्न (३९)-कौन माय जगको वश करै। उत्तर-हितमित मिष्ट वचन उच्चरै।
प्रश्न (४०)-कौन उपाये मन बदलाय। उत्तर-हितमित धर्म उपदेश सुनाय।
प्रश्न (४१)-कौन भांति त्रय लोक जिताय। उत्तर-शुक्ल ध्यान जो धरै स्वभाय।
प्रश्न (४२)-कौन करै अविरतिका नाश। उत्तर-समदमसहित समय अभ्यास।
प्रश्न (४३)-कौन उतारे कर्मन भार। उत्तर-जो द्वादश तप करै सम्भार।

प्रश्न (४४)—कौन ग्रही मनमें सुख पाय। उत्तर—न्याय मार्गे धन जो कमाय।
प्रश्न (४५)—मात कौन रोगी नहिं होय। उत्तर—जो विवेकसे भोगी होय।
प्रश्न (४६)—संकट समय कौन सहकार। उत्तर—धैर्य धर्म सत तत्त्व विचार।
प्रश्न (४७)—मरण समय क्या करिये काम। उत्तर—समता भाव शांत परिणाम।
प्रश्न (४८)—मित्र कौन है जग हितकार। उत्तर—जो कुमार्गसे लेय निकार।
प्रश्न (४९)—शत्रु कौन है मात बताय। उत्तर—धर्म छुड़ाय कुपथ ले जाय।
प्रश्न (५०)—शरण कौनकी है सुखकार। उत्तर—आतम निज तीर्थंकर सार।

इसी तरह और भी उपयोगी प्रश्नोत्तर होसक्ते हैं। पीछे पखेवाली जोरसे पखा करे, पुष्पवाली फूल सुघावे, अतरवाली अतर सुंघावे, व कपडोंमें लगावे, चमरोंवाली जोरसे चमर करें। इतनेमें बाजे बाहर बजें। इधर ऊपरसे पहलेकी तरह रतनकी वर्षा हो। यदि रत्न या सितारे या चांदी सोनेके फूल कम हों तो रंगे हुए पीले चावल साथमें मिलाले। दो मिनट तक खूब वर्षा हो तब सब लोग जयजयकार कहें। पश्चात् देवियां माताके सामने खड़ी हो स्तुति पढ़ें—

चौपाई—जय जय मात परम अविकारी, देखत हमको सुख है भारी। तुम सेवातें पुण्य कमाया, अपना सुर भव सफल कराया ॥१॥
धन तीर्थंकर तीर्थ प्रचारें। मिथ्यादृष्टी जीव उबारें ॥१॥ आप तरें औरनको तारें। धर्म जहाज जगत विस्तारें ॥२॥
तिनको जनने हारी माता। यातें जग उद्धारी माता ॥ तीन लोक सिरताजा माता। नमन करत तोकूं जगमाता ॥३॥
तू है श्री जिन गृह सुखकारी। जिन तीर्थंकर उरमें धारी ॥ यातें परम पूज्य सुखदाई। नमन करत पुन पुन हे माई ॥४॥
तुम शिवगामी उत्तम नारी। शीलाभूषण उत्तम धारी ॥ श्री जिनमात कृपा अब करिये। सेवकके सब पातक हरिये ॥५॥
इस तरह देवियां गाती रहें, परदा गिर जावे। यहांतक गर्भकल्याणककी विधि पूर्ण हुई।

अध्याय चौथा।

जन्मकल्याणक ।

गर्भकल्याणकसे दूसरे दिन सवेरे जन्मकल्याणककी क्रिया करनी उचित है।

(१) प्रभुका जन्म होना व इन्द्रका आना—बडे सवेरे ही सब लोगोंको आमंत्रण किया जावे, टिकटों द्वारा मंडपमें बैठें। प्रतिष्ठाके पात्र शीघ्र ही वेदीके निकट आवें। खास कर आचार्य व इन्द्र तथा पिता आकर गर्भकल्याणकमें कही हुई विधिके अनुसार जैसा न० (५) मे कहा है अगशुद्धि, व सकलीकरण करें, अंगरक्षा करें व अभिषेक करके नित्यपूजा व सिद्धपूजा करें। फिर उसी प्रमाण तीनों कुंडोंमें होम उसीतरह कहेहुए प्रमाण होजावे। यह सब काम होचुकनेपर फिर आगेकी क्रिया बताते हैं।

अति प्रातःकालसे यह काम शुरू हो क्योंकि जबतक जन्मकल्याणक पूर्ण न हो तबतक सब पात्रोंको व दर्शकोंको यथाशक्ति भोजन न करना योग्य है। तब सब इन्द्र इन्द्राणी वहांसे चले जावें, आचार्य व माता पिता आदि रहें। आगे परदा पड़ जावे। परदेके भीतर सिंहासनपर माता बैठी हो, पासमें प्रतिमा सहित मंजूषा विराजमान हो व आठ मगलद्रव्य रक्खे हों व आठों देवियां सेवामें हाजिर हों। ऐसा प्रबन्ध किया जावे कि बाहर खूब बाजे बजें, घंटा घडियालके बजनेका प्रबन्ध हो तथा बाहर इन्द्र अपनी सेना तैयार करे। भवनवासीके दस, व्यंतरके आठ, कल्पवासीके बारह व ज्योतिषीके एक ऐसे कुल इन्द्र ३१ हैं। ३१ सब इन्द्र जरूर बने जो शुद्ध धोती दुपट्टा पीला पहने हों, मुकुट लगाए हों। यदि ३१ प्रत्येन्द्र और होसकें तो वे भी बन जावें। २७ इन्द्रोंके व प्रत्येन्द्रोंके मुकुटोंपर उनके जातिवाचक नाम अंकित होसकें तो कराए जावें। इनका प्रयोजन ऐसा कि दर्शकोंको शोभनीक विदित हों। वे नाम ऐसे रहें–(१) असुरेन्द्र (२) नागेन्द्र (३) विद्युतेन्द्र (४) सुपर्णेन्द्र (५) अग्नीन्द्र (६) वातेन्द्र (७) स्तनितेन्द्र (८) उदधीन्द्र (९) द्वीपेन्द्र (१०) दिगिन्द्र (११) किन्नरेन्द्र (१२) कि पुरुपेन्द्र (१३) महोरगेन्द्र (१४) गन्धर्वेन्द्र (१५) यक्षेन्द्र (१६) राक्षसेन्द्र (१७) भूतेंद्र (१८) पिशाचेन्द्र (१९) चन्द्रेन्द्र (२०) सौधर्मेन्द्र (२१) ईशानेन्द्र (२२) सानतकुमारेन्द्र (२३) माहेन्द्रेन्द्र (२४) ब्रह्मेन्द्र (२५) लान्तवेन्द्र (२६) शुक्रेन्द्र (२७) शतारेन्द्र (२८) आनतेन्द्र (२९) प्राणतेन्द्र (३०) आरणेन्द्र (३१) अच्युतेन्द्र। यदि प्रत्येन्द्र बने तो इन्द्रके स्थानमें हरएकके आगे प्रत्येन्द्र जोड़ा जावे जैसे असुर प्रत्येन्द्र, चन्द्रका प्रत्येन्द्र सूर्य हैं।

ऐरावत हाथीके समान हाथीपर इंद्राणीसहित सौधर्म, ईशान, सनतकुमार, माहेन्द्र ये चार इन्द्र बैठे हों। अन्य इन्द्र दूसरे बाहनोंपर बैठ सक्ते हैं, जैसे घोडे बैल आदि पर सब सजे हुए हों। इन्द्रकी सेना ७ प्रकारकी होती है–हाथी, घोड़े, रथ, गंधर्व, नृत्यकारिणी, अप्सराएं, गंधर्व और वृषभ। यथासंभव ये सामान एकत्र किया जाय। मंडपकी कुछ दूरीसे यह जुलूस निकल चुके व बाजे गाजेके साथ मंडपकी तरफ आरहा हो, साथमें नरनारी भी हों, इधर मंडपमें दूसरे चबूतरे पर नित्यपूजा व होमके पीछे जब परदेके भीतर सब सामान एकत्र होजावे और बाजे बजते हों, घंटा घड़ियाल बजते हों और सब पात्र अपने २ हाथोंमें पुष्प लेलेवें, तथा भगवानके विराजमान करनेका एक भद्रासन ऊंचा विराजमान हो जहांसे भगवान सबको दीख सकें। इस आसनको नीचे लिखा मंत्र पढ़ पवित्र करें। "ॐ ह्रां ह्रीं ह्रं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रजलेन श्री पीठप्रक्षालनं करोमि स्वाहा" जलके छींटे देवे। फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ उसपर श्री लिखे–"ॐ ह्रीं श्रीं हैं श्रीलेखनं करोमि स्वाहा" अब परदा उठाया जावे तब यकायक आचार्य कायोत्सर्ग ध्यानकर नीचे लिखा मंत्र पढ़ प्रतिमाको भद्रासन पर विराजमान करे।

"ॐ ह्रीं त्रैलोक्योद्धरणधीरं जिनेन्द्रं भद्रासने उपवेशयामि स्वाहा।" इस समय सब नरनारी चारों तरफ जय जय नंद नंद शब्द कहें व खूब बाजे बजें। फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ पुष्प प्रतिमा पर क्षेपें। "ॐ ह्रां ह्रीं ह्रू ह्रौं ह्रः श्री सिद्धचक्राधिपतये अष्टगुणसमृद्धाय फट् स्वाहा" तथा यदि और प्रतिमा प्रतिष्ठाकी हों तो उनपर भी क्षेपण करें। फिर आचार्य नीचेके श्लोक पढ़ें–

देव त्वय्यद्य जाते त्रिभुवनमखिलं चाद्य जातं सनाथं। जातो मूर्तोद्य धर्मः कुमतबहुतमो ध्वस्तमद्यैव जातम्॥
स्वर्मोक्षद्वाः कपाटं स्फुटमिह निवृत्तं चाद्य पुण्याहमाशी। जीतं लोकाग्रचक्षुर्जय जय भगवज्जीव वर्धस्व नंद॥ ७॥

तथा भाषामें स्तुति पढ़े।

चौपाई–धन्य नाथ तुम आज प्रकाशे। तीन भवन जन अब हुल्लासे॥ धर्म तीर्थ मानो उपजाया। कुमति मार्गका ध्वंश कराया॥ मोक्षद्वार पट अब उघड़ाए। जीवो वर्धौरे नाथ स्वभाए॥

इतना पढ़ फिर मूल प्रतिमापर व अन्यपर पुष्प क्षेपे। इधर मंगल पाठ पढ़ा जाता हो कि इन्द्रकी सेना आकर पहुंचे तथा मण्डपकी तीन प्रदक्षिणा देवे। सर्व समाज बाहर खड़ा हो–(जो इन्द्र बने हों उनको विशेष टिकट दिया जावे) विना टिकट कोई भीतर प्रवेश न कर सके) तब इन्द्र इन्द्राणी हाथीसे उतरे और इन्द्र इन्द्राणीसे कहे—

दोहा-देवी जाहु प्रसूति घर, लावो तीर्थ कुमार। माता कष्ट न होय कछु, राखो यही विचार।

मात्र इन्द्राणी भीतर चवूतरेपर आवे, इन्द्र बाहर रहे। प्रतिमाजीके पास उस समय माता हो व देवियां हों व आचार्य हो तथा और कोई न हो। इन्द्राणी विनय सहित जाकर पहले कुछ देर तीर्थंकर व माताका दर्शन करे फिर तीर्थंकरकी मूर्तिकी व माताकी तीन प्रदक्षिणा देकर पहले मूर्तिको नमस्कार करे फिर सामने खड़े होकर स्तुति पढे—

चौपाई-धन धन मात परम सुखकारी, तीन लोक जननी हितकारी। मंगलकारी पुण्यवती तू, पुत्रवती शुचि ज्ञानमती तू॥
तव दर्शनते हम सुख पाए, हर्ष हृदयमें नाहिं समाए। धन्य जन्म माता हम जाना, देख तुझे अर श्रीभगवाना॥

स्तुति करनेके पीछे कुछ देर विनयसे खड़ी रहे। इतनेमें माताको नींदसी आजावे तब एक नारियलको कपड़ेसे ढका हुआ जो वहां रक्खा है पहलेसे ही उसको उस भद्रासनपर रखकर और भगवानको दोनों हाथोंसे उठाले और बार २ देखकर प्रसन्न हो और अपना मस्तक नमावे, तब आठों देविया आठ मंगल द्रव्य हाथमें लेकर आगे२ चलें-(मंगल द्रव्य-छत्र, ध्वजा, कलश, चमर, ठोना (सुप्रतिष्ठ), झारी, दर्पण, पंखा (ताड़का)। माता वडी विनयसे भगवानको लेजा रही है, सब नरनारी खड़े होजाते हैं और चांदी सोनेके पुष्प या रंगे हुए चावलोंकी वृष्टि प्रभुपर करते हैं जो नरनारियोंको अपने पास पहलेसे रखने चाहिये। मडपके बाहर सब इंद्रोंके आगे सौधर्म इंद्र राह देख रहा है। इंद्राणी जाकर इद्रके दोनों हाथोंकी हथेलीपर भगवानको विराजमान कर देती है, तब इंद्र वडे भावसे भगवानका स्वरूप देखता है। जिस समय इद्राणी प्रतिमाजीको लेजावे उस समय आचार्य अन्य प्रतिष्ठायोग्य मूर्तियों पर भी पुष्प क्षेपण करे। फिर इंद्र नीचे प्रकार स्तुति पढता है, सब समाज चुप है। मंडपसे नरनारी भी धीरे २ आजाते हैं और जलूसमें शरीक होजाते हैं।

पद्धरी छन्द-तुम जगत ज्योति तुम जगत ईश। तुम जगत गुरू जग नमत शीस॥ तुम केवलज्ञान प्रकाशकार, तुम ही सूरज तम मोहहार। तुम देखे भव्य कमल फुलाय, अघ भ्रमर तुरत तहंसे पलाय, ॥१॥ जय महा गुरु जय विश्वज्ञान, जय गुणसमुद्र करुणानिधान ॥२॥ जो चरण कमल माथे धराय, वह भव्य तुरत सद्ज्ञान पाय। हे नाथ! मुक्ति लक्ष्मी भरतार, तुमको देखत है प्रेम धार ॥३॥ कृतकृत्य भए हम दर्श पाय, हम हर्ष नहीं चिनमें समाय। हम जन्म सफल मानो भरतार, तुमको परशे हे भव उतार ॥ ४ ॥

इस तरह स्तुति पढ़के मस्तक नमावे तब सर्व इन्द्रादिक देव जय जय शब्द करें व मस्तक नमावें, तब इन्द्र उच्च स्वरसे आज्ञा करे,

हाथ ऊंचा कर कहे—"हे देवगणों ! श्री तीर्थंकर महाराजकी भक्तिमें आनन्द मनाते हुए, जय जयकार शब्द कहते हुए, मंगल गीत गाते हुए, भगवानके गुणोंमें अनुरागी होते हुए, भाव क्रम व नियमसे चलते हुए शीघ्र ही सुमेरु पर्वतपर पधारो और क्षीरसागरके पवित्र जलसे प्रभुका पाण्डुक शिलापर अभिषेक करके अपने जन्मको सुधारो।" इतना कह इन्द्र इन्द्राणी ऐरावत हाथीपर चढ़ जाते हैं। भगवान् सौधर्म इन्द्रकी गोदमें हैं, ईशान इन्द्र पीछे बैठे छत्र सफेद किये हुए हैं। सनतकुमार और माहेन्द्र इन्द्र दोनों ओर खड़े होकर चमर ढार रहे हैं। इस तरह जुलूस बडे नियमके साथ १ घण्टेके भीतर सुमेरु पर्वतपर पहुंच जावे।

(२) सुमेरू पर्वतकी, क्षीर समुद्रकी तथा मंडपकी रचना—मुख्य मंडपसे उत्तरदिशाकी ओर किसी एकांत स्थानमें जो पवित्र हो, सुमेरु पर्वत बनाया जावे। जो तीन कटनीदार सुन्दर हो उसको सुवर्णमई पीतरंगसे पोता जावे। ऊपर जानेके लिये दोतरफ सीढ़ियां हो। ऊपर वीचमें ऐसा एक गड्ढा किया जावे कि भगवानके न्हवनका जल भीतरसे जाकर जमीनके भीतर ही चला जावे, ऊपरसे गिरकर वहे नहीं कि पैरोंमें आवे। सबके ऊपर पांडुकशिला अर्धचंद्राकार बनाई जावे जो सफेद रंगसे पुती हो, स्फटिकके समान चमकती हो। इसके ऊपर कमलाकार सिंहासन बने जो पीतरगका हो। उसके इधर उधर इन्द्रोंके खड़े होनेके दो कुछ ऊंचे आसन हों जो सिंहासनसे नीचे हों। सीढ़ियोंको छोडकर कटनीके सब तरफ छोटे २ वृक्षोंके नांदे सुन्दरताके लिये रक्खे जावें व १६ मंदिरोंके स्थानमें १६ मंदिरोंके आकार ४ नीचे भूमिपर चारो ओर, चार चार चारों ओर तीन कटनीके वहां बना दिये जावें। यह विचित्ररंगोंसे पुते हुए हो जिससे प्रगट हो कि मेरुके चारों वनोंमें १६ मंदिर हैं। इस पर्वतसे इतनी दूर जितनी दूर दो पंक्तियोंसे इन्द्र या देव खडे होकर हाथोंहाथ कलश लासकें, एक नहर क्षीरसमुद्रके स्थापनमें बनाई जावे, जिसमें न्हवन होनेके पहले शुद्ध दूधसे मिला हुआ पानी भर दिया जावे जिसमे लहरे आती हो व पानी दूध समान दीखे। धूपके बचाव आदिके निमित्त मण्डप ऊपर छा दिया जावे ताकि सब समूह मण्डपके भीतर आजावे। पर्वत भी उसीके नीचे रहे। १०८ कलश व १ कलश गन्धोदकका ऐसे १०९ कलश सुवर्ण, चादी व अन्य धातुके एकसे तय्यार रहें। यदि धातुके न हों तो मिट्टीके ही लिये जावें। ये सब कलश धोकर उस नहरके दो तरफ ५४, ५४ रख दिये जावें, उनमे साथिया किया जावे, ढकनेको कमलका पुष्प हो या कोई पत्ता हो या नारियल हो या सुन्दर रकाबी हो। कलशोंके स्थापनके समय "ॐ ह्रीं स्वस्त्यै कलशस्थापनं करोमि स्वाहा।" यह मंत्र पढ़े। गन्धोदकके कलशमें चंदन, केशर, अगर आदि सुगंधित द्रव्योंसे मिला हुआ जल भरा जावे। ये १०८ कलश खाली रक्खे रहें। सामग्री तय्यार की जावे तथा एक छोटी चौकी या तख-

तपर २४ कोठोंका मण्डल तैयार किया जावे। भगवानके पहुंचनेके पहले ही आचार्य **नीरजसे नमः** इस मंत्रसे सर्व भूमिको शुद्ध कर आवे। यहांपर दर्शकोंके बैठनेका स्थान नियत किया जावे। पूजा व अभिषेकका स्थान अलग किया जावे। पर्वतसे नहरतकका मार्ग जानेका साफ रक्खा जावे। बैठनेवाले इससे हटकर बैठें। चारों तरफ पर्वतके कुछ भूमि छोड़कर दर्शक बैठें।

(३) **तीर्थंकर भगवानका अभिषेक**—अभिषेकके समय आठ दिक्पाल—अग्नि, यम, नैऋत्य, वरुण, पवन, कुवेर, ईशान और धरणेंद्र आठ दिशाओंमें सुन्दर छडी लिये हुए मंडपमें खड़े रहें, इनपर भी मुकुट हो। ऐरावत हाथी सहित सर्व समूह पहले इस पर्वतकी तीन प्रदक्षिणा देवे। जिस सिंहासनपर भगवान विराजमान होंगे उसको नीचे लिखे मंत्रसे जलके छींटे देकर पवित्र करे।

"ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रजलेन पीठप्रक्षालनं करोमि स्वाहा" फिर उसपर नीचेलिखा मंत्र पढ़ श्री लिखे।

"ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीलेखनं करोमि स्वाहा।" तीन प्रदक्षिणा देनेके पीछे हाथीसे उतारकर इंद्र श्री भगवानको नीचेलिखा मंत्र पढ़कर सिंहासनपर विराजमान करे तब सब जय जय शब्द कहें।

ॐ ह्रीं ह श्री धर्मतीर्थाधिनाथभगवन्निहपांडुकशिलापीठे तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा।" फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ प्रतिमाको स्पर्श करे।

ॐ उसहाय दिव्वदेहाय सज्जोजादाय महप्पण्णाय अणंतचउट्ठयाय परमसुहपइट्ठयाय णिम्मलाय सयंभुवे अजरामरपरमपदपत्ताय परमपदाय मम इत्थवि सण्णिहिदाय स्वाहा। फिर सौधर्म व ईशान इन्द्र प्रतिमाके दोनों तरफ खडे होजावें और ऊपर कोई न रहे, आचार्य भी नीचे आजावे। क्षीरसमुद्र तक दोनों ओर पंक्ति बन्ध सीढ़ीसे लेकर इन्द्रगण एक एक इतने२ दूर खड़े हों कि कलशको हाथोंहाथ देसकें। नहरके पास ५४-५४ कलश रक्खे हों, एक एक कलश भरके व ढकके एक२ दूसरेको देता जावे। कलश दोनों इन्द्रोंके हाथमें आवें तब मंगलीक मनोहर बाजे बजने लगें, स्त्रियां मंगल पढ़ने लगे। जय जय शब्द होवे। ऊचा हाथ करके सौधर्म व ईशान इंद्र नवन करें। न्हवनका जल नीचे न आवे, सिंहासनसे नीचे जाकर मेरुके भीतर चला जावे। एक दो वर्तन पास रख दिये जावें जो भरते जावें। न्हवन शुरू करनेके पहले आचार्य नीचे खड़े हुए यह मंत्र पढ़े—

"ॐ क्षीरसमुद्रवारिपुरितेन मणिमयमंगलकलशेन भगवदर्हत् प्रतिकृति स्नापयामः ॐ श्रीं ह्रीं ह्रूं व मं हं सं तं प झ्वी क्ष्वी हं सः नमोऽर्हते स्वाहा।" यह मंत्र बराबर पढ़ता रहे जबतक १०८ कलशका न्हवन न होजावे। दोनों इन्द्र बराबर न्हवन कराके एक एक भाई नीचेकी कटनीपर दोनो ओर खडा रहे जो खाली कलशोंको इन्द्रोके हाथसे लेकर नीचे रखवाता जावे। उसीको वह नारि-

यल व ढकना भी इन्द्र न्हवन करनेके पहले दे दे–जितने इन्द्र पंक्ति बांधकर नहर तक खड़े हों जब वहांके सब कलश उठाकर एक२ ही हरएकके हाथमें रह जावे तब सौधर्म ईशान इन्द्र नीचे आजावें और वारी वारीसे एक २ इन्द्र चढ़कर स्नान करावें और नीचे आजावें इसतरह १०८ कलशका स्नान पूर्ण होजावें। जिस समय अभिषेक हो उस समय बड़े धूपायनमें धूप भी खेई जाती हो जिसकी सुगंध सब ओर फैले। फिर सौधर्म इन्द्र ऊपर जाता है और गंधोदकके कलशसे अभिषेक करता है। उस समय आचार्य वही मंत्र पढ़ते हैं परंतु "क्षीरसमुद्रवारिपरिपूरितेन" के स्थानमें गंधोदकपूरितेन इतना बदल देते हैं। फिर इन्द्र भगवानके ऊपर स्वच्छ जलसे स्नानकी धारा डालता है तब शांतिपाठ सब इन्द्र पढ़ते हैं–

दोधकवृत्तम्–शान्तिजिनं शशिनिर्म्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रम्। अष्टशतार्च्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥

पञ्चममीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च। शांतिकरं गणशान्तिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥

दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ। आतापवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥

तं जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि। सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

वसन्ततिलका–येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः।

ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥ ५ ॥

इंद्रवज्रा–संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम्। देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥६॥

स्रग्धरावृत्तम्–क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः। काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके। जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप–प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः। कुर्वन्तु जगतः शांतिं वृषभाद्याः जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

फिर नीचे लिखा श्लोक आचार्य पढ़े।

"यो नैर्मल्यगुणादिभूपिततनुर्दीप्त्या बलेनोर्जसा। युक्तश्चानपवर्त्यकायुरनिशं सक्तश्च मुक्तिश्रिया ॥

नार्थस्तस्य जगत्प्रभोः स्नपनतः किं त्वाप्तुमेतान्गुणा। निंद्राद्यैरभिषिक्त एष भगवान्पायदपायाज्जिनः ॥

शांतिं च कांतिं विजयं विभूतिं तुष्टिं च पुष्टिं सकलस्य जंतोः। दीर्घायुरोग्यमनीष्टसिद्धिं कुर्याज्जिनस्नानजलप्रवाहः ॥

यह मंत्र पढकर मस्तकपर लगावें ।

" निर्मलं निर्मलीकरणं पावनं पापनाशनं । जिनगंधोदकं वंदे अष्टकर्मविनाशकम् ॥

अथवा नीचेका श्लोक पढ़ गंधोदक लगावे ।

घातिव्रातविघातजातविपुलश्रीकेवलज्योतिषो । देवस्यास्य पवित्रगात्रकलनात्पूतं हितं मंगलं ॥
कुर्याद् भव्यभवार्तिदावशमनं स्वर्मोक्षलक्ष्मीफल–। प्रोद्यद्धर्मलताभिवर्धनमिदं सद्गंधगंधोदकम् ॥ ७ ॥

फिर २ बडे ग्लासोमें गन्धोदक भरा जाय। दो ग्लास प्राशुक जलसे भरे हों। एक गन्धोदक व एक पानीका ग्लास स्त्रियोंमें किसी कन्या द्वारा व १ गन्धोदक व १ पानीका ग्लास पुरुषोंमें किसी पुरुष द्वारा भेजा जावे। ऊपरसे थोड़ासा गंधोदक लेकर नीचे आचार्य आदि सब इंद्र पूजाके पात्र लगाकर जन्म सफल करें। इन्द्र नीचे आजावें और इन्द्राणी जाकर पहले भगवानके अंगमें केशर चंदनका लेप करे, मस्तकमें मुकुट धारे, तिलक लगावे, कर्णोमें कुण्डल, गलेमें हार, भुजामें बाजुबन्ध, हाथोंमें कडे, कमरमें करधनी, चरणोंमें घूघुरूं। शुद्ध सुन्दर धोती व कपडे पहनावे। (पहले ही एक देवी इन वस्त्राभूणोंको लिये हुए इन्द्राणीके पास पहुंचे।) अन्य सब इन्द्रादि बैठ जावें। इन्द्राणी भी नीचे आजावे–बैठ जावे, मात्र सौधर्म इन्द्र खड़े होकर नीचेकी स्तुति पढ़े—

स्तुति ।

त्वं देव ! वीतरागोऽसि नार्थः स्तवननिंदने । तथापि भक्तिवशगः स्तवीमि कतिचित्पदैः ॥ ७७४ ॥
मंगलं शरणं लोकोत्तमोऽर्हन् जिनराड् जिनः । सिद्ध आचार्यसंपूज्यः साधुः साधुपितामहः ॥ ७७५ ॥
प्राग्र्यः पापहरोऽधीशो निःकषायो गुणाग्रणीः । पावनं परमंज्योतिः परमेष्ठी सनातनः ॥ ७७६ ॥
अव्यक्तो व्यक्तमूर्तिस्तमलक्ष्यो लक्षणातिगः । सुलक्ष्म्यो लक्षणज्ञेयः पापशत्रुरुदारधीः ॥ ७७७ ॥
प्रणीतार्थः प्रमाणात्मा सुनयो नयतत्त्ववित् । प्रणधिः प्रणवो नाद्यो ज्ञानदर्शननायकः ॥ ७७८ ॥
पुराणपुरुपोऽहार्यरूपो रूपातिगो महान् । कामहा कमनो काम्यः कामगामी कलानिधिः ॥ ७७९ ॥
कम्रः कामयिता कांतः कामनातीतकामुकः । कालुष्यहंता कामारिः कोपावेशहरो हरः ॥ ७८० ॥
स्वयंभूर्विधिरुत्साहधीरः सुकृतभावनः । स्रष्टा भूतपतिः साक्षी त्रैलोक्यपरमेश्वरः ॥ ७८१ ॥

प्रभूष्णुरधिदेवात्मा विश्वराड् विश्वतोमुखः। विश्वयोनिर्जिष्णुरीशः संवदः पुण्यनायकः ॥ ७८२ ॥
धर्मानुवाहो धर्मज्ञो वेदविद् वदतांवरः। भव्यभानुर्मखज्येष्ठस्त्वं हि ब्रह्मपदेश्वरः ॥ ७८३ ॥
भूष्णुः स्थिरतरः स्थाष्णुरचलो विमलो विभुः। महीयान् जातिसंस्कारः कृतकृत्यो महस्पतिः ॥ ७८४ ॥
वाग्मी वाचस्पतिः प्राज्ञो गुणरत्नाकरो निधिः। शास्ता सर्वज्ञ ईशानः आप्तः सर्वत्रलोचनः ॥ ७८५ ॥
कूटस्थो निर्विकारोऽस्तिनास्त्यवाच्यगिरांपतिः। स्याद्वादनायको नेता मोक्षमार्गोपदेशकः ॥ ७८६ ॥
निरीहः सुगतो भास्वान् लोकालोकविभावसुः। अनंतगुणसंपूज्यो निसयज्ञोऽसि विश्वराड् ॥ ७८७ ॥
एवमष्टोत्तरशतां नाम्नां पातु मां भवबंधनात्। मोचय स्वात्मसंभूतिं देहि देहि महेश्वर ॥ ७८८ ॥

फिर भाषामें स्तुति पढ़े—

पद्धरी छन्द—जय वीतराग हत राग दोष। रापत दर्शन क्षायिक अदोष ॥ तुम पाप हरण हो निःकषाय। पावन परमेष्ठी गुणनिकाय ॥१॥ तुम नय प्रमाण ज्ञाता अशेष। श्रुतज्ञान सकल जानो विशेष ॥ तुम अवधिज्ञान धारी विशाल। मति ज्ञान धरण सुखकर कृपाल ॥२॥ तुम काम रहित हो काम जीत। तुम विद्यानिधि हो कर्म जीत ॥ तुम शांत स्वभावी स्वयं बुद्ध। तुम करुणानिधि धर्मी अक्रुद्ध ॥३॥ तुम वदतांवर कृतकृत्य ईश। वाचस्पति गुणनिधि गिरा ईश ॥ तुम मोक्षमार्ग उपदेशकार। महिमा तुमरी को लहे पार ॥ ४ ॥

दोहा—नाम लिये श्रुतिके किये, पातक सर्व पलाय। मंगल होवे लोकमें, स्वात्मभूति प्रगटाय ॥

फिर इन्द्र मण्डलकी पूजा करे। पहले नीचे प्रमाण करे—

यस्योदारदयस्य जन्महरतो जन्माभिषेकोत्सवं। चारौ मेरुमहीधरस्य शिखरे दुग्धैस्तु दुग्धोदधेः ॥
चक्रे शक्रगणो महागुणनिधेः श्रीपादपद्मद्वयं। तस्यैकादशधा महेन महतामाराध्यमाराधये ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्री रिषभ जिनेन्द्र अत्रावतर २ संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ २ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट् सन्निधिकरणम्।

यत्रागाधविशालनिर्मलगुणे लोकत्रयं सर्वदा। सालोकं प्रतिबिंबितां प्रविशतां नित्यामृतानंदनम् ॥ सर्वाब्जानिमिषास्पदं स्मृतिगतं तापापहं धीमता—मर्हत्तीर्थमपूर्वमक्षयमिदं वार्धारया धारये ॥१॥ ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनंतानंतज्ञानशक्तये जलं नि०।

गन्धश्चन्दनगन्धबन्धुरतरो यद्दिव्यदेहोद्भवो । गन्धर्वाद्यमरस्तुतो विजयते गन्धांतरं सर्वतः ॥ गन्धादीनखिलानवैति विशदं गन्धादिमुक्तोऽपि य-स्तं गन्धाद्यघगन्धमात्रहतये गंधेन संपूजये ॥ ॐ ह्रीं परमसहजसौगंध्यबंधुराय गन्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

इंद्राहींद्रसमर्चितैरनुपमैर्दिव्यैर्बलक्षाक्षतैः । यस्य श्रीपदसन्नखेंदुसविधे नक्षत्रजालायितम् ॥ ज्ञानं यस्य समक्षमक्षतमभूद्वीर्यं सुखं दर्शनम् । यायज्म्यक्षतसम्पदे जिनमिमं सूक्ष्माक्षतैरक्षतैः ॥ ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अक्षयफलप्रदाय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

यस्य द्वादशयोजने सदसि सद्गंधादिभिः स्वोपमा-नप्यर्थान्सुमनोगणान्सुमनसो वर्षंति विष्वक्सदा ॥ यः सिद्धिं सुमनः सुखं सुमनसां स्वं ध्यायतामावहे-त्तं देवं सुमनोमुखैश्च सुमनोभेदैः समभ्यर्चये ॥ ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे सुमनःसुखप्रदाय पुष्पं नि० ।

यद्व्याबाधविवर्जितं निरुपमं स्वात्मोत्थमत्यूर्जितं । नित्यानन्दसुखेन तेन लभते यस्तृप्तिमात्यंतिकीम् ॥ यं चाराध्य सुधाशिनो ननु सुधास्वादं लभंते चिरम् । तस्योद्यद्रसचारुणैव चरुणा श्रीपादमाराधये ॥ ॐ ह्रीं परमब्रह्मणेअनंतानंतसुखसंतृप्ताय चरुं नि० ।

स्वस्यान्यस्य सहप्रकाशनविधौ दीपोपमोऽप्यन्वहं । यः सर्वं ज्वलयन्ननंतकिरणैस्त्रैलोक्यदीपोऽस्यतः ॥ येनोद्दीपितधर्मतीर्थमभवत्सत्यं विभोस्तस्य स-द्दीप्त्या दीपितदिङ्मुखस्य चरणौ दीपैः समुद्दीपये ॥ ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनंतदर्शनाय दीपं नि० ।

येनेदं भुवनत्रयं चिरमभूद्धूपितं सोप्यहो । मोहो येन सुधूपितो निजमहोध्यानाग्निना निर्दयम् ॥ यस्यास्थानपदस्थधूपघटजैर्धूमैर्जगद्धूपितम् । धूपैस्तस्य जगद्वशीकरणसद्धूपैः पदं धूपये ॥ ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे वशीकृतत्रिलोकनाथाय धूपं नि० ।

यद्भक्त्या फलदायि पुण्यमुदितं पुण्यं नवं बध्यते । पापं नैव फलप्रदं किमपि नो पापं नवं प्राप्यते ॥ आर्हन्त्यं फलमद्भुतं शिवसुखं नित्यं फलं लभ्यते । पादौ तस्य फलोत्तमादिसुफलैः श्रेयःपदायार्चये ॥ ॐ ह्रीं परमब्रह्मणेअभीष्टफलप्रदाय फलं नि० ।

मंगं लाति मलं च गालयति यन्मुख्यं ततो मंगलं । देवोर्हन्त्यपमंगलोऽभिविनुतस्तैर्मंगलैः साधुभिः ॥
चञ्चच्चामरतालवृन्तमुकुरैर्मुख्यैनरैर्मंगलै-र्मुख्यं मंगलमिद्धसिद्धसुगुणान्सम्प्राप्तुमाराध्यते ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अरहंत इदं सकलमंगलद्रव्यार्चनं गृहीत्वं२ नमः परम मंगलेभ्यः स्वाहा ।

यहां मंगल द्रव्योंमेंसे किसीको लेकर उतारे व रक्खे—

ज्वलितसकलोकालोकलोकोत्तरश्री-कलितललितमूर्तं कीर्तितेन्द्रैर्मुनीन्द्रैः ॥
जिनवर तव पादोपांततः पातयामः । भवदवशमनार्थामर्थतः शांतिधाराम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्री क्लीं ऐं अर्हं अरहंत इदं शांतिधारां गृहीध्वं२ अर्हं नमः भद्रं भवतु जगतां शांतिधारां निःपातयामि शांतिकृद्भ्यः स्वाहा।
यहां जलकी तीन धारा देवे।

पुष्पेपोरिपवो वयं पुनरिदं पुष्पेषु निःशेषकम्। निष्पीतानि मधुव्रतैर्वयमिदं निष्पापसंसेवितम् ॥
इत्यालोच्य नमंत्यपास्य मदमित्याशंकयतीशते। निष्पीताखिलतत्वपादकमले पुष्पाणि निःपातये ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अरहंत इदं पुष्पांजलिप्राचनं गृण्हीध्वं २ नमोऽर्हद्भ्यो ध्यातृभिरभीप्सितफलदेभ्यः स्वाहा।
यहां पुष्पोंकी अंजली देवे। फिर मण्डलमें स्थापित २४ जन्म तिथियोंको स्मरण कर २४ तीर्थंकरकी पूजा करे।

स्थापना गीताछन्द–जिन नाथ चौविस चरण पूजा करत हम उमगाय। जग जन्म लेके जग उधारो जजैं हम चितलाय ॥
तिन जन्म कल्याणक सु उत्सव इन्द्र आय सुकीन। हम हूं सुमर ता समयको पूजत हिये शुचि कीन ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थंकराः जन्मकल्याणक प्राप्ताः अत्र अवतर २ संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

छन्द चाली–जल निर्मल धार कटोरी, पूजूं जिन निज करजोड़ी। पद पूजन करहुं वनाई, जासे भवजल तरजाई ॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन केशरमय लाऊं, भवकी आताप शमाऊं। पद पूजन करहुं वनाई, जासे भवजल तरजाई ॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत शुभ धोकर लाऊं, अक्षय गुणको झलकाऊं। पद पूजन करहु वनाई, जासे भवजल तरजाई ॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर पुहपनि चुनि लाऊं, निज काम व्यथा हटवाऊं। पद पूजन करहुं वनाई, जासे भवजल तरजाई ॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति०।

पकवान मधुर शुचि लाऊं, हनि रोग क्षुधा सुख पाऊं। पद पूजन करहुं वनाई, जासे भवजल तरजाई ॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय चरुं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक करके उजियारा, निज मोह तिमिर निरवारा। पद पूजन करहुं बनाई, जासे भवजल तरजाई ॥
ॐ ह्री ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन धूप खिवाऊं, निज अष्ट करम जलवाऊं। पद पूजन करहुं बनाई, जासे भवजल तरजाई ॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल उत्तम उत्तम लाऊं, शिवफल जासे उपजाऊं। पद पूजन करहुं बनाई, जासे भवजल तरजाई ॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सब आठों द्रव्य मिलाऊं, मैं आठों गुण झलकाऊं। पद पूजन करहुं बनाई, जासे भवजल तरजाई ॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येकके २४ अर्घ।

वदि चैत नवमि शुभ गाई, मरुदेवि जने हरषाई। श्री रिषभनाथ युग आदी। पूजूं भवमेट अनादी ॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णा नवम्यां श्री वृषभनाथजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१)

दसमी शुभ माघ वदीकी, विजया माता जिनजीकी। उपजे श्री अजित जिनेशा, पूजूं मेटो सब क्लेशा ॥
ॐ ह्री माघवदी दशम्यां श्री अजितनाथजिनेन्द्राय जन्कल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२)

कातिक सुदि पूरणमासी, माता सुसैन हुलासी। श्री संभवनाथ प्रकाशे, पूजत आपा पर भाशे ॥
ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्ला पूर्णमास्यां श्री संभवनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३)

शुभ चौदस माघ सुदीकी, अभिनंदननाथ विवेकी। उपजे सिद्धार्था माता, पूजूं पाऊं सुख साता ॥
ॐ ह्रीं माघशुक्ला चतुर्दश्यां श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४)

ग्यारस है चैत सुदीकी, मंगला माता जिनजीकी। श्री सुमति जने सुखदाई, पूजूं मैं अर्घ चढ़ाई ॥
ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला एकादश्यां श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५)

कातिक वदि तेरसि जानो, श्री पद्मप्रभू उपजानो। है मात सुसीमा ताकी, पूजूं ले रुचि समताकी ॥

ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्णा त्रयोदश्यां श्री पद्मप्रभुजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

शुचि द्वादश जेठ सुदीकी, पृथवी माता जिनजीकी । जिननाथ सुपारश जाए, पूजूं हम मन हरषाए ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ शुक्ला द्वादश्यां श्री सुपार्श्वनाथजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

शुभ पूस वदी ग्यारसको, है जन्म चन्द्रप्रभु जिनको । धन्य मात सुलखनादेवी, पूजूं जिनको मुनिसेवी ॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा एकादश्यां श्रीचंद्रप्रभुजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)

अगहन सुदि एकम जाना, जिन मात रमा सुख खाना । श्री पुष्पदंत उपजाए, पूजतहूं ध्यान लगाए ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्ला एकं श्री पुष्पदंतजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

द्वादश वदि माघ सुहानी, नंदा माता सुखदानी । श्री शीतल जिन उपजाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्री सीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)

फागुन वदि ग्यारस नीकी, जननी विमला जिन जीकी । श्रेयांसनाथ उपजाए, हम पूजत हीं सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णा दशम्यां श्री श्रेयांशनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)

वदि फाल्गुन चौदसि जाना, विजया माता सुख खाना । श्री वासपूज्य भगवाना, पूजू पाऊं निज ज्ञाना ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशा श्रीवासपूज्यजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)

शुभ द्वादश माघ वदीकी, श्यामा माता जिनजीकी । श्रीविमलनाथ उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्रीविमलनाथजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)

द्वादशि वदि जेठ प्रमाणी, सुरजा माता सुखदानी । जिननाथ अनन्त सुजाए, पूजत हम नाहिं अघाए ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा द्वादश्यां श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

तेरसि सुदि माघ महीना, श्रीधर्मनाथ अघ छीना । माता सुव्रता उपजाये, हम पूजत ज्ञान बढ़ाए ॥

ॐ ह्रीं माघ शुक्ला त्रयोदश्यां श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)

वदि चौदस जेठ सुहानी, ऐरादेवी गुण खानी । श्रीशांति जने सुख पाए, हम पूजत प्रेम बढ़ाए ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा चतुर्दश्यां श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१६)

पडिवा वैशाख सुदीकी, लक्ष्मीमति माता नीकी। श्रीकुन्थनाथ उपजाए, पूजत हम अर्घ चढ़ाए॥

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ला एकं श्रीकुन्थुनाथजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७)

अगहन सुदि चौदस मानी, मित्रादेवी हरषानी। अरि तीर्थंकर उपजाए, पूजे हम मन वच काए॥

ॐ ह्रीं अगहन शुक्ला चतुर्दश्यां श्रीअरितीर्थंकराय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१८)

अगहन सुदि ग्यारस आए, श्रीमल्लिनाथ उपजाए। है मात प्रजापति प्यारी, पूजत अघ विनशै भारी॥

ॐ ह्रीं अगहन शुक्ला एकादश्यां श्रीमल्लिनाथजिनेंद्राय जन्मकल्याणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१९)

दशमी वैसाख वदीकी, श्यामा माता जिनजीकी। मुनिसुव्रत जिन उपजाए, हम पूजत पाप नशाए॥

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्णा दशम्यां श्रीमुनिसुव्रतजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०)

दशमी आषाढ़ वदीकी, विपुला माता जिनजीकी। नमि तीर्थंकर उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए॥

ॐ ह्रीं आषाढ़ कृष्णा दशम्यां श्रीनमिजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१)

श्रावण शुकला छठि जानो, उपजे जिननेमि प्रमाणो। जननी सु शिवा जिनजीकी, हम पूजत हैं थल शिवकी॥

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ला षष्ठ्या श्रीनेमनाथजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२)

वदि पूष चतुर्दशि जानी, वामादेवी हरषानी। जिन पार्श्व जने गुणखानी, पूजें हम नाग निशानी॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा चतुर्दश्यां श्रीपार्श्वजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२३)

शुभ चैत्र त्रयोदश शुकला, माता गुणखानी त्रिशला। श्रीवर्द्धमान जिन जाए, हम पूजत विघ्न नशाए॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला त्रयोदश्या श्रीवर्द्धमानजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४)

जयमाल।

भुजंगप्रयात–नमो जै नमो जै नमो जै जिनेशा, तुम्हीं ज्ञान सूरज तुम्हीं शिव प्रवेशा। तुम्हें दर्श करके महामोह भाजे, तुम्हें पर्श करके सकल ताप भाजे॥१॥ तुम्हें ध्यानमें धारते जो गिराई, परम आत्म अनुभव छटा सार पाई। तुम्हें पूजते

निस इन्द्रादि देवा, लहैं पुण्य अदभुत परम ज्ञान मेवा ॥२॥ तुम्हारो जनम तीन भू दुख निवारी, महामोह मिथ्यात हियसे निकारी। तुम्ही तीन बोधं धरे जन्महीसे, तुम्हें दर्शनं क्षायिकं जन्महीसे ॥३॥ तुम्हें आत्मदर्शन रहे जन्महीसे, तुम्हें तत्त्व बोधं रहे जन्महीसे। तुम्हारा महा पुण्य आश्चर्यकारी, सु महिमा तुम्हारी सदा पापहारी ॥४॥ करा शुभ न्हवन क्षीरसागर सु जलसे, मिटी कालिमा पापकी अंग परसे। हुआ जन्म सफलं करी सेव देवा, लहूं पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ॥ ५ ॥

दोहा—श्रीजिन चौविस जन्मकी, महिमा उरमें धार। पूज करत पातक टलें, बढ़े ज्ञान अधिकार ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो महाअर्घ निर्वपामीति स्वाहा। फिर इन्द्र ऊपर जाता है और भगवानका नाम व चिह्न प्रगट करता है। चरणको स्पर्शकर यह मंत्र पढ़कर पुष्प भगवानपर क्षेपण करता है—

ॐ ह्रीं इक्ष्वाकुकुले नाभिभूपतेर्मरुदेव्यामुत्पन्नस्यादिदेवपुरुषस्य ऋषभदेवस्वामिनोऽत्र बिम्बे वृषभांकितत्वात् तद्गुणस्थापनं तेजोमयं करोमि स्वाहा। ॐ अयं महानुभावः परमेश्वरो वृषभेश्वरो भवतु।

फिर नीचे लिखे मंत्रको पढ़ते हुए इन्द्र अंग स्पर्शे व पुष्प प्रभुपर डाले। (मंत्रको आचार्य पढ़ सक्ता है नीचेसे।)

ॐ ऋषभादिदिव्यदेहाय सद्योजाताय महाप्रज्ञाय अनन्तचतुष्टयाय परमसुखप्रतिष्ठिताय निर्मलाय स्वयंभुवे अजरामरपदप्राप्ताय चतुर्मुखपरमेष्ठिनेऽर्हते त्रैलोक्यनाथाय त्रैलोक्यपूज्याय अष्टदिव्यनागप्रपूजिताय देवाधिदेवाय परमार्थसंनिहितोऽसि स्वाहा।

(१) ॐ अस्मिन्बिम्बे निःस्वेदत्वगुणो विलसतु स्वाहा। (२) ॐ अस्मिन् बिम्बे मलरहितत्वगुणो विलसतु स्वाहा। (३) ॐ अस्मिन् बिम्बे क्षीरवर्णरुधिरत्वगुणो विलसतु स्वाहा। (४) ॐ अस्मिन्बिम्बे समचतुरस्रसंस्थानगुणो विलसतु स्वाहा। (५) ॐ अस्मिन्-बिम्बे वज्रवृषभनाराचगुणो विलसतु स्वाहा। (६) ॐ अस्मिन्बिम्बे अदभुतरूपगुणो विलसतु स्वाहा। (७) ॐ अस्मिन् बिम्बे सुगंध-शरीरगुणो विलसतु स्वाहा। (८) ॐ अस्मिन्बिम्बे अष्टोत्तरसहस्रलक्षणव्यंजनत्वगुणो विलसतु स्वाहा। (९) ॐ अस्मिन् बिम्बे अतुल-वीर्यत्वगुणो विलसतु स्वाहा। (१० ॐ अस्मिन्बिम्बे हितमितप्रियवचनत्वगुणो विलसतु स्वाहा।

यहां आचार्य सबको कहे कि नाम व चिह्न यह प्रगट किया गया व दश अतिशय जन्म सम्बन्धी समझावे व कहे कि इनका स्थापन इस बिंबमें किया गया। फिर आचार्य नीचेके मंत्रोंको पढ़ता जावे। इंद्र अंग स्पर्शे व पुष्प मूर्तिपर क्षेपे।

(१) ॐ अर्हद्भ्यो नमः, (२) ॐ नवकेवललब्धिभ्यो नमः, (३) ॐ क्षीरस्वादुलब्धिभ्यो नमः, (४) ॐ मधुरस्वादुलब्धिभ्यो नमः,

(५) ॐ संभिन्नश्रोतृभ्यो नमः, (६) ॐ पादानुसारिभ्यो नमः, (७) ॐ कोष्ठबुद्धिभ्यो नमः, (८) ॐ बीजबुद्धिभ्यो नमः, (९) ॐ सर्वावधिभ्यो नमः, (१०) ॐ परमावधिभ्यो नमः, (११) ॐ ह्रौं वल्गुवल्गुनिवल्गुसुश्रवणे, (१२) ॐ ऋषभादिवर्धमानांतेभ्यो वपट्वपट् स्वाहा। (१३) ॐ णमोभयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कं जलंतं गच्छई आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जूए वा विवादे वा रयंगणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताण अपराजिदो भवदुक्खक्ख स्वाहा।

ऊपर लिखित वर्द्धमान मंत्र कहलाता है। इसप्रकार आकारशुद्धि करे। व नीचे प्रकार श्लोक पढ़कर विसर्जन करें।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया। तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥

आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनम्। विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥

मंत्रहीन क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च। तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥

आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमम्। ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥ ४ ॥

फिर इन्द्र आज्ञा करे–हे इन्द्रादिदेवो! जिसतरह श्री तीर्थंकर महाराजको लाए थे उसी तरह लेजाकर मातापिताकी गोदमें अर्पण कर व उन्हें भक्तिद्वारा प्रसन्नकर हम सबको पुण्य कमाना योग्य है। आज्ञा करनेके पीछे आचार्य व इंद्रादि पूजा समयके पात्र मेरुकी तीन प्रदक्षिणा कोई स्तुति पढ़ते हुए देवें। फिर भगवानको इन्द्र उठावे। पूर्वके समान ऐरावत हाथीपर इन्द्रादि बैठें और खूब जय जय शब्द हों और बाजे बजें। जुलूस १ घंटेके भीतर भीतर मंडपमें आजावें।

(४) राज्यांगणमें भगवानका पधारना और मात पिताको अर्पण व नृत्य–मंडपमें बैठनेका प्रबन्ध टिकटोंद्वारा रहे। जुलूस पहुंचनेपर इंद्र इन्द्राणी थोडेसे और इन्द्रों व देवोंके साथ मंडपमें आवें। इसके पहले ही दूसरे चबूतरेपर महाराज नाभिराज एक सिंहासनपर बैठे हों। दूसरे एक सिंहासनपर माता मरुदेवी निद्रित दशामें सहारेसे बैठी हो, पासमें वस्त्रसे लिपटा नारियल रक्खा हो, कुछ सभासद भी हो तथा माता पिताके बीचमें ऊचा सिंहासन भगवानके बैठनेका हो, परदा उठे। इन्द्र गोदमें तीर्थंकर भगवानको लिये हुए आवे और सिंहासनपर विराजमान करे तब यह मंत्र पढ़े।

ॐ नमोऽर्हते केवलिने परमयोगिने अनंतविशुद्धपरिणामपरिस्फुरच्छुक्लध्यानाग्निनिर्दग्धकर्मबीजाय प्राप्तानंतचतुष्टयाय सौम्याय शांताय मंगलाय वरदाय अष्टादशदोषरहिताय स्वाहा।

तब सब बैठ जावें । इन्द्राणी उठकर माताके पास आवे और हाथ फेरदे, मायामयी निद्रा हटावे, उस नारियलको उठाले । तब माता आश्चर्यमें उठ खडी हो । माता पिता दोनों खडे हो तीर्थंकरकी छबिको देख देख कर प्रसन्न हों और फिर बैठ जावें । तब इन्द्र उठे और माता पिताके आगे वस्त्राभूषणकी भेट रक्खे । दो थाल उस समय आजावें । एक थाल माताके व १ पिताके आगे रक्खे और पुष्पोंकी सुगंधित माला माता पिताके गलेमें पहरावे और उनकी स्तुति करे—

चौपाई—धन्य धन्य तुम लोक मंझारा, तुमरो सफल जन्म संसारा। तीन जगत गुरु तुम उपजाये, यातें जगत पूज्य ठहराए ॥१॥
तुम उदयाचल पर्वत मानो, पूर्वदिशा देवी मरु जानो । भानू समान प्रभू प्रगटाए, मोह ध्वांत इह लोक मिटाए ॥२॥
ग्रह तुमरा जिनमंदिर सारा, पूज्यनीय त्रिभुवन सुखकारा । तुम दोनों हो शिव अधिकारी, यातें पूजनीय हरवारी ॥३॥

ऐसी स्तुति करके इन्द्र भगवानको उठाकर माताकी गोदमें देता है, माता उठकर लेती है और विनय सहित बैठ जाती है और बारबार प्रभुको निरखती है । उधर प्रतिष्ठाचार्य अन्य प्रतिमाओंको थोडे जलसे अभिषेककर पोछकर केशर चंदनका लेप करके यह कहते जाते हैं—" अस्मिन् बिम्बे जन्मकल्याणकं आरोपयामि स्वाहा " और हरएकको वस्त्राभुषणोंसे सज्जित करते हैं । हरएक मूर्तिके लिये अलग २ वस्त्राभूषण होने चाहिये और फिर "दश अतिशयाकार शुद्धि नाम (यहां जो नामका चिन्ह हो वह लेकर) आदिकम् आरोपयामि स्वाहा" ऐसा कहकर हरएक मूर्तिपर पुष्प डाले । और नमस्कार करे । इधर इन्द्र फिर उठे और किसतरह मेरुपर न्हवन हुआ था उसे कहे तथा भगवानके पूर्वजन्मके ९ भवोंका संक्षेपसे वर्णन करे सो स्तुतिरूप गानके साथ बड़े भावसे कहे—

चौपाई—हम देवन सह मेरु पधारे, पांडुकवनमें आन सिधारे। पांडुक शिला महा शुचि रूपा, थाप्यो प्रभुको आनन्द रूपा ॥१॥
क्षीरोदधिसे कलश मंगाए, स्वर्णमई जल भर सुर लाए। श्रीजिनेंद्र अभिषेक सु कीना, जन्म सफल हमने कर लीना ॥२॥
शची वस्त्र आभूषण धारे, पूज प्रभूको यहां पधारे। धन्य जीव श्रीआदि जिनेशा, मुक्तिनाथ तीर्थंकर भेषा ॥३॥
यह संसार महान अपारा, आदि अन्त विन रहत करारा। यामें जीव कर्मवश घूमें, विन सम्यक्त स्वधर्म न चूमें ॥४॥
भव अनंत यह जीव धरे है, भ्रमत भ्रमत नहिं अंत करे है। जीव नाथका भ्रमण करे था, पुण्य उदयसे दुःख हरे था ॥५॥
इक भव लिया विदेह मंझारा, विद्याधर नृप पुत्र दुलारा। नाम महाबल राज्य सु कीना, जैनधर्ममें दृढ़ चित दीना ॥६॥
अंत समाधि धार तन त्यागा, द्वितिय स्वर्ग उपजा शुभ भागा। देव नाम ललितांग सुपाया, स्वयंप्रभादेवी मनभाया ॥७॥

तहँते चय विदेह उपजाया, वज्रजंघ नृप हो सुख पाया। स्वयंप्रभा भी तहं उपजाई, नारि श्रीमती नृपके भाई ॥८॥
दोनोंने मुनि दान सु दीना, उत्तम भोगभूमि सुख लीना। तहं चारण मुनि आ उपदेशा, धर्म जिनेश्वर हत रति द्वेषा ॥९॥
सुनत ग्रहण दोनोंने कीना, सम्यग्दृष्टी हुए प्रवीणा। द्वितीय स्वर्गमें श्रीधर देवा, द्वितीय स्वयंप्रभ अद्भुत देवा ॥१०॥
श्रीधर धर्मध्यान तहं कीना, चयकर जन्म विदेह सु लीना। राजपुत्र हो सुविधि दयाला, श्रावक ग्यारह प्रतिमा पाला ॥११॥
अंतिम साधु महाव्रत धारे, और समाधिमरण सुखकारे। प्राणसाग सोलम दिवि आए, अच्युतेंद्र होकर सुख पाए ॥१२॥
तहंसे चय विदेह उपजाए, वज्रनाभि सम्राट सुहाए। चक्रवर्ति साधे छः खंडा, राज्य कियो सु न्याय दृप मंडा ॥१३॥
धारे मुनिव्रत तप बहु कीना, आतम ध्यान कर्म कृप कीना। सोलहकारण भाव सुध्याए, तीर्थंकर शुभ कर्म बंधाए ॥१४॥
उपशमश्रेणीसे तन त्यागा, चौथे गुणथानकमें लागा। सर्वारथसिद्धी उपजाए, तेतिस सागर आयू पाए ॥१५॥
तहं भी धर्म भाव चित लाए, पुण्य उदय या नगरी आए। धनश्री रिपभ वृपभ शुभ अंका, तुम टालत भव भ्रम आतंका ॥१६॥
हम दर्शनसे जो सुख पाया, वचन अगोचर जात न गाया। धन्य पिताश्री नाभि सुराजा, मरुदेवी माता हित काजा ॥१७॥
देव जनम हम अब सफलाया, तुम सेवन कर पाप हटाया। चिर जीवो श्री आदि कुमारा, धर्मतीर्थका करहु प्रचारा ॥१८॥

इसनतर स्तुति पढ़ यदि इन्द्र नृत्य जानता हो तो करे अन्यथा सभामें कोई इन्द्र समान नृत्य व भजन १५ मिनटके लिये करे, सब सभा सुने, इन्द्र भी बैठ जावे। फिर इन्द्र उठे। उसी समय कमसे कम पांच देव मुकुटधारी छोटी वयके बालक ८–९ आवें। इन्द्र भगवानके अंगूठेमें अमृत समान दूध लगावे और यह मंत्र पढ़े "ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकरांगुष्ठे अमृतं स्थापयामि स्वाहा" और उन पांच देवोंको आज्ञा करे—"हे देवो! तुम तीर्थंकरकी भली भांति सेवा करना और पुण्य कमाकर जन्म सफल करना। तब वे देव कहें—हम आपकी आज्ञा बजा लावेंगे, प्रभुकी सेवाकर पुण्य कमाएंगे। फिर इन्द्र भगवानको उठाता है तब सब सभा खड़ी होजाती है, माता पिता भी खड़े होजाते हैं और सब कोई पुष्पोंकी व चांदी सोनेके फूलोंकी वर्षा प्रभुके ऊपर करते हैं। पहले चबूतरेके बाहर जो परदा पड़ा था वह उठता है, इधर उधरके परदे उठ जाते हैं तथा मूलवेदीके बगलमें जो राज्यमहल बना था वहां सिंहासनपर प्रभुको विराजमान कर देता है। उस समय इन्द्र पहले लिखा मंत्र पढता है—"ॐ नमोऽर्हते अष्टादशदोषरहिताय स्वाहा" नमस्कार करता है और लौटने लगता है, इतनेमें बाहरका परदा गिरता है। जन्मकल्याणकोत्सव पूर्ण होता है, सर्व अपने २ स्थानपर जाते

हैं, आहार पान करते हैं। यहांतक क्रिया पूर्ण करके ही भोजन करना उचित है। इस सब क्रियाको लगातार ही करना चाहिये। सवेरेसे दोवजे दोपहर तक होसक्ती है।

अध्याय पांचवां।

गृही जीवन।

(१) दोलनारूप क्रीड़ाका उत्सव–रात्रिको मंडपमें दोलना क्रीड़ा की जावे। दूसरे चवूतरेपर झूला सुन्दर लगाया जावे उसमें हिंडोला संजोया जावे, उसपर प्रभुको वस्त्राभूषण सहित, मुकुट सहित विराजमान किया जावे। आठ देवियां हाजिर हों आठ दिशाओंमें खड़ी हों। उनमेंसे पीछेके कोनेकी दो दोनों तरफ चमर ढोरें। पांच कुमारदेवोंको जिनको इन्द्रने नियत किया था हिंडोलेके पीछे खड़ा कर दिया जावे। माता खड़ी २ भगवानको झुलाती हो, सामने एक टेबुलपर रुपयोंकी भेंटके लिये बड़ा थाल रखा हो, कोनेमें एक भाई दातारोंके नाम लिखनेवाला बैठा हो। सब सामान सज जावे तब परदा उठाया जावे। उस समय जयजयकार शब्द हो। प्रथम ही इंद्राणी कई देवियोंके साथ दो थालोमें वस्त्राभूषणादि सजाकर लावे व हाथमें अशरफी व रुपया लावे और सभामें आकर वे दोनों थाल भेटरूप बगलमें रक्खे तथा प्रणाम करके स्तुति पढ़े–

चौपाई–जय जय नाथ दरश तुम पाए, तुम महिमा वरणी नहिं जाए। तुम अपार सुंदरता धारी, काम जीत जगजन मनहारी॥१॥
तुम त्रिज्ञानधारी परमेशा, देखत तुम्हें मिटे भव क्लेशा। हम आतुर चहुंगति संसारा, तुमहि दुःख मेटन अविकारा॥२॥
तुम जग मोह तिमिर निर्वारो, सम दम यमसे सब अघ टारो। धन्य मात तुझ पुण्य अपारा, तीर्थंकर सुत तव जगप्यारा॥३॥

ऐसी स्तुतिकर मोहर या रुपया या रत्न भेटरूप थालमें डारकर हिंडोला हिलावे और फिर नमस्कार कर विनय सहित देवियोंके साथ लौट जावे। नोट–इस समय जो आमदनी थालमें आवे वह सब प्रतिष्ठाके खर्चमें लगाई जावे।

फिर नर नारियां आकर भगवानको झुलावें। इसका प्रवन्ध ऐसा किया जावे कि १० टिकट खास बनाए जावें। १ दफे पांच पुरुष नम्बरवार फिर पांच स्त्रियें नम्बरवार छोड़ी जावें–ये नम्बरवार जावें। रुपया आदि थालमें भेटकर प्रभुको झुलावें। नमस्कार कर

लौट आवें। अर्धी मिनिटसे अधिक कोई न झुलावे, जब पांच लौट आवे व टिकट वापिस आजावे तब फिर पांचको भेजा जावे। इसतरह नम्बरवार स्त्री–पुरुष दोनों आते जाते रहें। मंडपमें बैठे लोग जय जय शब्द कहें तथा सामने भगवानके भजन गान नृत्य मनोहर होता रहे। जब सब भेट देचुकें व अपना मनभर भगवानको झुला चुकें तब परदा डाल दिया जावे। भीतर भगवानको राज्यमहलकी वेदीपर वस्त्र सहित विराजमान किया जावे।

(७) तीर्थंकरको राज्याभिषेक–जन्मकल्याणकके दूसरे दिन सवेरे आचार्य इन्द्र आदि सहित सवेरे ही मंडपमें जन्मकल्याणकके दिनकी भांति सकलीकरण, अभिषेक व नित्यपूजा, सिद्धपूजा तथा होम करे। फिर पहले चबूतरे पर परदा डाला जावे। दूसरे चबूतरेपर राजसभाकी रचना की जावे। बीचमे प्रभुके बैठनेका आसन हो। उसके पास ही नाभिराजाका आसन हो, कुछ सभासद कायदेसे बैठे हों। अभिषेक व पूजाका प्रबन्ध हो व भगवानको राजयोग वस्त्र व खड्ग आदि शस्त्र देनेका प्रबन्ध हो। परदा उठे तब सब इन्द्र प्रत्येन्द्र व आचार्य आवें, आठ मंगलद्रव्य स्थापित हों। इन्द्र महाराजा नाभिको मस्तक झुकाकर नमन करे व स्तुति करे।

दोहा–श्री तीर्थंकर राज्यपद, देनेका उत्साह। किया आपने नाभिजी, है यह उत्तम राह ॥
प्रभु समर्थ पालन प्रजा, न्याय मार्गसे आज। राज्यार्पणकी सकल विधि, करना है सुखसाज ॥

तब नाभिराज कहते हैं—

दोहा–राज्यतिलक अर्पण विधि, कीजे हे दिविराज। होय सुखी सारी प्रजा, होय अटल यह राज ॥

आज्ञा पाते ही इन्द्र भीतर जाकर प्रभुको राज्यमहलसे लाते हैं तब सब खड़े होते हैं, जयजयकार शब्द होते हैं, पुष्पोंकी वर्षा होती है। बीचमें न्हवनका आसन विराजमान कर उसपर प्रभुको स्थापित करता है। वस्त्राभूषण अलग उतारकर रखता है। इतनेहीमें दूसरे इन्द्र तथा आठ देवीकन्याएं सुन्दर कलशोको जलसे भरे हुए पुष्पमालासे शोभित व कमल या नारियलसे ढके हुए व केशरका साथिया बना हुआ अपने दोनों हाथोंपर धरे हुए लाते हैं। सामने गीत व नृत्य होता है। बाहर खुब बाजे बजते हैं। ये सब इन्द्र और देवियां एक साथ गाती हैं—

गीताछंद–शचिनाथ हम जल शुद्ध लाए क्षीरसागरसे भला। गंगा महा नद सिंधु आदी कुंड गंगासे भला ॥
शुचि दीप नंदी वापिका सागर स्वयंभूसे भला। अभिषेक कारण राज पट हो तीर्थनायकके भला ॥

प्रथम ही इन्द्र हाथ उच्च करके अभिषेक करे। अभिषेक जबतक होता रहे आचार्य पढ़ते रहें "ॐ ह्रीं श्री तीर्थराजस्यराज्याभिषेकं करोमि स्वाहा" फिर दूसरे इन्द्र अभिषेक वारी वारीसे करें। फिर नाभिराजा अभिषेक करे। फिर दूसरे कुछ राजा जो सभामें थे अभिषेक करें, फिर इन्द्र केशरादि द्रव्योंसे मिश्रित गंधजलसे अभिषेक करे, फिर पुष्पोंकी वर्षा करे, फिर स्वच्छ जलसे अभिषेक करके भगवानका शरीर पोंछकर इन्द्र राज्य आसनपर विराजमान करे। गंधोदक सबको पूर्ववत् पहुंचाया जाय तब मंगलआरती सब पात्र मिलकर पढ़ें तथा इन्द्र कपूरादि जलाकर इसप्रकार आरती करता है—

चौपाई—जय जय तीर्थंकर अविकारी। जय जय मुक्तिवधू वर भारी॥ टेक॥ जय जय प्रजा न्याय विस्तारी। जय जय अनुपम वल अधिकारी॥ जय०॥ जय जय शस्त्र शास्त्रगुण धारी। जय जय विद्या-निपुण अपारी॥ जय०॥ जय जय पंद्रहवें मनु भारी। जय जय जगत करन उद्धारी॥ जय०॥ जय जय कर्मभूमि विस्तारी। जय जय आदि जिनं भवतारी॥ जय०॥

आरती करके फिर इन्द्र वस्त्र व शस्त्र खड्ग आदिसे सज्जित करे। कंठमें पुष्प व रत्नमाला डालें व अन्य आभूषण पहनावें। इतनेहीमें नाभिराज उठते हैं और इसभांति कहकर अपना मुकुट उतारकर प्रभुके मस्तकपर धारण करते हैं—

दोहा—सर्व राज महराजके, पालक दीन दयाल। तुमही हो जग पूज्य प्रभु, वृषभदेव जगपाल॥

फिर इन्द्रने मस्तकपर पट्टबंध भी किया तब सब बैठ जाते हैं। सभामे नृत्य व गान १५ मिनट तक होता है। तब इन्द्र व देव विनय सहित चले जाते हैं। अष्ट देवियां रह जाती हैं जो प्रभुके पीछे खड़ी रहती हैं उनमें दो देवियां जबसे सिंहासनपर प्रभु बैठे तबहीसें चमर कर रही हैं। अब अनेक राजालोग आकर प्रभुको भेट चढ़ाकर नमस्कार कर सभामें बैठ जाते हैं—पहले राजा हरि, फिर राजा अकम्पन, फिर काश्यप फिर सोमप्रभ आते हैं। इनके पीछे अनेक राजा जिनके स्थानके नाम आचार्य कहते जाते हैं आते हैं और भेट धरकर सभामें बैठते हैं। नोट—जो रुपया भेटमें आवे सो प्रतिष्ठाकार्यमें खर्च हो। कुछ नाम यहां दिये जाते हैं—

(१) अंगदेश, (२) बंगदेश, (३) कलिंगदेश, (४) तुलुवदेश, (५) कर्णाटकदेश, (६) पांड्यदेश, (७) तंजोरदेश, (८) सिंधुदेश, (९) कच्छदेश, (१०) गुजरातदेश, (११) महाराष्ट्रदेश, (१२) पंचालदेश, (१३) मालवादेश, (१४) राजपूताना, (१५) नैपालदेश, (१६) भूटानदेश, (१७) मध्यप्रदेश, (१८) खानदेश, (१९) नीमाड़देश, (२०) आसामदेश, (२१) ब्रह्मदेश, (२२) तिब्बत,

(२३) चीनदेश, (२४) श्याम, (२५) जापान, (२६) रूस, (२७) ग्रीकदेश, (२८) रूमदेश, (२९) फारसदेश, (३०) अरबदेश, (३१) गांधारदेश, (३२) मिश्रदेश । इत्यादि,

फिर सब जब बैठ जावें तब भगवानकी ओरसे राज्यनीतिका उपदेश आचार्य व अन्य कोई विद्वान सभामें प्रभाव पड़े इसतरह कहे—

राजा हरि ! (इतना कहनेपर राजा खड़ा होजावे) आपको भगवान हरिवंशका नायक स्थापित करते हैं । वह हाथ जोड मस्तक नमा बैठ जाता है ।

राजा सोमप्रभ ! (वह भी उठता है) आपको भगवान कुरुवंशका शिखामणि स्थापित करते हैं । उसी तरह वह भी नमनकर बैठ जाता है ।

राजा अकंपन ! (वह भी उठता है) आपको भगवान नाथवंशका अधिपति नियत करते हैं । उसी तरह नमनकर बैठता है ।

राजा काश्यप ! (वह भी उठता है) आपको भगवान उग्रवंशका शिरोमणि नियत करते हैं । उसी तरह नमनकर बैठता है ।

आजसे भगवान यह नियम करते हैं कि जो शस्त्र धारणकर अपने बाहुबलसे प्रजाकी रक्षा करनेको समर्थ हैं वे क्षत्रियवंशी व क्षत्रियवर्णधारी कहलाएंगे । जो थल व जलद्वारा अनेक देशोंमें यात्रा करके व्यापार करने योग्य हैं वे वैश्यवंशी या वैश्यवर्णधारी कहलाएंगे । जो इन दोनों प्रकारकी योग्यता नहीं रखते हैं तथा सेवा आदि करके व आज्ञा पालन करके आजीविका करने योग्य हैं उनको शूद्र कहा जायगा । भगवान आज तीन वर्णोंकी स्थापना करते हैं । भगवान असिकर्मके द्वारा क्षत्रियोंको; मसि, कृषि, वाणिज्यद्वारा वैश्योंको व शिल्प तथा विद्याकला द्वारा शूद्रोंको आजीविका करनेका अधिकार नियत करते हैं तथा यह भी नियम बनाते हैं कि हरएक वर्णवाले अपनी २ आजीविका करें तथा विवाहका यह नियम करते हैं कि प्रत्येक वर्णवाले अपने अपने वर्णमें विवाह करें, काम पडे क्षत्रिय वैश्य तथा शूद्रकी और वैश्य शूद्रकी कन्याको विवाह सक्ता है । भगवान अपने आधीन राजाओंको यह आज्ञा करते हैं—

चौपाई–है कृतयुग यह जन तुम जानो । निज निज कृत्य करो सुख मानो ॥ आलसभाव न चितमें राखो । परिश्रमी बन सुख अभिलाखो ॥ १ ॥ सज्जन दुर्जन जन दो भेदा । सज्जन पालहु खल कर छेदा ॥ प्रजा करहू रक्षा रुचि लाई । दुर्जनको नित दंड दिलाई ॥ २ ॥ शस्त्र धरण उद्देश यही है । प्रजा सुखी हो तत्त्व यही है ॥ दुष्टनका निग्रह जहं नाहीं । सुख संतोप होय तहं नाहीं ॥३॥ गृही नहीं करतव निज पाले । दुखी होय विपता बहु झालें ॥ दया दुष्टजन नहिं अधिकारी ।

दंड विना नहिं हों समधारी ॥ ४ ॥ पृथ्वी यह बहु धान्य उपावै । वस्तु अनेक और उपजावै ॥ गोधन कृषि कारण उपकारी । दुग्ध देय पोषन कर भारी ॥ ५ ॥ धन कणकी रक्षा करना है । सर्वदेश तिरपत रखना है ॥ कर इतना ही लेन विचारो । प्रजा कभी दुखमें नहिं धारो ॥ ६ ॥ प्रजा सुखी तहं राज्य सुखी है । राज्य वही जहं को न दुखी है ॥ कर ग्रह विद्या करहु प्रचारा । विद्याविन नर जन्म असारा ॥ ७ ॥ पुत्री पुत्र उभय अधिकारी । विद्या कला देहु अति भारी ॥ करहु स्वास्थ्यरक्षा जगजनकी । रोग शोग नहिं बाधा तनकी ॥ ८ ॥ प्रजा पुत्रसम पालहु ज्ञाता । दीन अनाथ करहु नित साता ॥ सदा ध्यान रखिये भूराजा । प्रजा होय सुख शांति समाजा ॥ ९ ॥ शिल्प कलासे वस्तु बनाओ । देश देश भेजो धन लाओ ॥ जहां वाणिज्य तहां धन आवै । धन जिस देश वही सुख पावै ॥ १० ॥ जीवन सादा शुद्ध विताओ । विषय मोहमें तन न गमाओ ॥ इंद्रियभोग न्यायसे कीजे । जासे बल तन दुति नहिं छीजै ॥ ११ ॥ है संतोष परम सुखकारी । परधनकी इच्छा दुखकारी ॥ निज तिय सम्पतिमें सुख मानो । पर तिय पर सम्पति पर जानो ॥ १२ ॥ समय वृथा कबहीं नहिंटालो। समय अमूल्य जान तनपालो ॥ होय सुखी नर नारि सदा ही । यह प्रबन्ध करिये गुणग्राही ॥ १३ ॥

फिर सब खड़े होजावें (नाभिराजा तो राज्य देकर पहले ही चले गए थे) और स्तुति पढ़ें । परदा गिरे—

छंद—जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र नाथजी । धन्य यह समय महान सुख निधान साथजी ॥ दीनबंधु हो दयालु जगत पाल कीजिये । दुःख क्लेश शोग मेट तृपत नाथ कीजिये ॥ १ ॥ राज्य यह महान आपका परम प्रकाश हो । यश अपार विस्तरै अन्यायका विनाश हो ॥ धन्य धन्य नाथ तुम्हीं ज्ञानमें प्रधान हो । राखिये कृपा जिनेन्द्र लोकमें महान हो ॥ जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र नाथजी । धन्य यह समय महान सुखनिधान साथजी ॥ २ ॥

आचार्य प्रतिमाको राज्यमहलमें विराजमान करते हैं तथा अन्य प्रतिमाओंको मुकुट व शस्त्र देकर " अस्मिन् बिम्बे राज्याभिषेकं आरोपयामि स्वाहा " ऐसा कहकर पुष्प क्षेपण करते हैं । सवेरे १० बजे तक यह क्रिया होजावे ।

अध्याय छठा ।

तपकल्याणक ।

(१) भगवानको वैराग्य-इसी दिन जब सवेरे राज्याभिषेक किया था, १ बजेसे तप कल्याणककी विधिको करे । मण्डपसे कुछ दूर एक वन ढूंढ लेवें जहां बड़का वृक्ष हो उसीके नीचे ऋषभदेवका तप कल्याणक करना । जिस तीर्थंकरकी प्रतिष्ठा करनी हो उस तीर्थंकरके उसी वृक्षको तलाश करे । यदि वैसा न मिले तो २४ मेंसे कोई भी वृक्षके तले यह कल्याणक होवे । २४ वृक्षोंके क्रमसे नाम ये हैं-१ वट या वर्गद, २ सप्तच्छद, ३ साल, ४ साल, ५ प्रियंगु, ६ प्रियंगु, ७ श्रीखण्ड, ८ नागवृक्ष, ९ साल, १० पलास, ११ तींदू, १२ पाटल, १३ जम्बू, १४ पिप्पल, १५ दधिपर्ण, १६ नंदिवृक्ष, १७ तिलक, १८ आम्र, १९ अशोक, २० चम्पा, २१ मोलसरी, २२ वांस, २३ धव, २४ साल । वनमें वृक्षके चारों ओर स्थान स्वच्छ हो । शुद्ध जलको छिड़क कर पवित्र करले वहां ही एक पाषाणकी शिला ऊंची भगवानको विराजमान करनेको नियत करे तथा आगे १ मण्डल बनावे जिसमें २४ कोठे हों, पूजाकी सब सामग्री तय्यार की जावे, मण्डप भी छाया जावे जिसमें सुखसे सब बैठ सकें । वटवृक्षको नियत कर आचार्य पहले सब देख आवे व प्रबंध कर आवे । उधर मण्डपमें नरनारी टिकटों द्वारा बुलाए जावें । दूसरे चबूतरेपर भगवानकी राज्य सभा लगाई जावे । सशस्त्र भगवान् विराजमान हों, आगे नृत्य व भजन होता हो, ऐसी सभा करके परदा खोला जावे । उस समय नीलांजना नामसे एक देवीको इन्द्र भेजे वह आकर नृत्य करने लगे । कोई कन्या जो थोड़ासा नृत्य जानती हो सो नाचते नाचते एकदम भूमिपर गिरकर अचेतसी होजावे । उसी समय आचार्य भगवानकी ओरसे नीचे प्रकार कहें—

दोहा-धिक धिक या संसारमें, नित्यनको पर्याय । देखत देखत विलय हो, ध्रुवता कोन लहाय ॥ १ ॥
मरणकाल आवे निकट, कोय न राखनहार । कोटिक यत्न विचारिये, निर्फल हों हरबार ॥ २ ॥
क्षण क्षण उम्र विलात है, ज्यों ज्यों काल विताय । मरण करत मानें सुखी, हम युवान वय आय ॥ ३ ॥
जरा सु बाघन भयकरी, आवत है ततकाल । पकड़ तिसे निर्बल करे, डसे काल विकराल ॥ ४ ॥
या संसार अपारमें, चारों गति दुखदाय । शारीरिक मनसा बहुत, क्लेश होंय भयदाय ॥ ५ ॥

देव आदि भी ना सुखी, तृष्णावश दुख पाय । देख जलत पर सम्पदा, इष्ट वियोग धराय ॥ ६ ॥
जो जाने निज आपको, सरधै निज सुख सार । निजमें आपी मगन हो, सो सुखिया संसार ॥ ७ ॥
मोह अंध जे जीवड़ा, धन कुटुम्बमें लीन । आकुलता नितप्रति लहैं, दशा बनाई दीन ॥ ८ ॥
द्रव्य भिन्न हर जीवका, जब पलटे पर्याय । उपजै मरै जु एकला, कोई नहीं सहाय ॥ ९ ॥
तीव्र क्लेश रुग शोकका, आपी भुगतै जीव । साथी सगा न देखिये, भिन्न भिन्न है जीव ॥ १० ॥
जब यह तन भी मम नहीं, साथ न जावै कोय । परिजन पुरजन धन कणा, किह विधि साथी होय ॥ ११ ॥
यह शरीर सुन्दर दिखे, भीतर मल समुदाय । सड़न गलन आदत धरै, तुरत मृतक होजाय ॥ १२ ॥
तीन जगतमें अशुचि है, मानुष तन अधिकाय । वस्त्र माल जल शुचि दरब, परश अशुचि होजाय ॥ १३ ॥
मिथ्या श्रद्धा धारके, हिंसादिक बहु पाप । करे कषायन वश रहे, हो प्रमाद सन्ताप ॥ १४ ॥
मन वच काय न थिर रहे, योग भाव हिल जाय । कर्म वर्गणा पुंज तब, आवत तहं अधिकाय ॥ १५ ॥
बंध होय पिंजरा बने, कार्मण तन दुखदाय । जब तक यह टूटे नहीं, मुक्ति न कोय लहाय ॥ १६ ॥
संवर भाव विचारिये, सम्यग्दर्शन सार । संयम अर वैराग्यसे, रुकै कर्मकी धार ॥ १७ ॥
आतम ध्यान महा अगनि, जब निजमें प्रजलाय । कोटिक भव बांधे करम, तुरत भस्म होजाय ॥ १८ ॥
तप समान इस जीवका, मित्र न को संसार । निश्चय तप निज आतमा, तारै भवदधि खार ॥ १९ ॥
पुरुषाकार अकृत्रिमा, लोक अनादि अनंत । ऊरध मध्य अधो विषे, सिद्ध लोक सुखवन्त ॥ २० ॥
दुर्लभ है इस लोकमें, नर तन दीरघ आयु । इंद्रिय बलकी पूर्णता, डसै न रोग कु वायु ॥ २१ ॥
एक इंद्रिय पर्यायते, चढ़न कठिन संसार । विरला नर तन पावता, जो सब तनमें सार ॥ २२ ॥
या तन पाय न तप किया, लिया न निजरस स्वाद । मूरख अवसर चूकता, छाड़ै ना परमाद ॥ २३ ॥
धम मित्र या जीवका, जो राखे शिव माहिं । दुर्गतिसे रक्षा करै, सुख देवै अधिकाहिं ॥ २४ ॥
हा हा धिक् धिक् है मुझे, इतना काल गमाय । मोह राज्य पुत्रादिमें, कर निज सुध विसराय ॥ २५ ॥

अब संयम धरना सही, जिम धारा बहु लोक। कर्म काट शिव थल बसे, पाया निज सुख थोक ॥ २६ ॥
कुछ विलम्ब करना नहीं, समय न पलटत आय। क्षण क्षण आयु विलात है, राखनको न उपाय ॥ २७ ॥
धर्म मित्रकी शरणमें, रहना ही सुखकार। जो तारे भव सिंधुते, पहुंचावे शिव द्वार ॥ २८ ॥

(२) लौकांतिक देवागम–इतनेमें आठ लौकांतिक देव सफेद शुद्ध धोती दुपट्टा पहने व सफेद ही मुकुट लगाए सभामें विनय सहित आते हैं और पुष्पोंकी अंजली मूर्तिके आगे चढ़ाकर नीचेप्रकार स्तुति करते हैं–

स्वामिन्नद्य जगत्त्रये प्रसरतां मांगल्यमाला यतः, सर्वेभ्यः सुकृतं भविष्यति भवत्तीर्थामृतांभोधरात्।
घोरापज्ज्वलनापनोदनमितो भव्यात्मनां जायतां, वैराग्यावगमस्त्वया परिचितस्तस्मै नमस्ते पुनः ॥ ८२३ ॥
संसारदुःखविनिवृत्तिपरायणः स्वयं बुद्‌ध्वा भवस्थितिमिमां स्वपरात्मनां शिवं।
कर्तैव्यसावभिमतस्वनियोगभावुकानस्मान् प्रपंचयति निःक्रमणोत्सवस्तव ॥ ८२४ ॥
के वा वयं त्वदुपदेशविधानदक्षाः स्वायंभवस्य सकलागमपूतदृष्टेः।
आत्मैव केवलमथो प्रतिबुद्धमार्गं नीतः स्वयं न खलु भव्यगणोऽपि तात ॥ ८२५ ॥

अयं पितेयं जननी तवेति लोका मुधार्थं व्यवहारयन्ति। विश्वेशिता विश्वपितामहस्त्वं माताऽसि सर्वप्रतिपालनेच्छुः ॥८२६॥
अवाप्तसंसारतटः स्वलब्ध्या निमित्तमन्यत्समुपस्थितोऽसि। स्वयं प्रबुद्धः प्रभविष्णुरीशः कदापि नास्मत्तत्त्वनेन बुद्धः ॥८२७॥
प्रकाशितं सूर्यमुदीक्ष्य दीपः स्वयं स्वदीप्त्या किमु भासयेत्तं। गंगा स्वयं शीतलतोपदात्री किं पल्वलेन स्वतृषां भनक्ति ॥
जय कल्याणपरम्पर मदनभयङ्कर निजशक्तिपते। जय शाश्वतसुखकर त्रिभुवनमहिधर जय जय जय गुणरत्नपते ॥ ८२९ ॥

भाषा–छंद स्रग्विनी–धन्य तू धन्य तू नाथ जो चित गहा। धन्य हो नाथ वैराग्य उत्तम लहा ॥ तीर्थ धर्म महा वृष्टि हो लोकमें। मोह आपत्ति अगनी शमैं लोकमें ॥ १ ॥ संसृती दुःख मेटन तुम्ही वीर हो, कर्म सेना महारन तुम्ही धीर हो। बोध केवल प्रकाशन तुम्हीं सूर्य हो, भव्य कमलनि विकाशन तुम्हीं सूर्य हो ॥२॥ हो स्वयंबुद्ध सम्यक्त गुण धारकं, ज्ञान वैराग्य जलमोहमल टारकं। शक्ति अनुपम धरो काम बल नाशकं, आपमें आप ही आपको भाशकं ॥ ३ ॥ नाथ अब देर कुछ भी नहीं कीजिये, धार संयम कवच ध्यान असि लीजिये। चार घाती महा कर्म क्षय कीजिये, धर्म त्रय

रत्नमय देय यश लीजिये ॥४॥ आपको बोधने बल धरें हम नहीं, मात्र भक्ती करें पाप आवें नहीं। हैं सफल गात्र यह नाथ वंदे तुम्हें, जन्म माना सफल नाथ देखे तुम्हें ॥ ५ ॥

इसतरह बडे भावसे स्तुति पढ़के पुष्पांजलि प्रभुके चरणोंपर क्षेपण करके व नमस्कार करके विनय सहित लौट जावें—

(३) इन्द्रागमन पालकी सहित—इतने हीमें इन्द्रादिदेव एक कलश जलका लिये व वस्त्राभूषणका थाल लिये तथा पालकीको कन्धेपर धरे सभामें आते हैं। पालकी आदिको यथायोग्य धरकर इन्द्रादि नमस्कार कर कहते हैं—

छन्द स्रग्विणी—हे प्रभू मोक्ष नगरी विजय कारणे, आत्म सुख सार अनुभव सदा धारणे। मुक्ति लक्ष्मी मनोहर जु वश कारणे, सिद्ध पद सारको नित्य संधारणे ॥ १ ॥ जो विचारा मनोरथ सफल हो सही, मोह शत्रुपे तेरी विजय हो सही। क्रोध आदी कषायें सभी नष्ट हों, ध्यान अग्नी जलें कर्म गण नष्ट हों ॥ २ ॥ साधु पदवी धरो व्रत महा आचरो, तीन गुप्ति सम्हालो समिति उर धरो। हैं परम धर्म दश तोहि रक्षा करें, होंय उपसर्ग संकट उन्हें जय करें ॥३॥ धन्य जिनराज पुरुषार्थ कीना विमल, नष्ट रागादि कर आत्म कीजे विमल। हम तो भक्ति करैं और समरथ नहीं, होंय पावन इसीसे न हों दुख कहीं ॥ ४ ॥

(४) भगवानका राज्य त्याग व पालकीपर चढ़ वन जाना—फिर आचार्य नीचेका श्लोक पढ़ प्रतिमापर पुष्पांजलि क्षेपे। सूचक सभाको कहे कि भगवान् राज्यका त्याग करते हैं और पुत्र भरतको राज्य देते हैं—

दृढोरुवैराग्यभरः स्वराज्यं पुत्राय वा भूपतिसाक्षि दत्वा। यः क्षात्रधर्मं श्रितपंचभेदं दिदेश साक्षाच्च स एष विभुः ॥

तब इन्द्र प्रतिमाजीको उठाकर मस्तकपर रक्खे, वहीपर आचार्य एक नारियल रख दे व उसपर भगवानका मुकुट उतार कर रख दे। इससे यह सूचित करना है कि पुत्रको राज्यपद दिया। इन्द्र बिम्बको स्नान करानेके लिये उच्च आसनपर बिराजमान करे तब आचार्य यह मंत्र पढ़े—"ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थं आदिनाथ भगवन् इह पांडुकशिला पीठे तिष्ठ तिष्ठ स्वाहा।"

इसके पहले ही आचार्य जहांपर बिराजमान करना हो उस थालीपर साथिया बना देवे। फिर आचार्य नीचेका श्लोक पढ़े—इंद्र ऊंचे हाथ करके जलके कलशसे स्नान करावे—

दीक्षोद्यमं मोक्षसुखैकसक्तं यं स्नापयांचक्रुरशेषशक्राः। समेत्य सद्यः परया विभूसा तं स्नापयाम्यष्टशतेन कुंभैः ॥

ॐ जय जय जय अर्हंतं भगवंतं शुद्धोदकेन स्नापयामि इति स्वाहा। फिर इन्द्र वस्त्रसे पोंछकर, हलके चन्दनसे स्नान करे तब आचार्य यह श्लोक पढ़े——

इन्द्रो जिनेन्द्रस्नपनावसाने दिव्यांगरागेण यमालिलेप। कर्पूरकालागरुकुंकुमाढ्यश्रीचन्दनेनास्य समालभेऽगम् ॥

ॐ ह्री सहजसौगध्यवंधुरांगस्यगधलेपनं करोमि स्वाहा।

फिर इन्द्र पोंछकर थालमें नए लाए वस्त्र आभूषण पहनावे तब आचार्य नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

विभूषयामास जगत्रयस्य विभूषणं दिव्यविभूषणाद्यैः। पुरंदरोऽयं भगवज्जिनेंद्रं स एव देवो जिनबिंब एषः॥

ॐ ह्री श्री जिनांग विविधवस्त्राभरणेन विभूषयामि स्वाहा। फिर आचार्य नीचे लिखा वर्द्धमान मंत्र सात वार पढ़कर प्रभुपर सात वार पुष्प क्षेपे—"ॐ णमो भयदो बड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्के जलन्त गच्छइ। आयासं पायाल लोयाणं भूयाणं यूये वा विवादे वा रणंगणे वा रायंगणेवा छंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा।

फिर दीक्षा लेते समय भगवानने दान किया उसकी स्थापनाके लिये आचार्य नीचेका श्लोक पढ़कर प्रतिमाके आगे पुष्प क्षेपें और कुछ रुपये दानके लिये देदिये जावें उसे प्रबन्धकर्ता यथायोग्य देदेवें।

दीक्षोन्मुखस्तीर्थकरो जनेभ्यः किमिच्छकं दानमहो ददौ यः॥ दानं च मुक्त्यंगमितीव वक्तुं स एव देवो जिनबिंब एषः॥१॥

फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ पालकीपर पुष्प डाले—

महीतलायातदिनेशबिंबशंकावहादीप्रमणिप्रभाढ्या॥ जिनेन या श्रीशिबिकाधिरूढा दिव्यात्र साक्षादियमस्तु सैव॥ २॥

फिर नीचे लिखा श्लोक व मंत्र आचार्य पढ़े। इन्द्र विनय सहित भगवानको उठाकर पालकीपर विराजमान करे तब जय जय शब्द हो पुष्पवृष्टि हो।

आपृच्छ्य बंधूनुचितं महेच्छः किमिच्छकं दानविधिं विधाय॥ निष्क्रामतिस्मावसथाध्वनो यः स एव देवो जिनबिंब एषः॥३॥

ॐ ह्री अर्हं श्रीधर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह शिबिकायां तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा।

इससमय कमसे कम चार भूमिगोचरी राजा व चार विद्याधर तैयार रहें। ये ही पालकीको कंधेपर रख सकेंगे—संघमेंसे कौन बने इसके निर्णयके लिये अन्य स्थानपर बोली बोलकर पहले तय किया जावे। जो रुपया आवे प्रतिष्ठामें खर्च हो। जितनी दूर वन हो उस

मर्यादाके आठ भाग किये जावें—१ भागतक भूमिगोचरी भगवानकी पालकीको लेकर चलें, फिर एक भागतक विद्याधर राजा ले चलें, फिर इन्द्रादिक देव ले चलें। जिस समय चार भूमिगोचरी राजा पालकी उठावें उस समय नीचेका श्लोक पढ़ आचार्य प्रतिमापर पुष्प डालें—

यदाश्रितां श्रीशिविकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ॥ जग्मुः पृथिव्यां प्रथमं नरेन्द्राः । स एव देवो जिनबिंब एषः ॥१॥

जब विद्याधर ले चलें तब यह पढ़े—

यदाश्रितां श्रीशिविकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ॥ जग्मुः पृथिव्यामथ खेचरेन्द्राः स एव देवो जिनबिंब एषः ॥२॥॥

फिर जब इन्द्र ले चलें तब यह श्लोक पढ़े और पुष्प क्षेपे—

यस्य प्रभोः श्रीशिविकां प्रमोदात् स्कंधे समारोप्य वियत्पथेन । तपोवनं निन्युरथामरेंद्राः स एव देवो जिनबिंब एषः ॥

दोनों तरफ इंद्रादि चमर ढारते जावें, साथमें झंडियां हों, बाजे बजें, नृत्य होता हो, भजन होते हों, सर्व संघ साथ जावे। आध घंटेके भीतर वनमें पहुच जावे।

(५) तप वनमें तप लेनेकी क्रिया—पहलेसे ही आचार्य जाकर तपोभूमिको नीचे लिखा मंत्र पढ़ शुद्ध करे, पानी छिड़के—

"ॐ नीरजसे नमः" फिर वटवृक्षकी स्थापना नीचे लिखा मंत्र पढ करें, वृक्षपर पुष्प क्षेपे।

ॐ ह्रीं णमो अरहंताण वृषभजिनस्य वटाख्य जिनदीक्षा वृक्ष अवतर२ संवौषट्। फिर नीचेका श्लोक पढ़ दीक्षामंडपपर पुष्प क्षेपे—

एवं विनिष्क्रम्य यमाससाद पुण्याश्रमं तीर्थकरः प्रशान्तः। स एव चायं जिनमण्डपोस्तु श्रीमूलवेद्यां विहितप्रतीच्यां ॥

फिर आचार्य शिलाके स्थापनके लिये नीचे लिखा श्लोक पढ़ शिलापर साथिया बनावे व पुष्प क्षेपे—

स्वचित्तकल्पे विपुले विशुद्धे शिलातले यत्र तु चंद्रकान्ते ॥ सुरेन्द्रकल्पे भगवान्निविष्टस्तदेव पीठं दृढमेतदस्तु ॥

फिर नीचेका श्लोक व मंत्र पढा जावे तब इन्द्र पालकीसे भगवानको उतारकर शिलापर पधरावे। मुख पूर्व या उत्तर हो—

उदङ्मुखः पूर्वमुखोऽथवा यो निविष्टवान्पूतशिलोपरिष्टात् ॥ प्रव्रज्यया निर्वृतिसाधनोत्कः स एव देवो जिनबिंब एषः ॥

ॐ ह्रीं धर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह सुरेन्द्रविरचितचंद्रकांतशिलातले तिष्ठ तिष्ठ स्वाहा।

फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ आचार्य चारोंतरफ पुष्प क्षेपे—

तपोवनं यत्तदिहास्तु दीक्षावृक्षोऽपि सोयं च शिलापि सेयं॥ स पुण्यकालोऽप्ययमेव यद्यदीक्षोचितं तत्तदिहास्तु सर्वं॥

फिर आचार्यभक्ति और श्रुतभक्ति पढे। फिर नीचे लिखा श्लोक मंत्र पढ़ प्रतिमापर पुष्प क्षेपे व वस्त्राभूषण उतारकर एक थालीमें रक्खे।

यः सर्वसिद्धान्प्रणिपत्य केशानुत्पाट्य दिव्यांबरमाल्यभूषाः। त्यक्त्वा प्रवव्राज निजात्मलब्ध्यै स एव देवो जिनबिंब एषः ॥

ॐ नमो भगवतेऽर्हते सद्यः सामायिकप्रपन्नाय वस्त्राभूषणमपनयामि स्वाहा। फिर भगवानकी प्रतिमाके मस्तकमें गाढ़ी केशर लगाकर उसपर लौंग केशोंके भावोंकी स्थापनामें चिपका दे। **नमः सिद्धेभ्यः** कहकर उन केशरूप लौंगोंको किसी अन्य पेटी या थालीमें रक्खे अर्थात् केशलोंच करे। सूचक पात्र हरएक क्रियाको समझाता जावे तब दर्शकगण जय जयकार करें। उन केशोंकी थालीको वेदीपर रक्खी रहने दी जावे। फिर आचार्य ऐसा कहे–"अहं सर्वं सावद्यविरतोस्मि" फिर सिद्धभक्तिका पाठ पढ़े।

पश्चात् केशरसे सोनेकी महीन सुईद्वारा प्रतिमापर अंक न्यास करे–पहले आचार्य मातृका मंत्र १०८ वार पढ़कर भावोंके द्वारा अपने अंगमें अक्षरोंको बैठा ले। इस समय सभाजनोंका मन लगानेको या तो १२ तपका उपदेश हो या वैरागी भजन हों–

मातृका मंत्र।

ॐ नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह। क्ष्वीं क्ष्वीं क्ष्वौं स्वाहा।

आगे जहां प्रतिमाके अंगोंपर इन अक्षरोंको लिखना कहेंगे वही अपने अंगोंपर भी ध्यानमें बैठा लें।

(१) ओं अं नमः ऐसा कहकर अ अक्षरको ललाट या माथेपर लिखे। (२) ओं आं नमः ऐसा कहकर आ को मुखकी गोलाईपर लिखे अर्थात् मुखवृत्तपर लिखे। (३) ॐ इ नमः ऐसा कह इ को दाहनी आंखमें लिखे। (४) ॐ ई नमः ऐसा कह ई को बाईं आंखमें लिखे। (५) ॐ उ नमः ऐसा कह उ को दाहने कानमें लिखे। (६) ॐ ऊ नमः ऐसा कह ऊ को बाएं कानमें लिखे। (७) ॐ ऋं नमः ऐसा कह ऋ को दाहनी तरफके नाक छिद्रमें लिखे। (८) ॐ ॠ नमः ऐसा कह ॠ को बाईं तरफके नाक छिद्रमें लिखे। (९) ॐ ऌ नमः ऐसा कह ऌ को दाहने (गण्डस्थ) गालपर लिखे। (१०) ॐ ॡं नमः ऐसा कह ॡ को बाएं गालपर लिखे। (११) ॐ एं नमः ऐसा कह ए को ऊपरके ओठमें। (१२) ॐ ऐं नमः ऐसा कह ऐ को नीचेके ओठमें। (१३) ॐ ओं औं नमः ऐसा कह ओ औ को ऊपर व नीचेके दांतोंमें। (१४) ॐ अं अः इति नमः ऐसा कह अं अः को सिरके ऊपर लिखे। (१५) ॐ कं खं नमः ऐसा कह क ख को दाहनी भुजापर। (१६) ॐ गं घं नमः ऐसा

कह ग घ को दाहने हाथकी अंगुलियोंमें। (१७) ॐ ङं नमः ऐसा कह ङ को दाहने हाथके अग्रभागमें या हथेलीमें। (१८) ॐ च छ नमः ऐसा कह च छ को बाईं भुजापर। (१९) ॐ जं झं नमः ऐसा कह बाएं हाथकी अंगुलियोंमें। (२०) ॐ ञं नमः ऐसा कह ञ को बाएं हाथके अग्रभागमें या बांई हथेलीपर। (२१) ॐ टं ठं नमः ऐसा कह ट ठ को दाहने चरणके मूलमें। (२२) ॐ डं ढं नमः ऐसा कह ड ढ को दाहने चरणकी गुल्फमें या टिकून्यामें। (२३) ॐ णं नमः ऐसा कह ण को दाहने चरणके अग्रभागमें या तलवेमें। (२४) ॐ तं थं नमः ऐसा कह त थ को बाएं चरणके मूलमें। (२५) ॐ दं धं नम. ऐसा कह द ध को बाएं चरणकी गुल्फमें। (२६) ॐ नं नमः ऐसा कह न को बाएं चरणके अग्रभागमें। (२७) ॐ पं फं नमः ऐसा कह प फ को दाहने पगकी पीठपर। (२८) ॐ बं भं नमः ऐसा कह ब भ को बाएं पगकी पीठपर। (२९) ॐ मं नमः ऐसा कह म को उदरमें। (३०) ॐ यं नमः ऐसा कह य को हृदयमें। (३१) ॐ रं नमः ऐसा कह र को दाहने कन्धेपर। (३२) ॐ लं नमः ऐसा कह ल को गलेमें (ककुदि)। (३३) ॐ वं नमः ऐसा कह व को बाएं कंधेपर। (३४) ॐ शं नमः ऐसा कह श को हृदयसे लेकर दाहने हाथ तक लिखे। (३५) ॐ षं नमः ऐसा कह ष को हृदयसे लेकर बाएं हाथ तक लिखे। (३६) ॐ सं नमः ऐसा कह स को हृदयसे लेकर दाहने पग तक लिखे। (३७) ॐ हं नम· ऐसा कह ह को हृदयसे लेकर बाएं पग तक लिखे। (३८) ॐ क्षं नमः ऐसा कह क्ष को हृदयसे लेकर उदर तक लिखे।

फिर आचार्य १०८ दफे नीचे लिखा अनादिसिद्ध मंत्र जपे—"ॐ णमो अरहंताण, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं, णमो उवज्झायाण, णमो लोए सव्वसाहूणं। चत्तारिमगलं, अरहंतमंगलं, सिद्धमंगलं, साहूमंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मोमंगलं। चत्तारिलोगुत्तमा, अरहंत लोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तोधम्मो लोगुत्तमा, चत्तारिसरणं पव्वज्जामि, अरहंतसरण पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहूसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तोधम्मोसरणं पव्वज्जामि। झ्रौं झ्रौं स्वाहा। १०८ लौंग लेकर जपले या मालासे जपले।

फिर एक रकाबीमें लौंग या पुष्प लेकर प्रतिमापर नीचे लिखे मंत्रोंका संस्कार करें। अब उपदेश या भजन बन्द होजावें। जैसे आचार्य मंत्र बोले उसीका भाव सूचक पात्र या कोई दर्शकोंको समझाता जाय—"जैसे जब कहा जाय सद्दर्शनसंस्कारः भवतु तब समझावे कि भगवानके बिम्बमें सम्यग्दर्शनका संस्कार प्राप्त हो यह भावना की गई है। इत्यादि।

(१) ॐ ह्रीं इह अर्हति सद्दर्शनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। इतना कह पुष्प या लौंग क्षेपे। इसी तरह पुष्प क्षेपता जाय। (२)

ॐ ह्रीं इह अर्हति सज्ज्ञानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३) ॐ ह्रीं इह अर्हति सच्चारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४) ॐ ह्रीं इह अर्हति सत्तपः संस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (५) ॐ ह्रीं इह अर्हति (यहां दर्शन ज्ञान चारित्र व तपके वीर्यसे प्रयोजन मालूम होता है) सद्वीर्य-चतुष्टयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (६) ॐ ह्रीं इह अर्हति अष्टप्रवचनमातृकासंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (पांच समिति तीन गुप्तिको अष्टप्रवचनमातृका कहते हैं) (७) ॐ ह्रीं इह अर्हति शुद्ध्यष्टकावलंभसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा (आठ शुद्धि–भावशुद्धि, कायशुद्धि, विनयशुद्धि, ईर्यापथशुद्धि, भिक्षाशुद्धि, प्रतिष्ठापनशुद्धि, शयनासनशुद्धि तथा वाक्यशुद्धि)–(८) ॐ ह्रीं इह अर्हति द्वाविंशतिपरीषह-जयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।(९) ॐ ह्रीं इह अर्हति त्रियोगेन सयमाच्युतिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।(१०) ॐ ह्रीं इह अर्हति कृतकारितानु-मोदनैरतिचारनिवृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (११) ॐ ह्रीं इह अर्हति शीलसप्तकसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (१२) ॐ ह्रीं इह अर्हति दशासंयमोपरमसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (५ इन्द्रियसंयम, ५ प्राणसंयम या पाच प्रकार जीव रक्षण)।(१३) ॐ ह्रीं इह अर्हति पंचेंद्रियनिर्जयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (१४) ॐ ह्रीं इह अर्हति संज्ञानचतुष्टयनिग्रहसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा (यहां मतिज्ञानादि चार स्थिर रहे)। (१५) ॐ ह्रीं इह अर्हति उत्तमक्षमादि दशविधधर्मधारणसंस्कार· स्फुरतु स्वाहा। (१६) ॐ ह्रीं इह अर्हति अष्टादशसहस्रशीलपरिशीलनसंस्कार· स्फुरतु स्वाहा। (१७) ॐ ह्रीं इह अर्हति चतुरशीतिलक्षोत्तरगुणसमाश्रयसंस्कार· स्फुरतु स्वाहा। (१८) ॐ ह्रीं इह अर्हति अतिशयविशिष्टधर्मध्यानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (१९) ॐ ह्रीं इह अर्हति अप्रमत्तसंयम-संस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२०) ॐ ह्रीं इह अर्हति सुदृढ़श्रुततेजोवाप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२१) ॐ ह्रीं इह अर्हति अप्रकंपक्षपक-श्रेण्यारोहणसंस्कार· स्फुरतु स्वाहा। (२२) ॐ ह्रीं इह अर्हति अनन्तगुणविशुद्धिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२३) ॐ ह्रीं इह अर्हति अथाप्रमत्तकरण या अधःकरणप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२४) ॐ ह्रीं इह अर्हति पृथक्त्ववितर्कवीचारशुक्लध्यानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२५) ॐ ह्रीं इह अर्हति अपूर्वकरणप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२६) ॐ ह्रीं इह अर्हति अनिवृत्तिकरणप्राप्ति-संस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२७) ॐ ह्रीं इह अर्हति बादरकषायचूर्णनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२८) ॐ ह्रीं इह अर्हति सूक्ष्मकषाय-चूर्णनसंस्कारःस्फुरतु स्वाहा। (२९) ॐ ह्रीं इह अर्हति सूक्ष्मसाम्परायचारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३०) ॐ ह्रीं इह अर्हति प्रक्षीणमोहसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३१) ॐ ह्रीं इह अर्हति यथाख्यातचारित्रावाप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३२) ॐ ह्रीं इह अर्हति एकत्ववितर्कावीचारशुक्लध्यानावलम्बनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३३) ॐ ह्रीं इह अर्हति घातिघातसमुद्भुतकैवल्यावगम-

संस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३४) ॐ ह्रीं इह अर्हति धर्मतीर्थप्रवृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३५) ॐ ह्रीं इह अर्हति सूक्ष्मक्रिया-शुक्लध्यानपरिणतत्त्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३६) ॐ ह्रीं इह अर्हति शीलेशीकरणसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा (१८००० शीलका स्वामीपना)। (३७) ॐ ह्रीं इह अर्हति परमसंवरसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३८) ॐ ह्रीं इह अर्हति योगचूर्णकृतिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३९) ॐ ह्रीं इह अर्हति योगायुतिभाक्त्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (अयोग गुणस्थान प्राप्ति)। (४०) ॐ ह्रीं इह अर्हति समुच्छन्नक्रियाशुक्लध्यानप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४१) ॐ ह्रीं इह अर्हति निर्जरायाः परमकाष्ठारूढ़त्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४२) ॐ ह्रीं इह अर्हति सर्वकर्मक्षयाप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४३) ॐ ह्रीं इह अर्हति अनादिभवपरावर्तनविनाशं-सस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४४) ॐ ह्रीं इह अर्हति द्रव्यक्षेत्रकालभवभावपरावर्तननिष्क्रांतिसंस्कारःस्फुरतु स्वाहा। (४५) ॐ ह्रीं इह अर्हति चतुर्गतिपरावृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४६) ॐ ह्रीं इह अर्हति अनंतगुणसिद्धत्वप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४७) ॐ ह्रीं इह अर्हति अदेहसहजज्ञानोपयोगचारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४८) ॐ ह्रीं अर्हं इहार्हतिविम्बे अदेहसहोत्थ दर्शनोपयोगैश्वर्यप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। नोट—सूत्रकार या पंडित यह समझावे कि इस बिम्बमें यह गुण प्रकाशमान हों ऐसा स्थापन इस बिम्बमें किया जाता है। अब पूजा की जाय। मंडलके आगे आचार्य पूजा करे, इन्द्र भी शामिल हो।

(६) तपकल्याणककी पूजा।

अथासिधाराव्रतमाद्वितीयं निर्वाणदीक्षाग्रहणं दधानम् ॥ यमर्चयामासुरशेषशक्रास्तमर्चयामो जगदर्चनीयम ॥

ऐसा कह पुष्पांजलि क्षेपै।

सारशांतरसनिर्जितात्मवत्त्वत्पदाग्रप्रति तेन वारिणा ॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥

ॐ ह्रीं श्री तीर्थकृन्मुनिललामं जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

सद्गुणप्रणुतचंदनेन ते कीर्तिवत्सकलतोषपोषिणा ॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावक यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥चंदनं॥२॥

त्वन्मुखेन्दुभजनार्थमागतैर्भत्रजैरिव वलक्षकाक्षतैः ॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ अक्षतं ॥३॥

सुप्रसादसुकुमारतादिभिस्त्वद्वचोभिरिव नव्यपुष्पकैः ॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥पुष्पं॥४॥

चारुणाथ चरुणामृतांशुवद्वचंजनैरपि तदंकशंकिभिः ॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ चरुं ॥५॥

धर्मदीपक न ते वयं समा । भक्तुमित्थमितवत्प्रदीपकैः ॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥दीपं॥६॥
सेव्यपाद नपथेद्धभगंवत्स्यान्मतोपमसुधूपधूमकैः ॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ धूपं ॥ ७ ॥
नम्रभव्यसुकृतानुकारिभिः सारभूतसहकारकादिभिः॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ फलं ॥८॥

गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैकवंधून् । प्रकटितजिनमार्गान्ध्वस्तमिथ्यात्वमार्गान् ॥
परिचितनिजतत्वान्पालिताशेषसत्वान् । शमरसजितचंद्रानर्घयामो मुनीन्द्रान् ॥ अर्घ्यं ॥ ९ ॥

श्रीमद्वोधत्रयाढ्य प्रविमलचरितस्वात्मसद्ध्याननिष्ठ । स्याद्वादांभोजभानो त्रिजगदुपकृतिव्यग्रयोगीश्वर त्वाम् ॥
अर्घ्यं चानर्घ्यनानाविधविधिविहितं द्रव्यमुद्धार्य वयं । प्रेक्षिप्योदारपुष्पांजलिमलिकलितं भूरिभक्त्या नमामः ॥महार्घं॥१०॥

अब २४ भगवानकी तपकल्याणककी पुजा की जावे ।

गीताछंद-श्री रिषभदेव सु आदि जिन श्रीवर्द्धमान जु अंत हैं । वंदहुं चरण वारिज तिन्होंके जपत तिनको संत हैं ॥
करके तपस्या साधु व्रत ले मुक्तिके स्वामी भए । तिन तपकल्याणक यजनको हम द्रव्य आठों हैं लए ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वर्द्धमानजिन अत्रावतरावतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव२ वषट् ।

छंद चाली-शुचि गंगाजल भर झारी, रुज जन्म मरण क्षयकारी । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शीतल चंदन घसि लाऊं, भवका आताप शमाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ चंदनं ॥
अक्षत ले शशि दुतिकारी, अक्षयगुणके करतारी । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ अक्षतं ॥
बहु फूल सुवर्ण चुनाऊं, निज काम व्यथा हटवाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ पुष्पं ॥
चरु ताजे स्वच्छ वनाऊं, निज रोग क्षुधा मिटवाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ चरुं ॥
दीपक ले तम हरतारा, निज ज्ञानप्रभा विस्तारा । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ दीपं ॥
धूपायन धूप खिवाऊं, निज आठों कर्म जलाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ धूपं ॥
फल सुन्दर ताजे लाऊं, शिवफल ले चाह मिटाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ फलं ॥

शुभ आठों द्रव्य मिलाऊं, करि अर्घ परम सुख पाऊं। तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ अर्घं ॥

प्रत्येक अर्घ ।

नौमी वदि चैत प्रमाणी, वृषभेश तपस्या ठानी। निजमें निज रूप पिछाना, हम पूजत पाप नशाना ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णानवम्या श्री ऋषभजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

दसमी शुभ माघ वदीको, अजितेश लियो तप नीको। जगका सब मोह हटाया, हम पूजत पाप भगाया ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णादशम्या श्री अजितनाथाय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

मगसिर सुदि पूरणमासी, संभव जिन होय उदासी। कचलोच महातप धारो, हम पूजत भय निरवारो ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लापूरणमास्यां श्री संभवनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

द्वादश शुभ माघ सुदीकी, अभिनंदन वन चलनेकी। चित ठान परम तप लीना, हम पूजत हैं गुण चीन्हा ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लाद्वादश्यां श्री अभिनंदननाथाय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

नौमी वैसाख सुदीमें, तप धारा जाकर वनमें। श्री सुमतिनाथ मुनिराई, पूजूं मैं ध्यान लगाई ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लानवम्यां श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (५)

कातिक वदि तेरसि गाई, पद्मप्रभु समता भाई। वन जाय घोर तप कीना, पूजें हम सम सुख भीना ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णात्रयोदश्यां श्री पद्मप्रभुजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

सुदि द्वादश जेठ सुहाई, बारा भावन प्रभु भाई। तप लीना केश उपाड़े, पूजूं सुपार्श्व यति ठाड़े ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां श्री सुपार्श्वजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

एकादश पौष वदीको, चंद्रप्रभु धारा तपको। वनमें जिन ध्यान लगाया, हम पूजत ही सुख पाया ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णाएकादश्यां श्री चंद्रप्रभुजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)

अगहन सुदि एकम जाना, श्री पुष्पदंत भगवाना। तप धार ध्यान निज कीना, पूजूं आतम गुण चीन्हा ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाएकं श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

द्वादशि वदि माघ महीना, शीतल प्रभु समता भीना। तप राखो योग सम्हारो, पूजें हम कर्म निवारो ॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णाद्वादश्यां श्री सीतलनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१०)

वदि फाल्गुण ग्यारस गाई, श्रेयांसनाथ सुखदाई, हो तपसी ध्यान लगाया, हम पूजत हैं जिनराया ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णाएकादश्यां श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११)

वदि फाल्गुण चौदसि स्वामी, श्री वासुपूज्य शिवगामी। तपसी हो समता साधी, हम पूजत धार समाधी ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णाचतुर्दश्यां श्री वासपूज्यजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१२)

वदि माघ चौथ हितकारी, श्री विमल सु दीक्षा धारी। निज परिणतिमें लय पाई, हम पूजत ध्यान लगाई ॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णाचतुर्थ्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१३)

द्वादशि वदि जेठ सुहानी, वन आए जिन त्रय ज्ञानी। धर सामायिक तप साधा, पूजूं अनंत हर बाधा ॥
ॐ ह्रीं ज्येकृष्णाद्वादश्यां श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१४)

तेरस सुदि माघ महीना, श्री धर्मनाथ तप लीना। वनमें प्रभु ध्यान लगाया, हम पूजत मुनिपद ध्याया ॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लात्रयोदश्यां श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१५)

चौदस शुभ जेठ वदीमें, श्री शांति पधारे वनमें। तहं परिग्रह तज तप लीना, पूजूं आतमरस भीना ॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां श्री शांतिनाथजिनेंद्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१६)

करि दूर परिग्रह सारी, वैसाख सुदी पड़िवारी। श्री कुंथु स्वात्मरस जाना, पूजनसे हो कल्याणा ॥
ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदाया श्री कुन्थुनाथजिनेंद्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७)

अगहन सुदि दशमी गाई, अरनाथ छोड़ गृह जाई। तप कीना होय दिगंबर, पूजें हम शुभ भावां कर ॥
ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाचतुर्दश्या श्री अरनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१८)

अगहन सुदि ग्यारस कीना, सिर केशलोच हित चीन्हा। श्री मल्लि यती व्रत धारी, पूजें नित साम्य प्रचारी ॥
ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाएकादश्यां श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१९)

वैसाख वदी दशमीको, मुनिसुव्रत धारा व्रतको। समता रसमें लौ लाए, हम पूजत हीं सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णादशम्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०)

दशमी आषाढ़ वदीकी, नमिनाथ हुए एकाकी। बनमें निज आतम ध्याए, हम पूजत ही सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णादशम्यां श्री नमिनाथजिनेंद्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१)

छठि श्रावण शुक्ला आई, श्री नेमिनाथ बन जाई। करुणाधर पशू छुड़ाए, धारा तप पूजूं ध्याए ॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठयां श्री नेमनाथजिनेंद्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२)

लखि पौष इकादशि श्यामा, श्री पार्श्वनाथ गुणधामा। तप ले वन आसन ठाना, हम पूजत शिवपद पाना ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णाचतुर्दश्या श्री पार्श्वनाथजिनेंद्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२३)

अगहन वदि दशमी गाई, बारा भावन शुभ भाई। श्री वर्द्धमान तप धारा, हम पूजत हों भव पारा ॥

ॐ ह्रीं अगहनकृष्णादशम्यां श्री वर्द्धमानजिनेंद्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४)

जयमाल।

भुजंगप्रयात छंद—नमस्ते नमस्ते नमस्ते मुनिन्दा। निवारें भली भांतिसे कर्म फंदा॥ संवारे सु द्वादश तपं बन मंझारी। सदा हम नमत हैं तिन्हें मन सम्हारी ॥ १ ॥ त्रयोदश प्रकारं सु चारित्र धारा। अहिंसा महा सत्य अस्तेय प्यारा ॥ परम ब्रह्मचर्य परिग्रह तजाया। सु धारा महा संयमं मन लगाया ॥ २ ॥ दया धार भूको निरखकर चलत हैं। सुभाषा महा शुद्ध मीठी वदत हैं ॥ करैं शुद्ध भोजन सभी दोष टालें। दयाको धरे वस्तु लें मल निकालें ॥ ३ ॥ वचन काय मन गुप्तिको नित्य धारें। धरम ध्यानसे आतम अपना विचारें॥ धरें साम्य भाव रहें लीन निजमें। सु चारित्र निश्चय धरें शुद्ध मनमें ॥४॥ ऋषभ आदि श्री वीर चौविस जिनेशा बड़े वीर क्षत्री गुणी ज्ञान ईशा। खड़ग ध्यान आतम कुबल मोह नाशा। जजें हम यतनसें स्व आतम प्रकाशा ॥ ५ ॥

दोहा—धन्य साधु सम गुण धरें, सहें परीसह धीर। पूजत मंगल हों महा, टलें जगतजन पीर ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वीरांत चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो तपकल्याणकप्राप्तेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजाके पीछे फिर आचार्य नीचेका श्लोक पढ़ सामायिक चारित्रका स्थापन प्रतिमामें करके पुष्प प्रतिमापर क्षेपें ।

यः सर्वसावद्यनिवृत्तिरूपं चारित्रमाद्यं विगतप्रमादं । आसेदिवान्सिद्धगुणानुरक्तः स एव देवो जिनबिम्ब एषः ॥

फिर चार बत्तीका दीपक जलाकर नीचे लिखा श्लोक पढ़ प्रतिमापर पुष्प क्षेपे । संघको सूचित करे कि भगवानको मनःपर्यय-ज्ञानकी प्राप्ति हुई है अर्थात् भगवान ४ ज्ञानधारी हैं ।

यदा तु सामायिकभाववृत्तं तदा मनःपर्ययतुर्यबोधं । अतश्चतुर्ज्ञानविराजितो यः स एव देवो जिनबिम्ब एषः ॥

फिर इन्द्रादि प्रणाम करके शांतिभक्ति पढ़ें । फिर आचार्य भगवान्के केशोंको पात्रमें स्थापकर नीचेका श्लोक पढ़कर भगवान्के आगे पुष्प डाले—

यस्य प्रभोः केशकलापमिन्द्रः संपूज्य निक्षिप्य च रत्नपात्रम् । निक्षेपयामास पयः पयोधौ स एव देवो जिनबिम्ब एषः ॥

फिर आचार्य इन्द्रको कहे " इन पवित्र केशोंको क्षीरसमुद्रमें क्षेपो ", इन्द्र लेकर गाजे बाजेके साथ देवोंके साथ जाकर किसी नदी या कूपमें क्षेपे । फिर आचार्य सर्व उपस्थित मंडलीसे नियमादि व व्रतादि लेनेको कहे । कुछ देर पीछे विसर्जन करके जय बोले, सर्व संघ जावे । आचार्य मूर्तिको कपड़ेमें ढककर मूल वेदीपर लाकर विराजमान करे तब अन्य प्रतिमाओंके वस्त्रादि उतारकर चंदनसे लेपकर फिर पोछकर मूल प्रतिमाके समान अंक न्यास करे अर्थात् अक्षरोंको लिखे फिर ४८ संस्कार पढ़के सबपर पुष्प डाले और कहे—अस्मिन्बिम्बे तपकल्याणकं आरोपयामि स्वाहा । फिर नमस्कार कर तपकल्याणककी क्रिया समाप्त करे ।

अध्याय सातवां।

ज्ञानकल्याणक।

(१) भगवानका प्रथम आहार—तपकल्याणकके दूसरे दिन बड़े सवेरे आचार्य, इन्द्र आदि पात्र मंडपमें आवें और पहलेके दिनकी भांति अंग शुद्ध करके अभिषेक व पूजा तथा होम करलें। मंडपमें ही यह दृश्य दिखाया जावे। पहले चबूतरे तक परदा पड़ा हो। दूसरे चबूतरे पर जहांतक विधि एकत्र की जावे वहांतक परदा रहे। दूसरे चबूतरे पर राजा सोम व श्रेयांसके घरकी कल्पना की जावे। आहार देनेके लिये इक्षुका रस तय्यार किया जावे व पूजनकी सामग्री हो। एक स्थान आहार देनेको व एक स्थान पहले भगवानको विराजमान कर पूजा करनेको रहे। कोई दो गृहस्थोंको राजा सोम व श्रेयांस स्थापित किया जावे। इसके लिए बोली बोल ली जावे—जो अधिक रुपया प्रतिष्ठाके खर्चमें दे उन्हें ही बनाया जावे। यह काम पहले ही किया जावे। जो बनें वे स्त्री सहित हों व न्यायमार्गी जिनधर्मके पक्के श्रद्धालु हों। राजा सोम व श्रेयांस शुद्ध धोती दुपट्टा पहनें मस्तक ढके, दोनों स्त्रियां भी शुद्ध वस्त्र पहनें। चारों जने नारियलसे ढका पानीका कलश लेकर चबूतरेके आगे ही द्वारापेक्षणके निमित्त खड़े हों। इतनेमें परदा उठे।

आचार्य मूल प्रतिमाको लेकर मंडपके बाहरसे सिरपर धरकर लावे उस समय सर्व सभाजन जयजयकार शब्द करें। अब चबूतरेके पास प्रभु आजावें तब राजा सोम कहे—"अत्र आहार पानी शुद्ध, तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ" फिर आचार्य भगवानको उच्च आसनपर विराजमान करे तब दातार राजा सोम भगवानके चरणोंको शुद्ध जलसे धोवें, गन्धोदक लगावें फिर हाथ धो अष्टद्रव्यसे नीचे प्रकार पूजन करें पूजन करके तीन प्रदक्षिणा दें नमस्कार करें फिर नौ दफे णमोकार मंत्र पढ़ें। भगवानको आचार्य उठाकर दूसरे उच्च आसनपर विराजमान करे तब राजा सोम इक्षुरसकी धारा भगवानके हाथपर डाले तब ही ऊपरसे रत्नोंकी व पुष्पोंकी वृष्टि हो। मण्डपके बाहर बाजे बजे, भीतर घंटा घड़ियाल बजे, मन्द सुगंधित पवन चलानेके लिये सुगंधित धूप खेई जावे तथा लोग यह कहें—धन्य यह दान, धन्य यह पात्र श्रीतीर्थंकर ऋषभदेव, धन्य यह दातार! चारों तरफ खूब जय जयकार शब्द हो। फिर शुद्ध जलसे हाथोंको धोकर कपडेसे पोंछ दे। आचार्य प्रतिमाको दूसरे आसनपर बिराजमान करें और आचार्य या सूचक पात्र या अन्य कोई पंडित दानका महात्म्य समझावे तथा उससमय राजा सोम व श्रेयांस स्त्री सहित हाथ जोड़े प्रभुके सन्मुख खड़े रहें तथा चार दान व विद्यादानार्थ कुछ रकमकी घोषणा करावें तथा आचार्य अन्य लोगोंको भी दानकी प्रेरणा करें। यदि दानकी इच्छा हो तो मुखिया पट्टी लेकर सबके पास घूम

आवे। इधर आचार्य भगवानको लेकर मण्डपसे बाहर लेजाकर मूल वेदीपर विराजमान करें, दूसरे चबूतरेपर भी परदा पड़ जावे परन्तु मण्डपमें भजन होने लगें। जबतक दान न लिख जावे मण्डपसे किसीको जाने न दिया जावे।

पूजा जो आहारके समय पढ़ी जावे।

पहले ही राजा सोम व श्रेयांस मिलकर स्तुति पढ़े—

पद्धरी छन्द—जय जय तीर्थंकर गुरु महान, हम देख हुए कृतकृत्य प्राण। महिमा तुमरी वरणी न जाय, तुम शिव मारग साधत स्वभाव ॥ १ ॥ जय धन्य धन्य ऋषभेश आज, तुम दर्शनसे सब पाप भाज। हम हुए सु पावन गात्र आज, जय धन्य धन्य तप सार साज ॥ २ ॥ तुम छोड़ परिग्रह भार नाथ, लीनो चारित तप ज्ञान साथ। निज आतम ध्यान प्रकाश-कार, तुम कर्म जलावन वृत्ति धार ॥ ३ ॥ जय सर्व जीव रक्षक कृपाल, जय धारत रत्नत्रय विशाल। जय मौनी आतम मननकार, जग जीव उद्धारण मार्ग धार ॥ ४ ॥ हम गृह पवित्र तुम चरण पाय, हम मन पवित्र तुम ध्याय ध्याय। हम भए कृतारथ आप पाय, तुम चरण सेवने चित बढ़ाय ॥ ५ ॥

ॐ ह्री श्री ऋषभ तीर्थंकर पुष्पांजलिं क्षिपेत्। थालमें पुष्प डाले।

वसंततिलका—सुन्दर पवित्र गंगाजल लेय झारी, डारूं त्रिधार तुम चरणन अग्र भारी।
श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर मुनींद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चन्दनादि शुभ केशर मिश्र लाये, भव ताप उपशमकरण निज भाव ध्याए। श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा० ॥चंदनं॥
शुभ श्वेत निर्मल सुअक्षत धार थाली, अक्षय गुणा प्रगट कारण शक्तिशाली। श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा० ॥अक्षतं॥
चम्पा गुलाब इत्यादि सु पुष्प धारे, है काम शत्रु बलवान तिसे विदारे। श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनीन्द्र चरणा० ॥ पुष्प ॥
फेणी मुहाल बरफी पकवान लाए, क्षुदरोग नाशने कारण काल पाए। श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा० ॥ चरुं ॥
शुभ दीप रत्नमय लाय तमोपहारी, तम मोह नाश मम होय अपार भारी। श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनीन्द्र चरणा० ॥ दीपं ॥
सुन्दर सुगंधित सु पावन धूप खेऊं, अरु कर्म काठको बाल निजातम वेऊं। श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा० ॥ धूपं ॥

द्राक्षा बदाम फल सार भराय थाली, शिव लाभ होय सुखसे समता संभाली। श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरण० ॥ फलं ॥
शुभ अष्ट द्रव्य मय उत्तम अर्घ लाया, संसार खार जल तारण हेतु आया। श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरण० ॥ अर्घं ॥

जयमाल ।

छन्द स्रग्विणी—जय मुदारूप तेरे सदा दोष ना, ज्ञान श्रद्धाम पूरित धरैं शोक ना । राजको त्याग वैराग्य धारी भए, मुक्तिका राज लेने परम मुनि थये ॥ १ ॥ आतमको जानके पापको भानके, तत्त्वको पायके ध्यान उर आनके । क्रोधको हानके मानको हानके, लोभको जीतके मोहको भानके ॥२॥ धर्म मय होयके साधते मोक्षको, बाधते मोक्षको जीतते द्वेषको। शांतता धारते साम्यता पालते, आप पूजन किये सर्व अघ बालते ॥ ३ ॥ धन्य हैं आज हम दान सम्यक् करें, पात्र उत्तम महा पापके दुख दरें । पुण्य सम्पत भरें काज हमरे सरें, आप सम होयके जन्म सागर तरें ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर मुनींद्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(२) भगवानका क्षपकश्रेणीपर आरूढ़ होना—सवेरे १० बजे तक आहारदानकी विधि होजावे । दो घंटे छुट्टी रहे । १२ बजेसे मण्डपमें कार्य प्रारम्भ किया जावे । १२॥ बजे सर्व समूह टिकटों द्वारा एकत्र किया जावे। आज ज्ञानकल्याणक होकर शाम तक प्रभुका नगरमें विहार व उपदेश होजावे। रात्रिको मण्डपमें उपदेश हो। विहार करनेके लिये यथायोग्य जुलूस तैयार रहे। रथपर प्रभुका विहार हो जो २ घंटेके भीतर लौट आवे । रास्तेमें चार जगह सामियाना रहे । ऐसा रास्ता लिया जावे जो जाते हुए दूसरा हो व आते हुए दूसरा हो। जब विहार होवे जहां शामियाना हो, वहां रथ ठहर जावे, वहां १ भजन व २० मिनट धर्मोपदेश हो । मंडपमें दूसरे चबूतरेपर एक वनकी शोभा तैयार की जावे, कुछ गमले रख दिये जावें व एक छायादार वृक्ष रहे जिसके नीचे उच्च शिलापर भगवान् अकेले तप करते हुए बैठे हों ऐसी रचना उस वृक्षकी स्थापनाके लिये नीचेका श्लोक पढ़ उसपर पुष्प क्षेपे—

शाखाच्छायेन योसौ हरति खलु सतां कर्मधर्मांशुतापम् । यः सौख्योदारसारं फलति शुभफलं मोक्षनाकादिभेदम् ॥
सेवंते यं तदर्थं विबुधजनखगा यस्य चैवं प्रभावः । संगाज्जातो हि तस्य त्रिभुवनमहितः सोस्तु बोधिद्रुमोऽयम् ॥ १ ॥

जिस शिलापर आचार्य विराजमान करे उसके ऊपर मातृकायंत्र नीचेप्रमाण लिखदे । फिर प्रतिमाजीको विराजमान करे ।

मातृका यंत्र।

ॐ नमो	क ख ग घ ङ			च छ ज झ ञ
श ष स ह	अं अः	अ आ	इ ई	ट ठ ड ढ ण
	ओ औ	ह्रीं	उ ऊ	
	ए ऐ	ऌ ॡ	ऋ ॠ	
य र ल व	प फ ब भ म			त थ द ध न

क्लीं ह्रीं क्रौं स्वाहा।

और इसी मंत्रको १०८ वार पढ़कर आगे जलधारा देवे।

मातृका मंत्र।

ॐ नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह, क्लीं ह्रीं क्रौं स्वाहा।

फिर परदा उठावे तब सब जयजयकार शब्द कहें। दूसरे चबूतरेपर सिवाय आचार्यके और कोई न हो। सूचक पात्र एक कोनेमें खड़ा हुआ कहे कि भगवान् ध्यानमें मग्न हैं तपस्या कर रहे हैं। आचार्यके पास पूजनकी सामग्री हो।

२-३ मिनट ठहरकर आचार्य उठे और प्रतिमाजीको नमस्कार करता हुआ यह स्तुति पढ़े—

छन्द मुक्तादाम—नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु मुनीश। परम तपके करतार रिषीश॥ न मोह न मान न क्रोध न लोभ। न हास्य न खेद न द्रोह न क्षोभ॥ १॥ ममत्त्व न राग पदारथ सर्व। चिदातम वेदत छांड़त गर्व॥ सु भेद विज्ञान जगो चित बीच। सु आतम अनुभव लावत खींच॥ २॥ स्वतन्त्र रमन्त करत निज काज। कषाय रिपू दलनेको आज॥ लियो सत ध्यान मई असि सार। नमूं तुमको जिन कर्म निवार॥ ३॥

फिर नीचेका श्लोक पढ़कर अर्घ देवे।

बाह्याभ्यंतरभेदतो द्विविधता तत्रापि षट्भेदकं, बाह्यावांतरमेधितस्वविभवप्रत्यूहनिर्णाशनात्।
भक्ष्याभावतदूनताव्रतपरीसंख्यानषट्स्वादनामोहैकांतशयासनांगकदनान्येवं तु बाह्यं तपः॥ ८४४॥

ॐ ह्रीं अनशनावमोदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्यागैकांतशय्यासनकायक्लेश षट्प्रकार बाह्यतपोधारकाय जिनाय अर्घं नि० स्वाहा।

अंत्ये दोषविसंगतो न भवति प्रायश्चितानां क्रमो, नो वा यत्र विनेयताव्युपरमादौपाधिकस्योद्भवः।
नांन्यत्र स्थितिमत्सु साधुषु तथा वैयावृतेः प्रक्रमो, नो वा शास्त्रसुशीलनं त्विति परंपार्येण बोध्यं जिने॥ ८४५॥
व्युत्सर्गं प्रतिवासरं प्रसरतो ध्यानं स्वमाध्यायत, आख्यामात्रमुपाचरत्प्रतिकृतेर्मार्गप्रलंभावनात्।
गाढोत्कृष्टसुसंहनस्य जिनपस्यास्येति संरूढितः, क्लृप्तं तच्छुचि नाम तत्फलगणैः संपूजयाम्यादरात्॥ ८४६॥

ॐ ह्रीं प्रायश्चित्तविनयवैय्यावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यान षट्प्रकारांतरंगतपोनिष्ठाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यहांपर सूचक कहदे कि प्रभु १२ तपका साधन कर रहे हैं, धर्मध्यानमें मग्न हैं।

दोहा—अप्रमत्त थानक चढ़े, अधःकरणमें लीन। क्षपक श्रेणिका यत्न है, कर्म करे अति दीन॥
सम्यक्त घातक प्रकृति, सात नहीं प्रभु पास। देव नरक तिर्यंचगति, नहीं तहां है वास॥

ॐ ह्रीं अप्रमत्तगुणस्थानवर्ती अधःकरणप्रवत्त मिथ्यात्त्वादि दशकर्मसत्तारहित श्रीजिनाय अर्घं।

यहां आचार्य या सूचकपात्र सभाको समझा दे कि भगवान क्षपकश्रेणीपर चढ़नेका उद्यम कर रहे हैं। सातिशय अप्रमत्त गुणस्थानमें अधःकरण लब्धिको प्रारम्भ किया है। यहां भगवानकी आत्मामें १० प्रकृति नहीं हैं।

दोहा—फिर अपूर्व थानक चढ़े, शुक्लध्यान गहलीन। मोह—शक्ति विध्वंशके, भाव अपूरव कीन॥

ॐ ह्रीं अपूर्वगुणस्थानारूढ़ श्री जिनाय अर्घं । यहां समझाया जाय कि प्रभु क्षपकश्रेणीमें चढ़े, आठवें गुणस्थानमें जाकर मोहकी २१ प्रकृतियोंके बलको निर्बल कर रहे हैं । (४ अनंतानुबन्धी सिवाय)—

दोहा—थानक अनिवृत्ती चढ़े, शुद्ध भाव असि धार । त्रिंशत छः कर्मन प्रकृति, कीना प्रभु संहार ॥
नरकगती तिर्यंच गति, और आनुपूर्वीय । इक वे ते चहुं जातिको, उद्योता तप लीय ॥
थावर सूक्ष्म साधारणे, खोटी निद्रा तीन । विंशति प्रकृति कषायकी, लोभ विना क्षय कीन ॥

ॐ ह्रीं अनिवृत्तिगुणस्थानारूढ़षट्त्रिंशत्प्रकृतिविदारणाय श्रीजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यहां प्रकट किया जाय कि प्रभुने शुक्लध्यानकी अग्निसे ३६ कर्मोंका क्षय कर डाला ।

दोहा—सूक्ष्म कषाय सुथानमें, चढ़े नाथ अति धीर । लोभ प्रकृति नाशी सकल, मोह हत्यो जगवीर ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मकषायगुणस्थानारूढलोभप्रकृतिविदारणाय श्रीजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यहा सूचना हो कि १०वेंमें लोभका नाश किया ।

दोहा—वारम क्षीण कषाय गुण, चढ़े प्रभू वलवान । द्वितीय शुक्ल ध्यावत भये, एक भाव अमलान ॥

ॐ ह्रीं क्षीणकषायगुणस्थानारूढ़एकत्ववितर्कावीचार शुक्लध्यानधारकाय श्रीजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(३) तिलकदान विधि—फिर आचार्य खड़े हो बहुत विनयसे चारित्रभक्ति पढ़े और नीचेलिखे मंत्र पढ़े। इस समय लग्न शुभ हो।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा एहि संवौषट् । ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । फिर नीचे लिखे मंत्रका १०८ दफे जाप करे ।

ॐ ह्रीं श्री अर्हं असि आ उ सा अप्रतिहत शक्तिर्भवतु ह्रीं स्वाहा । यह जाप करके फिर सुगंधित केशरसे प्रतिमाके नाभिस्थानमें सोनेकी सलाईसे ह्रीं ऐसा लिखे-(४) अधिवासना विधि—फिर जल चंदनादि चढ़ावे—

सुगंधिशीतलैः स्वच्छैः साधुभिर्विमलैर्जलैः अनन्तज्ञानदृग्वीर्य सुखरूपं जिनं यजे ।

ॐ ह्रीं श्री नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा जलं ।

काश्मीरचन्दनरसेन विलुब्धशुम्भत्सौरम्यमत्तमधुपावलिझंकृतेन ।

पीठस्थलीं जिनपतेरधिपादपद्मं संचर्चयामि मुनिभिः परितः पवित्रां ॥ ८५२ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु२ चंदनं गृहाण गृहाण स्वाहा । चंदन चढ़ावे ।

मुक्ताफलच्छविपराजितकामकांतिमोद्भूतमोहतिमिरैकफलौघहेतु ।

शाल्यक्षतार्थपरिपूर्णपवित्रपात्रमुत्तारयामि भवतो जिनपस्य पार्श्वे ॥ ८५३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु अक्षतान् गृहाण गृहाण स्वाहा । अक्षतं ।

सौरभ्यसांद्रमकरंदमनोऽभिरामपुष्पैः सुवर्णहरिचन्दनपारिजातैः ।

श्रीमोक्षमानिवनितापरिलंभनाय माल्यादिभिश्चरणधोरणिमुत्सृजामि ॥ ८५४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु पुष्पाणि गृहाण गृहाण स्वाहा । पुष्पं ।

पष्ठोपवासविधये नवसर्पिषाक्तनैवेद्यभाजनमिदं परिवर्त्य सप्त ।

वारं तदीयपरिहृत्यभिधाप्रसिद्ध्यै संस्थापयेज्जिनवराग्रिमभूतधात्र्यां ॥ ८५६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु नैवेद्य गृहाण गृहाण स्वाहा । नैवेद्यं ।

स्फूर्जन्मयूखविततिमहतांधकारं दीपं घृतादिमणिरत्नविशालशोभं ।

उद्गिन्नशुक्रयुगलांतिमभागभाजो देहद्युतिं द्विगुणकोटियुतां करोमि ॥ ८५७ ॥

ॐ ह्रीं प्रज्वल प्रज्वल अमिततेजसे दीप गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्पूरचन्दनपरागसुरम्यधूपक्षेपोऽस्तु मे सकलकर्महतिप्रधानः। इत्येवभावमभिधाय हसंतिकायामुत्क्षेपयामि किल धूपसमूहमेनं॥

ॐ ह्रीं सर्वतो दह दह तेजोऽधिपतये समूह भूताय धूपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्माष्टकापहरणं फलमस्ति मुख्यं तत्प्राप्तिसम्मुखतया स्थितवानसि त्वं ।

यस्मादनेकगुणलास्यकलानिधानधाम्नस्तवस्थलमदभ्रफलैर्यजामि ॥ ८५९ ॥

ॐ ह्रीं आश्रितजनायाभिमतफलानि ददातु ददातु स्वाहा ।

त्रैलोक्याभपदं त्रिकालपतिताशेषार्थपर्यायजानन्तानन्तविकल्पनस्फुटकरं संसारचक्रोत्तरं ।

ज्योतिः केवलनामचक्रमवतो ध्यानावतानमभोयोंऽयं तुर्यविशंशनक्षणमहः कोऽयेप जीयात्पुनः ॥ ८६० ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते द्वितीयशुक्लध्यानोपांत्यसमयप्राप्ताय अर्घं ।

यस्याश्रयेण सकलाघतृणौघदाहशक्तित्वमाप चरितं चरितं जनेन। तच्चारुपञ्चतयरूपमपास्य चारमन्त्यं यथाख्यमगमत्परिपूर्णतांग॥

ॐ ह्रीं यथाख्यातचारित्रधारकाय जिनाय अर्घं । यहांतक अधिवासना विधि हुई—

(५) श्री मुखोद्‌घाटन क्रिया—

नूनं निरावृतिचमत्कृतिकारि तेजो नो शक्यमीक्षितवतामपि भावुकानां ।
इत्येवमर्पितनयानयनेन शंभोरग्रे मुखाग्रमहवस्त्रमुपाकरोमि ॥ ८५९ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्व शरीरावस्थिताय समदन फलं सप्त धान्ययुतं मुत्र वस्त्रं ददामि स्वाहा ।

इतना कहे तब परदा पड जावे—सूचक कहे कि भगवान्‌को केवलज्ञान होनेवाला है। जबतक परदा न उठे आप सब मनमें णमोकार मंत्रका जाप करें व सिद्ध परमात्माका ध्यान करें। आचार्य परदेके भीतर होजाय कोई तरफ दिखाव न हो। इस समय यदि कोई मुनि महाराज हों या ऐलक या क्षुल्लक या चारित्रवान् प्रतिमाधारी ब्रह्मचारी हों तो उनको आचार्य भीतर ले ले। यदि न हों तो कोई हर्ज नहीं है। एक शुद्ध वस्त्रमें सात प्रकार अनाज बांधकर मुखपर ढककर लपेट दे। तथा आगे जौकी माला रख दे।

फिर आचार्य नग्न होजावे व ऐलकादि भी नग्न होजावें। ॐ नमः सिद्धेभ्यः ऐसा मंत्र पढ़ें। आचार्य इस मंत्रको पढ़ते हुए चारोंतरफ जलधारा दे सिद्धचक्र यंत्रको पास रखकर नीचे लिखी स्तुति पढ़े, दोनो हाथ जोड खडे रहें।

स्वस्तिश्रीऋषभो देवोऽजितः स्वस्त्यस्तु संभवः अभिनंदननामा च स्वस्ति श्रीसुमति प्रभुः ॥ ८६१ ॥
पद्मप्रभः स्वस्ति देवः सुपार्श्वः स्वस्ति जायतां। चंद्रप्रभः स्वस्ति नोऽस्तु पुष्पदंतश्च शीतलः ॥ ८६२ ॥
श्रेयान् स्वस्ति वासुपूज्यो विमलः स्वस्त्यनंतजित्। धर्मो जिनः सदा स्वस्ति शांति कुंथुश्च स्वस्त्वरः ॥ ८६३ ॥
मल्लिनाथः स्वस्ति मुनिसुव्रतः स्वस्ति वै नमिः। नेमिर्जिनः स्वस्ति पार्श्वो वीरः स्वास्ति च जायतां ॥ ८६४ ॥
भूतभाविजिनाः सर्वे स्वस्ति श्रीसिद्धनायकाः। आचार्यः स्वस्त्युपाध्यायः साधवः स्वस्ति संतु नः ॥ ८६५ ॥

यह पढ़कर पुष्पांजलि देवे। फिर नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़कर मुखके ऊपरसे कपड़ेको हटाले।

अथाख्यातं प्रांतोदयधरणिधृन्मूर्द्धनि प्रकाशोल्लासाभ्या युगपदुपयुंजांस्त्रिभुवनं ।
दधज्ज्योतिः स्वायंभवमपगतात्त्यपपथो मुखोद्घाटं लक्ष्म्या व्रजतु यवनीं दूरमुदयेत ॥ ८६६ ॥

ॐ उसहादिवड्ढमाणाणं पंचमहाकल्लाणसंपण्णाणं महइमहावीरवड्ढमाणसामीणं सिज्जउ मे महइमहाविज्जा अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं सयलकलाधराणं सज्जोजादरूवाणं चउतीसातिसयविसेससंजुत्ताणं बत्तीसदेवींदमणिमत्थयमहियाणं सयलक्लोयस्स स्संतिपुट्ठिकल्लाणाउआ-रोग्गकराणं बलदेववासुदेवचक्कहररिसिमुणिजदिअणगारोवगूढाणं उद्दयलोयसुहफलयराणं थुइसयसहस्सणिलयाणं परापरपरमप्पाणं अणाहिणि-हणाणं बलिबाहुबलिसदाणं वीरे वीरे ॐ हां क्षां सेणवीरे वड्ढमाणवीरे णहसंनयंतवराईए वज्जसिलथंभमयाणं सस्सदवंभपइट्ठियाणं उसहा-इवीरमंगलमहापुरिसाणं णिच्चकालपइट्ठियाणं इत्थसंणिहिया मे भवंतु मे भवंतु ठः ठः क्ष क्ष स्वाहा। यह श्री मुखोद्घाटन क्रिया हुई—

(६) **नयनोन्मीलन क्रिया**—फिर रकाबीमें कपूर जलाकर सुवर्णकी सलाईको रक्खे और दाहने हाथमें लेकर सोहं मंत्रको ध्याता हुआ तथा १०८ दफे "ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं नमः" पढ़े। फिर नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़कर नेत्रमें सलाई फेरे—

येनाबद्धनिरूढकर्मविकृतिप्रालंबिका निर्घृणं, छिन्नात्मानमजं स्वयंभुवमपूर्वीयं स्वयं प्रासवान् ।
सोऽयं मोक्षरमाकटाक्षसरणिप्रेमास्पदः श्रीजिनः साक्षादत्र निरूपितः स खलु मां पायादपायात्सदा ॥८६७॥

"ॐ णमो अरहंताणं णाणदंसणचक्खुमयाणं अमियरसायणविमलतेयाणं संति तुट्ठि पुट्ठि वरदसम्मादिठीणं वं झं अमिय वरसीणं स्वाहा। यह मंत्र जयसेन कृत पाठमें है। नेमचंद कृत पाठमें यह मंत्र है—"ॐ ह्रीं अर्हं नमो अरहंताणं असि आ उ सा श्रीं ॐ ह्रीं हूँ त्रिकाल त्रिलोकपूजित सर्वज्ञसित रक्त नील कांचन कृष्ण नेत्रोन्मीलनानंतज्ञान अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, अनन्तसु खात्मकाय नयनोन्मीलनं विदधामि संवौषट्। फिर आचार्य और मुनि आदि जो हों सो मिलकर सूरिमंत्र पढ़ें—

"ॐ ह्रीं णमोअरहंताणं णमोसिद्धाणं णमोआइरीयाणं णमोउवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं, चत्तारि मंगलं—अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहूमंगलं, केवलिपणत्तोधम्मोमंगलं। चत्तारिलोकोत्तमा-अरहंतलोकोत्तमा सिद्धलोकोत्तमा साहूलोकोत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मोलोकोत्तमा। चत्तारिसरणं पव्वज्जामि अरहंतसरणं पव्वज्जामि सिद्धसरणं पव्वज्जामि साहूसरणं पव्वज्जामि केवलिपण्णत्तो धम्मंसरणं पव्वज्जामि। क्रौं ह्रीं स्वाहा। दोनों कानोंमें पढ़कर पुष्प प्रतिमापर क्षेपे तथा सर्वज्ञपना प्रगट करें।

नोट—सूरि मंत्रके देनेका वर्णन मात्र जयसेन पाठमें है, आशाधर व नेमचन्द कृतमें नहीं है। हमने सूरि मंत्र क्या है ऐसा प्रश्न

दो उदासीन प्रतिष्ठा करानेवालोंसे पूछा परन्तु उन्होंने भी बताया नहीं। जयसेन छ० १३६ में अथ सूरिमंत्र ऐसा लिखके आगे जो मंत्र लिखा था सो हमने नकल कर दिया है। यदि और कोई मंत्र हो तो प्राचीन प्रतिष्ठा करानेवाले उसे ही पढ़ें व इस पुस्तकमें सुधार देवें। किसी बातको छिपाके रखना उचित नहीं है। फिर नीचेकी गाथा पढ़कर यवकी मालाको हटाले—

ॐ सत्तक्खरगब्भाणं अरहंताणं णमोत्थि भावेण। जो कुणइ अणण्णमणो सो गच्छइ उत्तमं ठाण॥

फिर नीचेका श्लोक पढ़ अर्घ देवे।

शुक्लद्वयेन परिहृस तपोवितानमात्मानमाशु परिक्लृप्य कृतावकाशं।
ज्ञानावलोकनसमत्ययनाशमापन्मोहस्य पूर्वदलनेन समस्तभावात॥ ८४८॥

ॐ ह्रीं मोहनीय ज्ञानदर्शनावरणान्तराय निर्नाशकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

फिर नीचेकी गाथा पढकर पुष्प प्रतिमापर डाले—

ॐ केवलणाणदिवायरकिरणकलावप्पणासियण्णाणे। णवकेवललद्धुग्गमसुजणियपरमप्पववएसो॥
असहायणाणदंसणमहिओ इदिकेवली होदि। जोयेण जुत्तो ति स जोणिजिणो अणाहिणिहणारिसे वुत्तो॥

इत्येषोऽर्हन् साक्षादवतीर्णो विश्वं पातु इति स्वाहा।

तब बाहर बाजे बजने लगें। आचार्य भगवानके आगे बहुतसा कपूर जलता हुआ रक्खे और परदा उठे तब सब जय जय कहें। तब आचार्य व सूचक कहें कि भगवानको केवलज्ञानकी प्राप्ति होगई है। आचार्य परदा खोलनेके पहले वस्त्र पहन ले। फिर आचार्य बहुत विनयसे नमस्कार करे और नीचे लिखी स्तुति पढ़े। स्तुतिके पीछे नमन करके यह सूचित करे कि भगवानने दूसरे शुक्लध्यानसे १६ प्रकृतियोंको नाश किया। ज्ञानावरणीय ५, दर्शनावरणीय ६, अन्तराय ५,—४७ पहले नाशीं थीं इस तरह ६३ प्रकृतिको नाशकर या चार घातिया कर्म नाशकर भगवान्ने केवलज्ञान प्राप्त किया है।

स्तुति।

पद्धरीछन्द—जय केवलज्ञान प्रकाश धरं। ज्ञानावरणीय विनाश करं॥ जय केवल दर्शन नायक हो। दर्शन आवरणी घायक हो॥१॥ जय वीर्य अनन्त प्रकाशक हो। जय अन्तराय अघ नाशक हो॥ तुम मोह बली क्षय कारक हो। क्षायिक

समकितके धारक हो ॥२॥ क्षायिक चारित्र विशाल धरं । आनन्द अनन्त प्रकाश करं ॥ जग मांहि अपूरव सूरज हो । विकसन भवि जीवन नीरज हो ॥ ३ ॥ मिथ्यात्व महा तम टालन हो । शिव मग उत्तम दरशावन हो ॥ तुम तारण तरण तरंड वरं । सुखकारण रत्नकरंड वरं ॥ ४ ॥

९ मिनट तक भगवानका दर्शन सब अपने २ यहां बैठे हुए कर चुकें कि परदा गिर जावे । परदेके बाहर इन्द्र आता है, उसीके साथ कुवेरदेव भी आता है । इन्द्र सभाकी तरफ संकेत करके कहता है—

कुवेर ! अभी ही तीर्थनायक श्री ऋषभदेवको केवलज्ञानका प्रकाश हुआ है । तीर्थप्रचार करनेका अवसर उपस्थित हुआ है । तुम शीघ्र समवसरणकी रचना तैयार करो, हम सब इन्द्रादि देव आते हैं । प्रभुकी भक्तिकर व उत्तम धर्मामृत पीकर तृप्तिता पांयगे और अपने भवभवके पापोंका संहार करेंगे । कुवेर नमन कर कहता है–"जो आज्ञा"—पहले कुवेर जाता है फिर इन्द्र भी जाते हैं ।

(८) **समवशरण रचना व पूजा**—परदेके भीतर समवशरणकी रचना तैयार की जाती है । बनकी रचना तुर्त हटानी चाहिये । गंधकुटी विराजमान करके तीन छत्र हों, दोनों तरफ दो इन्द्र चमर ढरते हों, सिंहासन हो, भामंडल हो, आगे आठमंगलद्रव्य हों । गंधकुटीके आगे २४ कोठोंका मांडला एक छोटी चौकीपर रचा हुआ सुन्दर रक्खा जाय, आगे पूजा करनेका सामान हो, आगे चढ़ानेके लिये कुछ रक्खा जाय । इसतरह रचना बन जावे । वृक्ष जो पहले था वह गंधकुटीके पीछे रहने दिया जावे । यदि समवशरणके नकशेका परदा हो तो एक तरफ टांग दिया जावे । यदि तीन कटनीदार चबूतरा हो व उसपर गंधकूटी रहे तो और भी ठीक है । पहली कटनीपर आठ मंगलद्रव्य हों व धर्मचक्र हो, दूसरी कटनीपर ध्वजाएं हों क्योंकि भगवान अन्तरीक्ष विराजते हैं इसलिये यदि स्फटिक कमलाकार व शीशेका कमलाकार सिंहासन हो तो और भी शोभा हो । इस तरह रचना होनेपर परदा उठे । उस समय 'श्री वृषभदेवके समवशरणकी जय' ऐसे शब्द चारों ओरसे होवें ।

इतनेहीमें सौधर्म इन्द्र व अन्य इन्द्रदेवोंके साथ व इन्द्राणी कुछ अन्य देवियोंके साथ बाजा बजाते हुए जय जय शब्द कहते हुए मण्डपमें पधारें व पुष्पांजलि देकर नमस्कार करें । एक ओर इन्द्र तथा आचार्य पूजा करे, इधर उधर इन्द्राणी पूजा करें । इधर उधर सामान पूजाका रक्खा हो । सब बैठे हों । तब नीचे प्रमाण अर्घ चढावें—

सत्तामात्रग्राहकं दर्शनं च तद्भेदानां ग्राहकं ज्ञानमुक्तं । ताभ्यां स्वास्थ्यं पूर्णमुक्तं सुखं तच्छक्तेर्व्यक्तिर्वीयमत्रार्चयामि ॥८६९॥

ॐ ह्री नमोऽर्हते भगवतेऽनतज्ञानदर्शनसुखवीर्यविभ्राजते जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यहां आचार्य या सूचकपात्र चार चतुष्टयको १ मिनटके भीतर समझा दे।

सम्यक्त्वं चरितं सुबोधनदृशौ वीर्यं ददिर्लाभको, भोगोपादिभुजी हि यस्य नवकं लब्धेः सदा क्षायिकं।
सम्पन्नं खलु केवलोदगमनतस्तं सांमतं ध्यायतो, विघ्नानां निचयः प्रणाशनमियात्तत्संस्मृतिप्रार्थनात् ॥८७०॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते नवकेवललब्धिभ्यो अर्घं। यहां नव केवल लब्धियोंको समझा दिया जावे। (क्षायिकसम्यक्त, क्षायिक-चारित्र, अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, अनन्तदान, अनन्तलाभ, अनन्तभोग, अनन्तउपभोग।)

सौभिक्ष्यं मुकुरोपमक्षितिरथो व्योमक्रमप्रक्रमः, प्राण्याघातविनिर्गमश्च कवलाहारव्यपायः परैः।
अक्लेशोपचयश्चतुर्मुखदृशिर्विद्येश्वरत्वं तनो–रच्छायत्वमकेशवृद्धिरिति वै दिक्संख्यकाः केवले ॥ ८७१॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते दशकेवलातिशयेभ्योऽर्घम्। (यहा १० अतिशय समझा दी जावें।) १ सुभिक्षपना, २ दर्पण समान पृथ्वी, ३ आकाशकी निर्मलता, ४ प्राणिवधका अभाव, ५ कवलाहारका अभाव, ६ उपसर्गका अभाव, ७ चार मुख दीखना, ८ सर्व विद्या ईश्वरपना, ९ शरीरकी छाया न पडना, १० नखकेश न बढ़ना।

दिव्या वाग् जनसौहृदं प्रतिपदं सर्वाह्निगोत्रारुहा, भूरादर्शतला मृदुस्वसनसन्मोदौ तु भूः शालिनी।
सौरभ्यांबुधरी सुवृष्टिरमला पादक्रमाधोतले, स्वच्छांभोरुहनिर्मितिः खममलं दिग्संमदश्चक्रकं ॥ ८७२ ॥
धर्माख्यं पुरतश्च सज्जनमनोमिथ्यात्वसंस्फेटनं, देवाह्वानपरस्पराधिकमुदा सन्मंगलाष्टावितिः।
दिव्यातीशयसंयुतो जिनपतिः शक्राज्ञया रैमुचा, क्लृप्ते श्रीसमवादिसंस्तुतिपदे संतिष्ठवांस्तान्मुदे ॥ ८७३ ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते चतुर्दशदेवकृतातिशयसम्पन्नाय जिनाय अर्घं। (यहा १४ देवकृत अतिशय बताई जावें।) १ अर्द्ध-मागधी दिव्यध्वनि, २ मैत्रीभाव प्रचार, ३ सर्वऋतुके फल फूल, ४ कंटकरहित भूमि, ५ मंद सुगंध पवन, ६ सर्वधान्यमई क्षेत्र, ७ गन्धोदक वर्षा, ८ विहार समय सुवर्ण कमल रचना, ९ निर्मल आकाश, १० देवकृत परस्पर बुलाना, ११ धर्मचक्र, १२ आठ मगल द्रव्य, १३ प्राणियोंमें मिथ्या भावका अभाव, १४ दिशाओंमे आनन्द)।

(नोट–अन्य ग्रन्थमें ऊपरके १० अतिशयोंमें पलकें न लगना है, दर्पण समान पृथ्वी नहीं है)।

मानस्तम्भसरः सपुष्पविपिनं सत्खातिका चाभितः, प्राकारादिसुनाट्यभूमिविपिने नाकालयक्ष्मारुहाः ।
स्तूपा हर्म्यततिर्ध्वजावलिमभे सद्गंधवेदिक्रमोऽ–शोकोर्वीरुहसिंहपादनभसिस्थायी जिनः पातु नः ॥ ८७४ ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते समवशरणविभूतिसंपन्नाय जिनाय अर्घं । (यहां समवशरणका कुछ भाव बता दिया जावे)–

वनस्पतित्वेऽपि गतप्रशोकोऽशोको बभूवातिमदप्रसूनः । अनेकसंदर्शकशोकहारी वृक्षो जिनेन्द्राश्रयणप्रभावात् ॥ ८७५ ॥

ॐ ह्रीं अशोकप्रातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रेयस्तरुः फलति नोऽमरसौख्यमुच्चैर्हर्षोत्सुकत्वपरिलंभनसन्निभेण ।
देवैः कृता सुमनसां परिवृष्टिरेषा मोदं ददातु भवदुःखजुषां जनानां ॥ ८७६ ॥

ॐ ह्रीं देवकृतपुष्पवृष्टिप्रातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घं । (यहां पुष्पोंकी वर्षा की जावे)—

त्रैलोक्यवस्तुमनतस्मरणाववोधो येन स्वयं श्रवणगोचरतां गतेन ।
संजायते मुखरदौष्ठविघातशून्यो भूयाद् ध्वनिर्भवगदप्रसरार्तिहर्त्ता ॥ ८७७ ॥

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिप्रातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घं ।

यक्षेशपाणिलतिकांकुरसंगतानि तुर्याधिषष्टिगणनान्यपि देवनद्याः ।
वीचिप्रमाणि भवतो द्विकपार्श्वयोस्ते सच्चामराण्यघचयं मम निर्दलंतु ॥ ८७८ ॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिचामरप्रातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घं ।

सिंहासने छविरियं जिनदेवतायाः केषां मनोवधृतपापहरी न वा स्यात् ।
स्याद्वादसंस्कृतपदार्थगुणप्रकाशोऽस्या मेस्तु निर्हतमदाखिलजातशक्तेः ॥ ८७९ ॥

ॐ ह्रीं सिंहासनप्रातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घं ।

भामण्डलेऽवयवपृष्टिविभागरश्मिक्लृप्ते जनस्य भवसप्तकदर्शनेन ।
श्रद्धानमाप्तगुरुधर्मपरम्पराणां गाढं भवेत्तदितदेवपतिर्नमस्यः ॥ ८८० ॥

ॐ ह्रीं भामण्डलप्रातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घं ।

देवस्य मोहविजयं परिशंसितुं द्राक् देवाः स्वहस्ततलतः परिवादयंति ।
वाद्यानि मंगलनिवासकराणि सद्यो मिथ्यात्वमोहजयिनः शुभगानि च स्युः ॥ ८८१ ॥
ॐ ह्री दुंदुभिप्रातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
छत्रत्रयं जिनपमूर्धनि भासमानं त्रैलोक्यराजपतितामभिदर्शयद् वा ।
सोमार्कवह्निप्रतिमं सितपीतरक्तरत्नादिरंजितमिदं मम मंगलाय ॥ ८८२ ॥
ॐ ह्रीं छत्रत्रयप्रातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
तालातपत्रचमरध्वजसुप्रतीकभृंगारदर्पणघटाः प्रतिवीथिचारं ।
सन्मंगलानि पुरतो विलसंति यस्य पादारविंदयुगलं शिरसा वहामि ॥ ८८३ ॥
ॐ ह्री अष्टमंगलद्रव्यसंपन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
बुद्धीशामरनायिकार्यमहती ज्योतिष्कसद्व्यंतरनागस्त्रीभवनेशकिंपुरुपसज्ज्योतिष्ककल्पामराः ।
मर्त्या वा पशवश्च यस्य हि सभा आदित्यसंख्या तृपपीयूपं स्वमतानुरूपमखिलं स्वादंति तस्मै नमः ॥ ८८४ ॥
ॐ ह्रीं द्वादशसभासपत्तिसम्पन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
(यहा १२ सभामें कौन २ वैठते हैं सो समझादे—१ मुनि, २ आर्यिका व श्राविका, ३ कल्पवासी देवी, ४ ज्योतिषी देवी, ५ व्यंतरदेवी, ६ भवनवासी देवी, ७ भवनवासी देव, ८ व्यंतरदेव, ९ ज्योतिषी देव, १० कल्पवासी देव, ११ मनुष्य, १२ पशु)
आगे २४ कोठोके मंडलकी पूजा की जाय ।
गीताछंद—चौवीस जिनवर तीर्थकारी, ज्ञान कल्याणक धरं । महिमा अपार प्रकाश जगमें, मोह मिथ्या तम हरं ॥
कीने वहुत भविजीव सुखिया, दुःखसागर उद्धरं । तिनकी चरण पूजा करें, तिन सम वने यह रुचि धरं ॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पांजलिं क्षिपेत् । (पुष्प डाले)
छंद चामरा—नीर ल्याय शीतलं महान मिष्टता धरे, गन्ध शुद्ध मेलिके पवित्र झारिका भरे ।
नाथ चौविसों महान वर्तमान कालके, वोध उत्सवं करूं प्रमाद सर्व टालके ॥

ॐ ह्रीं रिषभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्वेत चंदनं सुगंधयुक्त सार लायके, पात्रमें धराय शांतिकारणे चढ़ायके ॥ नाथ० ॥ चंदनं ॥
तंदुलं भले सुश्वेत वर्ण दीर्घ लाइये, पाय गुण सु अक्षतं अतृप्तिता नशाइये ॥ नाथ० ॥ अक्षतं ॥
वर्ण वर्ण पुष्प सार लाइये चुनायके, काम कष्ट नाश हेतु पूजिये स्वभायके ॥ नाथ० ॥ पुष्पं ॥
क्षीर मोदकादि शुद्ध तुर्त ही बनाइये, भूखरोग नाश हेतु चर्णमें चढ़ाइये ॥ नाथ० ॥ नैवेद्यं ॥
दीप धार रत्नमय प्रकाशता महान है, मोह अंधकार हार होत स्वच्छ ज्ञान है ॥ नाथ० ॥ दीपं ॥
धूप गंध सार लाय धूपदान खेइये, कर्म आठको जलाय आप आप वेइये ॥ नाथ० धूपं ॥
लौंग औ बदाम आम्र आदि पक्क फल लिये, सु मुक्तिधाम पायके स्वआतम अमृत पिये ॥नाथ०॥ फलं ॥
तोय गंध अक्षतं सु पुष्प चारु चरु धरे, दीप धूप फल मिलाय अर्घ देय सुख करे ॥ नाथ० ॥ अर्घं ॥

छंद चाली—एकादशि फागुन वदिकी, मरुदेवी माता जिनकी । हत घाती केवल पायो, पूजत हम चित उमगायो ॥
ॐ ह्री फाल्गुनकृष्णा एकादश्या श्री वृषभनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)
एकादशि पूष सुदीको, अजितेश हतो घातीको । निर्मल निज ज्ञान उपाये, हम पूजत सम सुख पाए ॥
ॐ ह्रीं पौषशुक्ला एकादश्यां श्री अजितनाथजिनेद्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)
कातिक वदि चौथ सुहाई, सभव केवल निधि पाई । भविजीवन बोध दियो है, मिथ्यामत नाश कियो है ॥
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाचतुर्थ्यां श्री सभवनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)
चौदशि शुभ पौष सुदीको, अभिनंदन हन घातीको । केवल पा धर्म प्रचारा, पूजूं चरणा हितकारा ॥
ॐ ह्री पौषशुक्लाचतुर्दश्यां श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।(४)
एकादशि चैत सुदीको, जिन सुमति ज्ञान लब्धीको । पाकर भविजीव उधारे, हम पूजत भव हरतारे ॥
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लाएकादश्यां श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (५)
मधु शुक्ला पूरणमासी, पद्मप्रभु तत्त्व अभ्यासी । केवल ले तत्त्व प्रकाशा, हम पूजत सम सुख भाशा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लापूर्णमास्यां श्री पद्मप्रभुजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

छठि फागुनकी अंधयारी, चउ घातीकर्म निवारी । निर्मल निज ज्ञान उपाया, धन धन सुपार्श्व जिनराया ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णाषष्ठ्या श्री सुपार्श्वजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

फागुन वदि नौमि सुहाई, चंद्रप्रभ आतम ध्याई । हन घाती केवल पाया, हम पूजन सुख उपजाया ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्ण नवम्यां श्री चंद्रप्रभुजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)

कातिक सुदि दुतिया जानो, श्री पुष्पदंत भगवानो । रज हर केवल दरशानो, हम पूजत पाप विलानो ॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लाद्वितीयायां श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

चौदसि वदि पौष सुहानी, शीतलप्रभु केवल ज्ञानी । भवका संताप हटाया, समता सागर प्रगटाया ।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णा चतुर्दश्या श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)

वदि माघ अमावसि जानो, श्रेयांस ज्ञान उपजानो । सब जगमें श्रेय कराया, हम पूजत मंगल पाया ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णा अमावस्या श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)

शुभ दुतिया माघ सुदीको, पायो केवल लब्धीको । श्री वासुपूज्य भवितारी, हम पूजत अष्ट प्रकारी ॥

ॐ ह्रीं श्री माघशुक्लाद्वितीयायां श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)

छठि माघ वदी हत घाती, केवल लब्धी सुख लाती । पाई श्री विमल जिनेशा, हम पूजत कटत कलेशा ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाषष्ठ्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)

वदि चैत अमावसि गाई, जिन केवल ज्ञान उपाई । पूजूं अनंत जिन चरणा, जो हैं अशरणके शरणा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअमावस्या श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

मासांत पौष दिन भारी, श्री धर्मनाथ हितकारी । पायो केवल सद्बोधं, हम पूजें छांड़ कुबोधं ॥

ॐ ह्रीं पौषपूर्ण्यां श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)

सुदि पूस इकादसि जानी, श्री शांतिनाथ सुखदानी । लहि केवल धर्म प्रचारा, पूजूं मैं अघ हरतारा ॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लाएकादश्यां श्री शांतिनाथजिनेंद्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१६)

वदि चैत्र तृतीया स्वामी, श्री कुंथुनाथ गुण धामी। निर्मल केवल उपजायो, हम पूजत ज्ञान वढ़ायो ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णातृतीयां श्री कुन्थुनाथजिनेंद्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७)

कार्तिक सुदि वारस जानो, लहि केवल ज्ञान प्रमाणो। परतत्त्व निजत्त्व प्रकाशा, अरनाथ जजों हत आशा ॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लाद्वादश्यां श्री अरनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१८)

वदि पूष द्वितीया जाना, श्री मल्लिनाथ भगवाना। हत घाती केवल पाए, हम पूजत ध्यान लगाए ॥

ॐ ह्रीं पूषकृष्णाद्वितीयां श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१९)

वैसाख वदी नौमीको, मुनिसुव्रत जिन केवलको। लहि वीर्य अनंत सम्हारा, पूजूं मैं सुख करतारा ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णानवम्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०)

अगहन सुदि ग्यारस आए, नमिनाथ ध्यान लौ लाए। पाया केवल सुखदाई, हम पूजत चित हरषाई ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्ला एकादश्यां श्री नमिनाथजिनेंद्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१)

पडिवा शुभ क्वार सुदीको, श्री नेमनाथ जिनजीको। इच्छो केवल सत ज्ञानं, हम पूजत ही दुख हानं ॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदायां श्री नेमनाथजिनेंद्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२)

तिथि चैत्र चतुर्थी श्यामा, श्री पार्श्वप्रभू गुण धामा। केवल लहि तत्त्व प्रकाशा, हम पूजत कर शिव आशा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाचतुर्थ्यां श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२३)

दशमी वैशाख सुदीको, श्री वर्द्धमान जिनजीको। उपजो केवल सुखदाई, हम पूजत विघ्न नशाई ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लादशम्यां श्री वर्द्धमानजिनेंद्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४)

स्रग्विणी छन्द—स्तुति—जय ऋषभनाथजी ज्ञानके सागरा, घातिया घातकर आप केवल वरा। कर्मबन्धनमई सांकला तोड़कर, आपका स्वाद ले स्वाद पर छोड़कर ॥१॥ धन्य तू धन्य तू धन्य तू नाथजी, सर्व साधू नमें तोहिको माथजी। दर्श तेरा करैं ताप मिट जात है, मर्म भाजें सभी पाप हट जात है ॥ २ ॥ धन्य पुरुषार्थ तेरा महा अद्भुतं, मोहसा शत्रु मारा

त्रिघाती हतं। जीत त्रैलोकको सर्वदर्शी भए, कर्म सेना हती दुर्ग चेतन लए ॥ ३ ॥ आप सब तीर्थ त्रय रत्नसे निर्मिता, भव्य लेवें शरण होंय भवन भव रिता। वे कुशलसे तिरें संसृती सागरा, जाय ऊरध लहें सिद्ध सुन्दर धरा ॥ ४ ॥ यह समवशर्ण भवि जीव सुख पात हैं, वाणि तेरी सुनें मन यही भात हैं। नाथ दीजे हमें धर्म अमृत महा, इस विना सुख नहीं दुःख भवमें सहा ॥ ५ ॥ ना क्षुधा ना तृपा राग ना द्वेप है, खेद चिंता नहीं आर्ति ना क्लेश हैं। लोभ मद क्रोध माया नहीं लेश है, वंदता हूं तुम्हें तू हि परमेश है ॥ ६ ॥

इन्द्र ऊपरकी स्तुतिको समाप्त ही न कर पाए कि इतनेमें ही सभामें महाराज भरत व अन्य उनके कुछ भाई ऐसे ५–७ राजा अपनी२ स्त्री सहित अर्घ लिये आते है और विनय करके उदक चंदनादि पढ़कर अर्घ चढ़ाते हैं। उस समय स्त्रियां एक तरफ व भरतादि पुरुप एक तरफ खडे हो स्तुति पढते हैं—

पद्धरी छन्द—जय परम ज्योति ब्रह्मा मुनीश, जय आदिदेव वृषनाथ ईश। परमेष्ठी परमातम जिनेश, अजरामर अक्षय गुण निवेश ॥१॥ शङ्कर शिवकर हर सर्व मोह, योगी योगीश्वर काम द्रोह। हो सूक्ष्म निरंजन सिद्ध बुद्ध, कर्मांजन मेटन तोय शुद्ध ॥२॥ भवि कमल प्रकाशन रवि महान, उत्तम वागीश्वर राग हान। हो वीत द्वेष हो ब्रह्म रूप, सम्यग्दृष्टी गुण राज भूप ॥३॥ निर्मल मुख इंद्रिय रहित धार, सर्वज्ञ सर्वदर्शी अपार। तुम वीर्य अनन्त धरो जिनेश, तुम गुण कथ पावत नहिं गणेश ॥४॥ तुम नाम लिये अघ दूर जाय, तुम दर्शनते भव भय नशाय। स्वामिन् अब तत्त्वनका प्रभेद, कहिये जासे हटे कर्म छेद ॥ ५ ॥

यह स्तुति पढ नमस्कार कर सब यथायोग्य बैठ जाते हैं। जब भरतजी आदि आए थे तब इन्द्र व आचार्य व इन्द्राणी सब यथायोग्य बैठ गए थे।

(९) भगवानका धर्मोपदेश—अब आचार्य मात्र उठते हैं। वे पूजा करते हैं। सूचक पात्र या अन्य विद्वान् सभाको भगवानका उपदेश संक्षेपमे समझाता जाता है—

ज्ञानाभिन्नः सततचिदपावृत्त एपोऽस्ति जीवोऽनाद्यंतः स्याच्छिवजगदितश्चक्रमायोगयोगात्।
पर्यायार्थैर्नरसुरपशुश्वभ्रिभेदादिरर्थयाथातथ्यैर्निजसुखचिदानंद एव ह्यसैत्सीव ॥ ८८५ ॥

ॐ ह्रीं जीवतत्त्वस्वरूपनिरुपकाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

तब सूचकपात्र यह दोहा पढकर अर्थ कर दे। पहले यह कहे कि भगवानकी दिव्यध्वनि प्रारंभ हुई है। भगवान् तत्त्वोंको दर्शाते हैं।

दोहा-जीव अनादि अनंत है, चेतनमय अविकार । कर्मबंध ते जग भ्रमें, कर्म छुटे भव पार ॥

इसीतरह हरएक तत्त्वको दोहा कहकर सूचक समझाता है ।

रूपी स्पर्शादिभिरपि गुणैः स्वैः प्रधानैर्निरुक्तः स्कंधाणुभ्यामनणुविटत्तिव्यापृतः पुद्गलः स्यात् ।
कर्माकर्मप्रकृतिनिगडैर्विश्वमापीड्य हेतुर्बंधस्येति प्रभवति जिनं जल्पयंतं नमामि ॥ ८८६ ॥

ॐ ह्रीं पुद्गलतत्त्वस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-रूपी पुद्गल द्रव्य है, अणु अर खंध स्वरूप । कर्म और नोकर्मसे, बंधे जीव बहु रूप ॥

लोकस्थानां भवति गमने जीवसत्पुद्गलानां हेतुर्धर्मः सहचरविधौदास्यमात्रप्रमेयः ।
लोकालोकस्थितिविभजनेऽग्रीण एवं सु धर्मं, स्वास्मानं संगदति जिनपः सोऽस्तु मे क्लेशहर्त्ता ॥ ८८७ ॥

ॐ ह्रीं धर्मतत्त्वनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-जिय पुद्गलके गमनमें, उदासीन सहकार । लोकालोक विभागकर, धर्म द्रव्य अविकार ॥

वैलक्षण्य तत उपगतो जीवसत्पुद्गलानां स्थाता धर्मः सहचरतयौदास्यमात्रेऽपि तेषाम् ।
एवं तस्य स्वभवनमसंदिह्यमानो जिनेंद्रो मादृक्षाणां भवविविहतिं संकरोत्वात्मनीनां ॥ ८८८ ॥

ॐ ह्रीं अधर्मद्रव्यस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-जिय पुद्गलके थंभनमें, उदासीन सहकार । लोकव्यापि अमूर्त है, द्रव्य अधर्म निहार ॥

जीवाजीवाद्युपधृतितयाऽऽधारभूतो ह्यनंतो मध्ये तस्य त्रिभुवनमिदं लोकनाम्ना प्रसिद्धं ।
सर्वेषां स्यादवकशनदः शून्यमूर्तिर्महांश्चाकाशोऽयं तन्निजगुणगणं वक्ति तं पूजयामि ॥ ८८९ ॥

ॐ ह्रीं आकाशद्रव्यस्वरूपप्ररूपक जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-सर्व द्रव्य अवकाश दे, है अनन्त आकाश । मध्य लोक षट् द्रव्य मय, बाहर फक्ताकाश ॥

वस्तूद्भूतागुणपरिणमस्यानुभूतेश्च हेतुः, सत्तार्थानां यदुपगमनादेव जातिं विधत्ते ।
सोऽयं कालो व्यवहरणकार्यानुमेयः क्रियायाः, कर्तृत्वादिप्रकथयदिनो मुक्तिलक्ष्मीं ददातु ॥ ८९० ॥

ॐ ह्रीं कालद्रव्यस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—वस्तु परिणमन हेतु है, निश्चय काल प्रमाण । समय घटी दिन रात इति, व्यहृत काल वखाण ॥

कायस्वांतवचःक्रियापरिणतिर्योगः शुभो वाऽशुभ—स्तत्कर्मागमनायनं निजयुगो रागद्विपोरुद्भवात् ।
ईर्यामार्गभवौपधद्विविधया तत्संविधिं वेदयन्, जीयाच्छ्रीपतिपूज्यपादकमलस्तीर्थंकरः पुण्यगीः ॥ ८९१ ॥

ॐ ह्रीं आश्रवतत्वस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं ।

दोहा—काय वचन मन परिणमन, योग शुभाशुभ रूप । कर्माश्रव कारण यही, मोह सहित भव रूप ॥

कषायाद्दतचेतसान्यविषयं स्वत्वं कृतं तद्विधे—र्योग्याः कर्मविभावशक्तिसहिता ये पुद्गलाश्चात्मना ।
संश्लिष्टा अवगाहनैक्यमटितास्तत्प्रक्रमो बंधभाक्, तं छित्वा निजशुद्धभावविरतिप्राप्तः स मे स्यात् गुरुः ॥ ८९२ ॥

ॐ ह्रीं बंधतत्वस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—कर्म वर्गणा जीवके, भावकषाय प्रमाण । एक क्षेत्र अवगाह हो, बंधतत्त्व यह जान ॥

तद्रोधः खलु संवरो निगदितो द्रव्यार्थभेदाद् द्विधा, तद्धेतुर्व्रतगुप्तिधर्मसमितिप्रेक्ष्यां चरित्रात्मता ।
मूलं निर्जरणस्य कर्मविततेर्नूतनागमस्य स्वयं, तद्रूपं कथितं गणेश्वरपुरोभागे स आप्तो मम ॥ ८९३ ॥

ॐ ह्रीं संवरतत्वस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—गुप्ति समति व्रत धर्मसे, कर्माश्रव रुक जाय, वीतरागमय भाव जहं, संवरतत्त्व सुहाय ॥

स्वोद्भूतानुभवात्तथा कृततपोवीर्येण तच्छातनाद् द्वेधा निर्जरणं विसंयमियमिस्वाम्याश्रयेणास्ति यत् ।
तद्रूपं समवश्रियां गदितवान् भव्यात्मनां श्रेयसः, संप्राप्त्यै स जिनोऽस्तु मे दुरितसंव्रातस्य सच्छित्तये ॥८९४॥

ॐ ह्रीं निर्जरातत्त्वस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—कर्म अवधिसे निर्जरैं, तप प्रभाव क्षय होय । दुंविध निर्जरा असधिक, संयमीनिके होय ॥

मोहस्यासंतनाशात् ज्ञपितिदृशिचिदाच्छादकाशेषलोपात्, प्रत्यूहस्यापि मूलंकषविनशनादात्मशक्तेः प्रकाशात् ।
निःसापत्नं ज्वलंतीं परमशिवसुखास्वादसंवेद्यमाना, मुक्तिश्रीर्दिव्यतत्त्वं त्विति सकलजनादेयमुक्तं जिनेंद्रैः ॥८९५॥

ॐ ह्रीं मोक्षतत्वस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—मोहादिक सब कर्मसे, रहित मोक्ष सुखरूप । आतमशक्ति पूरण प्रगट, अविनाशी इक रूप ॥
देवोऽर्हन् सकलामयव्यपगतो दृष्टेष्टवाग्देशको, भव्यद्वैर्गतरागदोषकलनो मोक्षार्थिभिः श्रेयसे ।
आश्रेयः परिसेवनीय उदितज्ञानप्रभौघः स्वयं, शास्ता सर्वहितः प्रमाणपटुभिर्ध्येयो जिनः पातु नः ॥ ८९६ ॥

ॐ ह्रीं आप्तस्वरूपप्ररूपकजिनाय अर्घं निर्वपामिति स्वाहा ।

दोहा—वीतराग सर्वज्ञ जिन, हित उपदेशी जान । निर्मल तत्त्व प्रकाश कर, भजो आप्त पहचान ॥
रागद्वेपकलंकपंककणिकाहीनो विसंवादको, निर्वांछो हितदेशनो व्रतगुणग्रामाग्रगण्यः प्रभुः ।
अस्माकं भवपद्धतावनुसरद्बाधार्दितानां महा-नाराध्यः प्रियकारको गुरुरयं प्रोक्तो जिनेन त्वया ॥ ८९७ ॥

ॐ ह्रीं गुरुस्वरूपनिरूपकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—वैरागी निस्पृह व्रती, सर्वपरिग्रह हीन । आतमध्यानी गुरु कहे, हितकर तत्त्व प्रवीण ॥
यत्रामूलननूनमन्यजडतापीडोत्कथाप्रच्युतिर्यत्र श्रेयसि दीपिकेव सरणिः प्राकाश्यमास्कंदते ।
विश्वप्रोतमहार्तिमोहमदिरानिर्भत्सनं सद्गुणाश्लेषावाप्तिरयं जिनवरैर्गीतो (!) वृषोऽस्तुश्रिये ॥ ८९८ ॥

ॐ ह्रीं धर्मस्वरूपप्ररूपकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—रत्नत्रय मय मोहहर, पीड़ा सत्व निवार । शिवकारण भव उद्धरण, धर्म सत्व अविकार ॥
शब्दावाच्यमवस्त्वनादिकृतसंकेतेन वस्तुग्रहः, केनापि ध्वनिना भवत्यथ स वै संजायते मातृकृत् ।
सोऽपेक्षासहितो ह्यनेकगुणतस्ता एव तस्मात् स्थितं वस्तु स्यात्पदसंस्कृतं तदुदयन् स्याद्वाद एवार्हतः ॥ ८९९ ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते स्याद्वादस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—वस्तु वाच्य अवाच्य है, नित्यानित्य स्वरूप । नय प्रमाण ते साधता, स्याद्वाद सुखरूप ॥

तीर्थेशां भरतेशिनां हलजुषां नारायणानां ततः शत्रूणां त्रिपुरद्विषां च महतां सद्भाग्यसंशालिनां ।
पुण्यापुण्यचरित्रमत्र निहितं पूर्वानुयोगं विदन् दृष्टतंप्रतिपत्तिदं जिनपतिः प्रारब्धवान् शासनं ॥ १०० ॥

ॐ ह्रीं प्रथमानुयोगवेदस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-तीर्थंकर चक्रीश हर, प्रतिहर हलधर व्रत्त । पुण्य पाप दृष्टांत कह, प्रथमनुयोग पवित्त ॥

संस्थानायामसंख्यागणितमसुभृतां मार्गणास्थानतज्जकर्मोदीर्णोदयादिप्रकथनमधिपो वर्णयामास सम्यक् ।
लोकालोकोक्तभेदे नरकसुरमनुष्यादिसंस्थित्युदंतव्याप्ति त्वारख्यानमेतत्करणगमनुयोगं प्रकाश्य स्वयंभूः (?) ॥१०१॥

ॐ ह्रीं करणानुयोगवेदस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-लोकत्रय रचना सकल, जीव मार्गणा थान । करणानुयोग वखानता, कर्मबंध आख्यान ॥

शीलानां संयमानां व्रतसमितिचरित्रादिसाध्वर्हितानां, सागारार्थोक्तकर्मावधृतविरमणस्थूलधर्मक्रियाणां ।
तत्तत्स्थानोक्तवृद्ध्यं निजनिजहृदयोद्भूततत्त्वं निरूप्य, कर्तव्यत्वोपदेशो यदवधिचरणाख्यानमुक्तं जिनेन ॥१०२॥

ॐ ह्रीं चरणानुयोगवेदस्वरूपप्रकाशकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-मुनि संयम व्रत आचरण, गृही धर्म आचार । कर्महरणाविधि सब कहे, चरणनुयोग विचार ॥

षड्द्रव्यस्वत्वरूपाण्यथ नयघटता तत्प्रमाणस्वरूपं, नामस्थापादिकुसं तदधिकरणभिसूतत्वं संस्थापनादि ।
मेयामेयव्यवस्था यदवधिसामिता यत्र षड्भङ्गवाणी, द्रव्याख्यानं निरूप्य प्रथममभिहितं मोक्षमार्गं जिनेन ॥१०३॥

ॐ ह्रीं द्रव्यानुयोगवेदस्वरूपप्रकाशकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-नय प्रमाण निक्षेपसे, द्रव्य छहोंको साध । तत्त्व सप्त शुद्धातम कथ, द्रव्यानुयोग अबाध ॥

श्रीमंस्त्वद्भक्तिभारप्रविनतशिरसः केचिदिच्छंति मुक्तिं, ते सद्यः साधुदीक्षाप्रणयनपटवस्त्वत्प्रसादावलंबात् ।
केचिद्युच्छंति धर्मं गृहपतिनिरुतं रुद्रमार्गाविरुद्धं स्वामिन् हस्तावलंबं कुरु शरणगतान् रक्ष रक्षेशनाथ ॥ १०४ ॥

ॐ ह्रीं मुनिश्रावकधर्मोपदेशकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-तव प्रसाद भवि लहत हैं, मुनि दीक्षा अविकार । प्रतिमा ग्यारा भवि धरै, तुम्हीं उतारन पार ॥

इसप्रकार धर्मोपदेश होजाय तब सब कहें–श्री सत्य आप्त वृषभ जिनेन्द्रकी जय२ फिर मात्र इन्द्र उठता है और सब बैठ रहते हैं।

स्तुति ।

चौपाई–धन्य धन्य जिनराज प्रमाणा, धर्म वृष्टिकारी भगवाना। सत्य मार्ग दरशावन हारे, सरल शुद्ध मग चालन हारे ॥१॥
आपीसे आपी अरहंता, पूज्य भार त्रैलोक महंता। स्वपर भेद विज्ञान बताया, आतम तत्व पृथक् दरशाया ॥ २ ॥
स्वानुभूतिमय ध्यान जताया, कर्मकाष्ठ बालन समझाया। धर्म अहिंसामय दिखलाया, प्रेम करन हितकरन बताया॥३॥
वस्तु अनेक धर्मधरतारा, स्याद्वाद परकाशन हारा। मत विवादको मेटनहारा, सत्य वस्तु झलकावन हारा ॥ ४ ॥
धन तीर्थंकर तेरी वाणी, तीर्थ धर्म सुखकारण मानी। करहु विहार नाथ बहु देशा, करहु प्रचार तत्व उपदेशा ॥५॥

(१०) भगवानका विहार–इतना कहते ही इन्द्र देवोंको भेजता है कि विहारका प्रबन्ध करो। बाहर सब तय्यारी रहती है, रथ तय्यार रहता है। तब इन्द्र भगवानको मस्तकपर विराजमान करता है। उस समय सर्व खड़े होजाते हैं। आचार्य नीचेके श्लोक पढ़कर भगवानके आगे अर्घ चढ़ाता है।

काश्यां काश्मीरदेशे कुरुषु च मगधे कौशले कामरूपे, कच्छे काले कलिंगे जनपदमहिते जांगलांते कुरादौ।
किष्किंधे मल्लदेशे सुकृतिजनमनस्तोषदे धर्मवृष्टि कुर्वन् शास्ता जिनेंद्रो विहरति नियतं तं यजेऽहं त्रिकालं ॥९०७॥
पांचाले केरले वाऽमृतपदमिहिरोमंद्रचेदीदशार्ण–वंगांगांध्रोलिकोशीनरमलयविदर्भेषु गौडे सुसह्ये।
शीतांशुरश्मिजालादमृतमिव समां धर्मपीयूषधारां सिंचन् योगाभिरामा परिणमयति च स्वांतशुद्धिं जनानां॥९०८॥
पुंनाटचौलविषयेऽपि च मौंड्रदेशे सौराष्ट्रमध्यमकलिंदकिरातकादौ।
सुयोग्ये सुदेशमहिते सुविहृत्य धर्मचक्रेण मोहविजयं कृतवान् जनानां ॥ ९०९ ॥

दोहा–काशी कुरु काश्मीरमें, मगध सुकोशल काम। कच्छ कलिंग रकालमें, कुरुजांगल शुभ धाम ॥
किष्किधा पांचालमें, मलय सुकेरल मंद्र। चेदि दशार्ण सुवंगमें, अंग उलिक शुचि अंध्र ॥
गौड़ विदर्भ उसीनरे, सह्य चौल पुंनाट। मौंड्र सुराष्ट्र किरातमें, मध्य कलिंद विराट् ॥
इत्यादिक बहु देशमें, धर्मदेशनाकार। वंदहु पूजहु प्रेमसे, करहु कर्म निरवार ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते विहारावस्थाप्राप्ताय देशे धर्मोपदेशेनोद्धर्ते जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

फिर बाजे बजने लगे, जयजयकार शब्द हो । भगवानपर पुष्पोंकी वर्षा हो । इन्द्र श्री जिनेन्द्रको लेजाकर रथपर विराजमान करे, सौधर्म इन्द्र खनासीपर बैठे, ईशान इन्द्र रथ चलावे, सानत्कुमार महेन्द्र दोनों तरफ चमर ढारें । रथपर चार भाइयोंके सिवाय और कोई न हो । रास्तेमें जय जय होते हुए नगे पैर भक्तिमें भीजे सब चलें, कमसे कम चार जगह आने जानेके मार्गमें सामियाना हो वहां शातिसे सब श्रोता बैठ जावें, भगवान्का रथ आगे खडा हो । पहले एक भजन बाजेके साथमें ५ मिनटमें होजावे फिर उपदेश हो । चार स्थानमें भिन्न २ विषयपर अच्छे विद्वान् भिन्न २ उपदेश करें । २० मिनिटमें भाषण सारगर्भित कहा जाय—यह जताया जाय कि श्री जिनेन्द्र विहार करते हुए उपदेश कर रहे हैं । नीचे लिखे विषयमेंसे लिये जावें—

(१) निश्चय व्यवहार धर्म, (२) सप्त तत्त्व, (३) चार वेद प्रथमानुयोगादि, (४) मुनिधर्म, (५) श्रावकधर्म, (६) कर्मबंध, (७) आत्मस्वरूप, (८) स्याद्वादका महत्व, (९) आत्मानदका उपाय, (१०) मोक्षस्वरूप, (११) एकांत खंडन, अनेकांत मंडन, (१२) अहिंसाधर्म, (१३) दशलक्षणधर्म, (१४) आत्मध्यान, (१५) बारहभावना, (१६) जगत अनादि, जैनधर्म अनादि ।

शक्त्यनुसार रास्तेमें ठहरा जावे । संध्याके पहले२ लौट आया जावे । जब उधर श्रीजीका विहार हो इधर आचार्य अन्य प्रतिमाओंपर तिलकदान, श्रीमुखोद्घाटन, नयनोन्मीलन, सूरिमंत्र प्रदान इन क्रियाओंको संक्षेपसे करके पुष्पोंको क्षेपण कर ज्ञानकल्याणकका आरोपण करे ।

(११) **धर्मोपदेशकी सभा**—रात्रिको टिकटोंद्वारा सभा लगे । भगवानकी गंधकुटीको शोभनीक बनाया जावे, आगे रोशनी इतनी हो कि भगवान्का दर्शन सबको दूरसे होसके । ठीक समय परदा खुले । पहले इन्द्रादि देव भगवान्की आरती १५ मिनट तक करें। बडे मनोहर शब्दोंमें पढें । फिर सब यथास्थान बैठ जावें । जो विद्वान् व्याख्याता नियत किये गए हों वे उपदेश देवें । उपदेश बहुत समतारूप शांतिका प्रचार मात्र जिनधर्म संबन्धी विषयोंपर हो । एक उपदेशके पीछे एक भजन हो । उपदेश दो घंटे होजावे फिर आध घंटा इसलिये दिया जावे कि जिस किसीको जो नियम लेना हो वह अपने स्थानपर खड़े होकर हाथ जोड़कर कहे कि मैं श्री जिनेन्द्रके समवशरणमें यह नियम लेता हूं । फिर आध घंटा समय वास्ते दर्शन करने व भंडारमें देनेके लिये नियत किया जावे । भंडारमें डालनेको थाल एक ओर चबूतरेपर रक्खा हो । पहले क्रमसे ५ नर ५ नारी आते जावें । भंडारमें कुछ डाल नमस्कार करके

चलते जावें। १० टिकटोंसे काम लिया जावे। भंडारमें जो रुपया आवे प्रतिष्ठाके कार्यमें लगे।

नोट–यदि ज्ञानकल्याणकी विधि करते हुए समय विहारका न रहे तथा मार्ग दूरका हो तो विहार दूसरे दिन किया जावे। तब रात्रिको धर्मोपदेश सभा हो। दूसरे दिन सवेरे पहले दिनके समान नित्यके समान पूजा होम हो। पीछे एक घंटा सवेरे धर्मोपदेश भगवान्का हो। फिर सबजने खा पीलें तब १ बजेसे विहार प्रारम्भ किया जावे तब इस रात्रिको भी धर्मोपदेश हो, नियमादि हों। रात्रिको धर्मोपदेशके पीछे नृत्य भजनादि भी कायदेके साथ किये जासक्ते हैं। ऐसी दशामें मोक्षकल्याणक तीसरे दिन होगा। यदि विहार ज्ञान कल्याणकके दिन होजावे तो उसके दूसरे दिन बड़े सवेरे मोक्षकल्याणक किया जावे।

अध्याय आठवां।

मोक्षकल्याणक।

दूसरे दिन सवेरे ही पहले दिनके समान आचार्य न्हवनपूजा व होम कर चुके तब मोक्षकल्याणक किया जावे। मंडप उसी-तरह नरनारियोंसे पूर्ण भरा हो। पहले ही दूसरे चबूतरेपर परदा आगे डालकर उसपर ऐसी रचना बनावें–एक ऊंची वेदी ऐसी हो जिसपर अर्धचंद्राकार शीशेका या स्फटिकका सिंहासन हो या अन्य धातुका हो। यह अभी खाली रक्खा जावे। उसके कुछ नीचे कैलाशपर्वतके समान कोई पहाड़ या ऊंचा स्थान बनाके ऊपर शिला स्थापन करे। तिसपर साथिया बनाकर जिन प्रतिमाको विराजमान करे, यहां अष्ट प्रातिहार्यादिक कुछ न हों। भगवान् योग निरोध करके ध्यानमें मग्न हैं ऐसा दिखे तब परदा उठे। तब सूचक यह प्रगट करे कि भगवान् ऋषभदेव विहार बंद करके अब कैलाशगिरिपर स्थित हैं। यहांपर आचार्य पहले सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति, चारित्रभक्ति तथा निर्वाणभक्ति तथा शांतिभक्ति पढ़े। व आगे पुष्प क्षेपे। फिर नीचेका छंद पढ़के अर्घ चढ़ावे–

त्रिभंगीछंद–जय जय वृषभेशा आदि जिनेशा हो परमेशा नमहुं तुम्हें, प्रभु देश विहारे धर्म प्रचारे भवि उद्धारे नमहुं तुम्हें।
कैलाश पधारे आतम विचारे योग मगन जिनराज भए, सूक्ष्मक्रिय शुक्लं धार स्वयं निज मोक्ष तभी निकटात भए॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभदेव जिनेन्द्राय तृतीयशुक्लध्यानारूढ़ाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यहां सूचक कहे कि भगवान् तीसरे शुक्लध्यानमें हैं, योगोंका अति सूक्ष्म चलन होरहा है। फिर—

जय जय तीर्थंकर, धर्म प्रभाकर, शिवसुख रंजन नाथ भए, व्युपरतक्रिय ध्यानं शुक्ल महानं धारत आतम विशाल भए।
औदारिक तैजस कार्मण वपुते नाथ रहित अब होवेंगे, हम पूजें ध्यावें मंगल गावें शिवपथगामी होवेंगे ॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथजिनेन्द्राय चतुर्थशुक्लध्यानारूढ़ाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यहां सूचक कहे कि भगवान्‌की आयुमें अ इ उ ऋ ऌ इन पांच अक्षरोंको उच्चारने मात्र काल शेष है। प्रभु चौदहवें गुणस्थानमें चढ़कर चौथे शुक्लध्यानको ध्या रहे हैं। फिर झटसे परदा सबतरफ गिरजावे तब आचार्य प्रतिमाजीको वहांसे उठाकर अर्द्धचन्द्राकार सिंहासनपर साथिया करके विराजमान करदे। परदा उठे। उस समय सब कहें—निर्वाणकल्याणककी जय, सिद्धपरमेष्ठीकी जय।

तत्काल ही इन्द्रादि देव आवें, साथमें अग्निकुमारका इन्द्र भी आवे। जय वृषभदेवकी जय, जय मोक्षकल्याणककी जय इत्यादि जय जय शब्द करके आवें और आकर नमस्कार करें। फिर सब बैठ जावें। इन्द्र और आचार्य सामने साथिया करके उसपर चदन अगर कपूर व सूखा फूस चुने तथा एक रकाबीमें रक्खी हुई लौंगोको नख केशके भावसे बीचमें डालदे। तब अग्निकुमार जाति भवनवासी देवोंका इन्द्र नमस्कार करे और लेटी हुई दशामें जला हुआ कपूर अपने मस्तकके मुकुटके पाससे उस चितापर डालके अग्नि लगावे उस समय आचार्य यह श्लोक व मंत्र पढ़े—

उसहाथि जिणे पणमामि सया। अमलो विरजो वरकप्पतरू। सअ कामदुहा मम रक्ख सया पुरुविज्जुणुही पुरुविज्जुणुही ॥

ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं स्वाहा। फिर सब कहें—निर्वाणकल्याणककी जय, पवित्र अग्निकी जय। फिर नीचे लिखा श्लोक पढकर अर्घ चढ़ावे—

तीर्थेश्वरस्यान्त्यमहोत्सवेयं भक्त्या नताग्नीन्द्रतिरीट जातम्। आनर्चुरिन्द्राः सकलास्तमेनं यजे जलाद्यैरिह गार्हपत्यम् ॥

ॐ ह्रीं गार्हपत्यप्रणीताग्नये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

फिर इन्द्र नीचे लिखी स्तुति पढ़े। और भी शामिल हो सक्ते हैं। इन्द्र और आचार्य खड़े रहें, शेष सब बैठ जावें।

स्तुति।

पद्धरीछंद—जय ऋषभदेव गुणनिधि अपार। पहुंचे शिवको निज शक्ति द्वार॥ वंदूं श्री सिद्ध महंत आज। सुधरें जासे

मम सर्व काज ॥ १ ॥ निर्वाण थान यह पूज्य धाम । यह अग्नि पूज्य है रमणराम ॥ मन वच तन वंदू बार बार । जिन कर्म वंश डाल्दं उजाड़ ॥ २ ॥ कैलाश महा तीरथ पुनीत । जहं मुक्ति लही सब कर्म जीत ॥ नहिं तैजस तन नहिं कारमाण । नहिं औदारिक कोई प्रमाण ॥ ३ ॥ है पुरुषाकार सु ध्यान रूप । जिन तनमें था तिम है स्वरूप ॥ तनु वातवलयमें क्षेत्र जान । पीवत स्वातम रस अप्रमाण ॥ ४ ॥ हो शुद्ध चिदातम सुख निधान । हो बल अनंत धारी सुज्ञान ॥ वंदूं मैं तुमको बार बार । भवसागर पार लहूं अपार ॥ ५ ॥

अग्नि बराबर जलती रहे, कपूर चंदन डाला जाया करे । फिर थोड़ीसी भस्मको सिरकरके लेवे । आचार्य और इन्द्र पहले उस भस्मको नीचेका दोहा पढ़कर नमस्कार करें और उसे अपने माथेपर दोनों भुजाओंपर, गलेमें और छातीपर ऐसे पांच जगह लगावें ।

दोहा—वंदू पावन भस्मको, कर्म भस्म कर्तार । अंग लगे पावन करे, धर्म बढ़े अधिकार ॥

फिर एक रकाबीमें भस्म लेकर भीतर चबूतरोंपर जो हों उनको दी जावे वे सब अंगुलीसे लेकर नमनकर पांचों जगह लगावें । एक रकाबीमें भस्म पुरुषोंको व एक स्त्रियोंको भेज दी जावे । तब सूचक कहे—यह श्री तीर्थंकरके निर्वाणकी भस्म महा पवित्र है इसको नमनकर सब कोई माथे, दोनो भुजा, कंठ तथा छातीपर लगावें । इतनेमें परदा पड़ जावे, भीतर भस्मको उठा लिया जावे कि जब कोई मागे तब उसे दी जासके और माडला एक चोकीपर बनाया हुआ भगवानके सामने लाया जावे । यह मांडला पहलेसे बना तय्यार हो बीचमें आठ दलका कमल हो उसके मध्यमें साथिया लिखा हो, साथियेके ऊपर अर्द्धचन्द्राकार लिखकर उसपर बिंदु हो, आठ पत्तोंपर अपनी बाई तरफसे दाहनी और नीचे प्रमाण सिद्धोंके आठ गुणोंके आठ पुंज हों या फूल हो या नाम लिखे हों ।

(१) सम्यक्त (२) ज्ञान (३) दर्शन (४) वीर्य (५) सूक्ष्मत्व (६) अवगाहनत्त्व (७) अगुरुलघुत्व (८) अव्याबाधत्व, इस कमलके चारो ओर २४ कोठोमें २४ पुष्प हों या पुंज हों या २४ तीर्थंकरके नाम हों । ऐसा सुन्दर मांडला एक चौकीपर बना हुआ रखा जाय । बगलमें सामग्री हो तब परदा उठ जावे । इन्द्र व आचार्य नीचे प्रमाण पूजा करें—

स्थापना ।

बाह्याभ्यन्तरहेतुजातसुदृशः पूर्वश्रुतैरादिमा-च्छुक्लध्यानयुगाद्विजित्य दुरित लब्ध्वा सयोगिश्रियम् ।
प्राप्यायोगिपदं परेण सकलं निर्जित्य कर्मोत्करं, शुक्लध्यानयुगेन सिद्धसुगुणान्सिद्धान्समाराधये ॥

ॐ ह्रीं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र एहि एहि संवौषट् । ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

गंगादितित्थप्पहवप्पएहिं सगंधदा णिम्मलपएहिं । अच्चेमि णिच्चं परमट्ठसिद्धे सव्वट्ठसम्पादयसव्वसिद्धे ॥

ॐ ह्रीं श्रीं नमः सिद्धाधिपतये जलं ॥ १ ॥

गन्धेहि घाणाण सुहप्पएहिं समच्चयाणंपि सुहप्पएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ गन्धं ॥ २ ॥

पेरंतछोणीसयकारणेहिं वरक्खएहिं सियकारणेहिं ॥ अच्चेमि० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥

पुप्फेहि दिव्वेहिं सुवण्णएहिं कव्वे कऊसेहिं सुवण्णएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥

वव्भेहि णाणासुरसप्पएहिं भव्वाण णाणाइरसप्पएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ चरुं ॥ ५ ॥

ददिव्वमाणप्पहदीवएहिं संऊयआणं सिरिदीवएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ दीपं ॥ ६ ॥

कालाअरुं भूयसुहूवएहिं । जीयाण पावाण सुहूवएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ धूपं ॥ ७ ॥

अणग्घभूएहिं फलव्वएहिं भव्वस्स संदिण्णफलव्वएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ फलं ॥ ८ ॥

णयेण णाणेण य दंसणेण तवेण उट्टेण य संजमेण । सिद्धे तिकालेसु विसुद्धबुद्धे समग्घयामो सयलेवि सिद्धे ॥ अर्घ ॥९॥

प्रत्येक अर्घ ।

जानाति बोधो यदनुग्रहेण द्रव्याणि सर्वाणि सपर्ययाणि । दुराग्रहत्यक्तनिजात्मरूपं तं सिद्धसम्यक्त्वगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसम्यक्त्वगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जानाति नित्यं युगपत्स्वतोन्यसर्वार्थसामान्यविशेषपूर्वम् । निर्बाधकं स्पष्टतरं च यस्तं सिद्धात्मविज्ञानगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धात्मविज्ञानगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वात्मस्थसामान्यविशेषसर्वं साक्षात्करोत्येव समं सदा यः । सुनिश्चितासंभववाधकं तं सिद्धात्मनो दृष्टिगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनंतविज्ञानमनंतदृष्टिं द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु । व्यापारयंतं हतसंकरादिसिद्धात्मवीर्याख्यगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धवीर्यगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अबाधकं मानमबाध्यमेव निष्पीतसर्वार्थमसंगसंगम् । सर्वज्ञवेद्यं तदवाच्यमेव सिद्धात्मसूक्ष्माख्यगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसूक्ष्मगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

एकत्र सिद्धात्मनि चान्यसिद्धा वसंत्यसंबाधमनंतसंख्याः । यस्य प्रभावात्पुनरस्थितं तं सिद्धावगाहाख्यगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धावगाहगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अधो न पातोस्ति यथा शिलादेर्न तूलवद्वायुकृतेरणं च । सिद्धात्मनां तेन सुयुक्तिसिद्धं गुणं यजामोऽगुरुलघ्वभिख्यम् ॥

ॐ ह्रीं सिद्धागुरुलघुगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भवाग्निशांत्यै विहितश्रमो ऽव्याबाधात्मना यं परिणाममेति । स्वात्मोत्थसौख्यैकनिबंधनं तं सिद्धात्मनिर्बाधगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धव्याबाधगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । फिर नीचे लिखे अनादि सिद्ध मंत्रको २१ वार जपे ।

ॐ णमो सिद्धाणं, सिद्धा मंगलं, सिद्धा लोगुत्तमा, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि ह्रौं शांति कुरु कुरु स्वाहा ।

इत्थं समभ्यर्चितसिद्धनाथसम्यक्त्वमुख्याश्च गुणास्तदीयाः । सर्वार्चिताः सर्वजनार्चनीयाः स्वात्मोपलब्ध्यै मम संतु तेऽमी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रतिमामें सिद्धोंके आठ गुण नीचे प्रमाण आरोपण करे ।

जानाति बोधो यदनुग्रहेण द्रव्याणि सर्वाणि सपर्ययाणि । दुराग्रहत्यक्तनिजात्मरूपं सिद्धेत्र सम्यक्त्वगुणं न्यसामि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं परमावगाढ़सम्यक्त्वगुणभूषिताय नमः । ऐसा कह आचार्य प्रतिमापर पुष्प क्षेपे ।

जानाति नित्यं युगपत्स्वतोन्यत्सर्वार्थसामान्यविशेषसर्वम् । निर्बाधकं स्पष्टतरं च यत्तं सिद्धेत्र विज्ञानगुणं न्यसामि ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अनंतज्ञानभूषिताय नमः (पुष्प क्षेपे)

स्वात्मस्थसामान्यविशेषसर्वं साक्षात्करोत्येव समं सदा यः । सुनिश्चितासंभवबाधकं तं सिद्धेत्र दृष्ट्याख्यगुणं न्यसामि ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अनंतविज्ञानमनंतदृष्टिं द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु । व्यापारयंतं हतसंकरादिं सिद्धेत्र वीर्याख्यगुणं न्यसामि ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अनंतवीर्यगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अवाधकं मानमवाच्यमेव निष्पीतसर्वार्थमसंगसङ्गम् । सर्वज्ञवेद्यं तदवाच्यमेव सिद्धेत्र सूक्ष्माख्यगुणं न्यसामि ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

एकत्र सिद्धात्मनि चान्यसिद्धा वसंत्यसंवाधमनंतसंख्याः । यस्य प्रभावात्सुनयस्थितं तं सिद्धेवगाहाख्यगुणं न्यरामि ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अवगाहनगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अधोनुपातोऽस्ति यथा शिलादेर्न तूलवद्वायुकृतेरणं च । सिद्धात्मना तेन सुयुक्तिसिद्धं गुणं न्यसामोऽगुरुलघ्वभिख्यम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

भवाग्निशान्त्यै विहितश्रमोऽव्यावाधात्मना यं परिणाममेति । स्वात्मोत्थसौख्यैकनिबंधनं तं सिद्धेत्र निर्वाधगुणं न्यसामि ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अव्यावाधगुणभूषिताय नमः । (प्रतिमापर पुष्प क्षेपे) (अब २४ कोठोंकी पूजा करे)

त्रिभंगी—जय जय तीर्थंकर मुक्तिवधूवर भवसागर उद्धार करं, जय जय परमातम शुद्ध चिदातम कर्मकलंक निवारकरं ॥

जय जय गुणसागर सुखरत्नाकर आतममगनता सार धरं, जय जय निर्वाणं पाय सुज्ञानं पूजत पग संसार हरं ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पांजलि क्षिपेत् ।

वसंततिलका छंद—पानी महान भरि शीतल शुद्ध लाऊं । जन्मादि रोग हर कारण भाव ध्याऊं ॥

पुजूं सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं । पाऊं महान शिवमंगल नाश कालं ॥

ॐ ह्री श्री ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो नमः जलं ।

केशर सुमिश्रित सुगंधित चन्दनादी । आताप सर्व भव नाशन मोह आदी ॥ पूजूं सदा० ॥ चंदनं ॥

चन्दा समान वहु अक्षत धार थाली । अक्षय स्वभाव पाऊं गुण रत्नशाली ॥ पूजूं० ॥ अक्षतं ॥

चम्पा गुलाव मरुवा वहु पुष्प लाऊं । दुख टार काम हरके निज भाव पाऊं ॥ पूजूं० ॥ पुष्पं ॥

ताजे महान पकवान वनाय धारे । वाधा मिटाय क्षुधरोग स्वयं सम्हारे ॥ पूजूं० ॥ नैवेद्यं ॥

दीपावली जगमगाय अंधेर घाती । मोहादि तम विघट जाय भव प्रपाती पूजूं० ॥ दीपं ॥

चंदन कपूर अगरादि सुगंध धूपं । वालूं जु अष्ट कर्म हो सिद्ध भूपं ॥ पूजूं० ॥ धूपं ॥

मीठे रसाल वादाम पवित्र लाए । जासे महान फल मोक्ष सु आप पाए ॥ पूजूं० ॥ फलं ॥

आठों सुद्रव्य ले हाथ अरघ वनाऊं । संसार वास हरके निज मुक्ल पाऊं ॥ पूजूं० ॥ अर्घ ॥

प्रत्येक अर्घ ।

गीता—चौदस वदी शुभ माघकी कैलाशगिरि निज ध्यायके । वृषभेश सिद्ध हुवे शचीपति पूजते हित पायके ॥

हम धार अर्घ महान पूजा करें गुण मन लायके । सब राग दोष मिटायके शुद्धात्म मनमें भायके ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाचतुर्दश्यां श्री वृषभनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

शुभ चैत सुदि पांचम दिना सम्मेदगिरि निज ध्यायके । अजितेश सिद्ध हुवे भविकगण पूजते हित पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लापंचम्यां श्री अजितनाथजिनेंद्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

शुभ माघ सुदि षष्ठी दिना सम्मेदगिरि निज ध्यायके । संभव निजातम केलि करते सिद्ध पदवी पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लाषष्ठ्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

वैशाख सुदि षठी दिना सम्मेदगिरि निज ध्यायके । अभिनंदन शिव धाम पहुंचे शुद्ध निज गुण पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाषष्ठ्या श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।(४)

शुभ चैत सुदि एकादशी सम्मेदगिरि निज ध्यायके । श्री सुमतिजिन शिव धाम पायो आठ कर्म नशायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लाएकादश्या श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (५)

शुभ कृष्ण फाल्गुन सप्तमी सम्मेदगिरि निज ध्यायके । श्री पद्मप्रभु निर्वाण हूवे स्वात्म अनुभव पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णासप्तम्यां श्री पद्मप्रभुजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

शुभ कृष्ण फाल्गुण सप्तमी सम्मेदगिरि निज ध्यायके । श्रीजिन सुपार्श्व स्वस्थान लीयो स्वकृत आनंद पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णासप्तम्यां श्री सुपार्श्वजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

शुभ शुक्ल फाल्गुण सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके । श्रीचन्द्रप्रभु निर्वाण पहुंचे शुद्ध ज्योति जगायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्ला सप्तम्यां श्री चंद्रप्रभुजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८)

शुभ भाद्र शुक्ला अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। श्रीपुष्पदंत स्वधाम पायो, स्वात्म गुण झलकायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लाअष्टम्यां श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९)

दिन अष्टमी शुभ क्वार सुद, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। श्रीनाथ शीतल मोक्ष पाए, गुण अनंत लखायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाअष्टम्या श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१०)

दिन पूर्णमासी श्रावणी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। जिन श्रेयनाथ स्वधाम पहुंचे, आत्म लक्ष्मी पायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं श्रावणपूर्णमास्यां श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११)

शुभ भाद्र सुद चौदश दिना, मंदारगिरि निज ध्यायके। श्रीवासुपूज्य स्वथान ली हो, कर्म आठ जलायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लाचतुर्दश्यां श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१२)

आषाढ़ वद शुभ अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। श्रीविमल निर्मल धाम लीनो, गुण पवित्र बनायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णाअष्टम्यां विमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१३)

अम्मावसी वद चैत्रकी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। स्वामी अनंत स्वधाम पायो, गुण अनंत लखायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअमावस्यां श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१४)

शुभ ज्येष्ठ शुक्ला चौथ दिन, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। श्रीधर्मनाथ स्वधर्म नायक, भए निज गुण पायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाचतुर्थ्यां श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१५)

शुभ ज्येष्ठ कृष्णा चौदसी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। श्रीशांतिनाथ स्वधाम पहुंचे, परम मार्ग बतायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१६)

वैशाख शुक्ला प्रतिपदा, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। श्री कुंथुनाथ स्वधाम लीनों, परम पद झलकायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदाया श्री कुन्थुनाथजिनेंद्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७)

अम्मावसी वद चैतकी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। श्री अरहनाथ स्वथान लीनों, अमर लक्ष्मी पायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअमावस्यां श्री अरहनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१८)

शुभ शुक्ल फाल्गुण पंचमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। श्री मल्लिनाथ स्वथान पहुंचे, परम पदवी पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लापंचम्यां श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१९)

फाल्गुण वदी शुभ द्वादशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। जिननाथ मुनिसुव्रत पधारे, मोक्ष आनंद पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाद्वादश्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०)

वैशाख कृष्णा चौदशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। नमिनाथ मुक्ति विशाल पाई, सकल कर्म नशायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णाचतुर्दश्यां श्री नमिनाथजिनेंद्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१)

आषाढ़ शुक्ला सप्तमी, गिरनार गिरि निज ध्यायके। श्री नेमिनाथ स्वधाम पहुंचे अष्ट गुण झलकायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लासप्तम्यां श्री नेमनाथजिनेंद्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२)

शुभ श्रावणी सुद सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके। श्री पार्श्वनाथ स्वथान पहुंचे सिद्धि अनुपम पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लासप्तम्यां श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२३)

अम्मावसी वद कार्तिकी, पावापुरी निज ध्यायके। श्री वर्द्धमान स्वधाम लीनों, कर्म बंश जलायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाअमावस्यां श्री वर्द्धमानजिनेंद्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४)

भुजंगप्रयात छंद—नमस्ते नमस्ते नमस्ते जिनंदा। तुम्हीं सिद्ध रूपी हरे कर्म फंदा॥ तुम्हीं ज्ञान सूरज भविक नीरजोंको। तुम्हीं ध्येय वायू हरो सब रजोंको ॥ १ ॥ तुम्हीं निष्कलंकं चिदाकार चिन्मय। तुम्हीं अक्षजीतं निजाराम तन्मय ॥ तुम्हीं लोक ज्ञाता तुम्हीं लोक पालं। तुम्हीं सर्वदर्शी हतो मान कालं ॥ २ ॥ तुम्हीं क्षेमकारी तुम्हीं योगिराजं। तुम्हीं शांत ईश्वर कियो आप काजं ॥ तुम्हीं निर्भयं निर्मलं वीतमोहं। तुम्हीं साम्य अमृत पियो वीतद्रोहं ॥ ३ ॥ तुम्हीं भव उदधि पारकर्ता जिनेशं। तुम्हीं मोह तमके निवारक दिनेशं ॥ तुम्हीं ज्ञाननीरं भरे क्षीर सागर। तुम्हीं रत्न गुणके सु गंभीर आकर ॥ ४ ॥ तुम्हीं चंद्रमा निज सुधाके प्रचारक। तुम्हीं योगियोंके परम प्रेम धारक ॥ तुम्हीं ध्यान गोचर सु तीर्थंकरोंके। तुम्हीं पूज्य स्वामी परम गणधरोंके ॥ ५ ॥ तुम्हीं हो अनादी नहीं जन्म तेरा। तुम्हीं हो सदा सत् नहीं

अंत तेरा ॥ तुम्हीं सर्वव्यापी परम बोध द्वारा । तुम्हीं आतमव्यापी चिदानंद धारा ॥ ६ ॥ तुम्हीं हो अनिसं स्व परिणाम द्वारा । तुम्हीं हो अभेदं अमिट द्रव्य द्वारा ॥ तुम्हीं भेदरूपं गुणानंत द्वारा । तुम्हीं नास्तिरूपं परानंत द्वारा ॥ ७ ॥ तुम्हीं निर्विकारं अमूरत अखेदं । तुम्हीं निष्कषायं तुम्हीं जीत वेदं ॥ तुम्हीं हो चिदाकार साकार शुद्धं । तुम्हीं हो गुणस्थान दूरं प्रबुद्धं ॥ ८ ॥ तुम्हीं हो समयसार निजमें प्रकाशी । तुम्हीं हो स्वचारित्र आतम विकाशी ॥ तुम्हीं हो निरास्रव निराहार ज्ञानी । तुम्हीं निर्जरा विन परम सुख निधानी ॥ ९ ॥ तुम्हीं हो अवन्धं तुम्हीं हो अमोक्षं । तुम्हीं कल्पनातीत हो नित्य मोक्षं ॥ तुम्हीं हो अवाच्यं तुम्हीं हो अचित्यं । तुम्हीं हो सुवाच्यं सु गणराज निसं ॥ १० ॥ तुम्हीं सिद्धराजं तुम्हीं मोक्षराजं । तुम्हीं तीन भूके सु ऊरध विराजं ॥ तुम्हीं वीतरागं तदपि काज सारं । तुम्हीं भक्तजन भावका मल निवारं ॥११॥ करैं मोक्ष कल्याणकं भक्त भीने । फुरैं भाव शुद्धं यही भाव कीने ॥ नमे हैं जजे हैं सु आनन्द धारैं । शरण मंगलोत्तम तुम्हींको विचारैं ॥ १२ ॥

दोहा—परम सिद्ध चौवीस जिन, वर्तमान सुखकार । पूजत भजत सु भावसे, होय विघ्न निरवार ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिवर्तमानजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—विम्बप्रतिष्ठा हो सफल, नरनारी अघ हार । वीतराग विज्ञानमय, धर्म बढ़ो अधिकार ॥

इत्याशीर्वादः । पुष्प क्षेपे ।

फिर साधारणतया पूजा विसर्जन करे, परदा पड़े । सवेरे यह कार्य होजावे तव नरनारी भोजनादि करैं । ऊपर आचार्य शेष प्रतिमाओंपर पुष्प द्वारा निर्वाण कल्याणककी स्थापना करे । अस्मिन्बिम्बे निर्वाणकल्याणकं आरोपयामि स्वाहा । सिद्धाष्टगुणानि न्यसामि स्वाहा ।

अध्याय नौवाँ ।

अन्तिम होम, अभिषेक व शांति ।

तीसरे पहर करीब १ वजे फिर मण्डप टिकटोंके द्वारा भरा जावे । होमकी सामग्री इतनी तैयार की जावे जिससे १२०० के करीब आहुति होसकें । अभिषेकके लिये १०८ कलश हों तो ठीक है । यदि न होसकें तो ९४, २७, ९, भी होसके हैं । इनमें

जन्मकल्याणकके समान दूधसे मिला जल जो सफेद दीखे भरा जावे व एक बड़ा कलश केशरादि सुगन्ध द्रव्योंसे भरा हुआ हो व चार कलश कोनोंके हों। पहले आचार्य व इन्द्र सब स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन सवेरेके समान अंग शुद्धि करें फिर एक सिद्ध पूजा करके तीनों कुण्डोंमें होम करें। उस समय वह सब विधि करें जो यागमण्डलकी पूजाके प्रारम्भमें की थी (होम विधि अध्याय दूसरा पृ० २१) पहले सिद्धोंकी सम्बंधी पीठिका मंत्रोंसे होम करे। "ॐ सत्य जाताय नमः" आदिसे ऐसी ११२ आहूतियां देवे। फिर जिस मंत्रकी एक लाख जाप्य की थी उस मंत्रकी १००० आहुति तीनों कुण्डोंमें देवें। अर्थात् कुल ३००० हुईं। एक ही साथ एक मंत्र पढ़ा जावे व तीनों कुण्डोंमें दो दो इन्द्र आहुति देवें—"ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः सर्वविघ्नविनाशनाय स्वाहा।"

इसप्रकार होम हो चुके तब महा अभिषेक प्रारम्भ किया जावे। पहले आचार्य और इन्द्र कायोत्सर्ग करके सिद्धोंका ध्यान करें फिर सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति तथा समाधिभक्ति पढ़ें। फिर पूजन करें।

(१) जिनयज्ञ विधानम्।

आहूता भवनामरैरनुगता यं मर्त्यदेवास्तथा, तस्थौ यस्त्रिजगत्सभांतरमहापीठाग्रसिंहासने।
यं ह्यंयं हृदि सन्निधाप्य सततं ध्यायंति योगीश्वराः, तं देवं जिनमर्चितं कृतधियामाव्हाननाद्यैर्भजे॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उ साऽर्हन् एहि२ संवौषट्। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा अर्हन् तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अर्हन् मम सन्निहितो भव भव वषट्। पुष्पांजलिं क्षेपे।

स्थापना।

यत्रागाधविशालनिर्मलगुणे लोकत्रयं सर्वदा। सालोकं प्रतिबिंबितं प्रविशतां नित्यामृतानंदनम्॥
सर्वाब्जानिमिपास्पदं स्मृतिगतं पापापहं धीमताम्। अर्हत्तीर्थमपूर्वमक्षयामिदं वार्धारया धारये॥ १॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनन्तानन्तज्ञानशक्तये जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधश्चन्दनगन्धवन्धुरतरो यद्दिव्यदेशोद्भवो, गन्धर्वाद्यमरस्तुतो विजयते गन्धांतरं सर्वतः।
गंधादीनखिलानवैति विशदं गंधादिमुक्तोऽपि यः, तं गंधाद्यघगन्धमानहतये गंधेन संपूजये॥

ॐ ह्रीं अक्षयफलप्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

यस्य द्वादशयोजने सदसि सद्गंधादिभिः स्वोपमा। नप्यर्थान्सुमनोगणान्सुमनसो वर्षन्ति विष्वक्सदा।
यः सिद्धिं सुमनः सुखं सुमनसां स्वं ध्यायतामावहे–त्तं देवं सुमनोमुखैश्च सुमनोभेदैः समभ्यर्चये।
यद्व्याबाधविवर्जितं निरुपमं स्वात्मोत्थमत्यूर्जितम्। नित्यानंदसुखेन तेन लभते यस्तृप्तिमासन्तिकीम् ॥
यं चाराध्य सुधाशिनो ननु सुधास्वादं लभंते चिरम्। तस्योद्यद्रसचारुणैव चरुणा श्रीपादमाराधये ॥

ॐ ह्री सुमनः सुखप्रदाय पुष्पम् निर्वपामीति स्वाहा।

स्वस्यान्यस्य सहप्रकाशनविधौ दीपोपमोप्यन्वहम्, यः सर्वं ज्वलयन्ननंतकिरणैस्त्रैलोक्यदीपोऽस्त्यतः।
येनोद्दीपितधर्मतीर्थमभवत्सत्य विभो स्वस्य स–द्दीप्त्या दीपितदिङ्मुखस्य चरणौ दीपैः समुद्दीपये ॥

ॐ ह्री अनन्तदर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

येनेदं भुवनत्रयं चिरमभूदुद्धूपितं सोप्यहो। मोहो येन सुधूपितो निजमहाध्यानाग्निना निर्दयम्।
यस्यास्थानपदस्थधूपघटजैर्धूमैर्जगद्धूपितम्। धूपैस्तस्य जगद्वशीकरणसद्धूपैः पदं धूपये ॥

ॐ ह्रीं वशीकृतत्रिलोकनाथाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

यद्भक्त्या फलदायि पुण्यमुदितं पुण्यं नवं बध्यते। पापं नैव फलप्रदं किमपि नो पापं नवं प्राप्यते ॥
आर्हन्त्य फलमद्भुतं शिवसुखं नित्यं फलं लभ्यते। पादौ तस्य फलोत्तमादिसुफलैः श्रेयः फलायार्च्यते ॥

ॐ ह्रीं अभीष्टफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वार्गंधतंदुलल्लतांतहविःप्रदीपै–र्धूपैः फलैः कनकपात्रगतैर्जिनाग्रे।
नद्यादिवर्तदधिस्वस्तिकदर्भदूर्वा–सिद्धार्थकैश्च कृतमहर्घ्यमिहोद्धरामः ॥

ॐ ह्रीं विनष्टाष्टकर्मणे अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तुतिः।

तुभ्यं नमो दशगुणोर्जितदिव्यगात्र। कोटिप्रभाकरनिशाकरजैत्रतेजः ॥
तुभ्यं नमोऽतिचिरदुर्जयघातिजात–। घातोपजातदशसारगुणाभिराम ॥ १ ॥

तुभ्यं नमः सुरनिकायकृतैर्विहारे । दिव्यैश्चतुर्दशविधातिशयैरुपेत ॥
तुभ्यं नमस्त्रिभुवनाधिपतित्वलक्ष्म-श्रीप्रातिहार्याष्टकलक्षिताहन् ॥ २ ॥
तुभ्यं नमो निरुपमान अनन्तवीर्य । तुभ्यं नमो निजनिरंजननित्यसौख्य ॥
तुभ्यं नमः परमकेवलबोधवार्धे । तुभ्यं नमः समसमस्तपदावलोक ॥ ३ ॥
तुभ्यं नमः सकलमंगलवस्तुमुख्य । तुभ्यं नमः शिवसुखप्रद पापहारिन् ॥
तुभ्यं नमस्त्रिजगदुत्तमलोकपूज्य । तुभ्यं नमः शरणभूत्रय रक्ष रक्ष ॥ ४ ॥
तुभ्यं नमोस्तु नवकेवलपूर्वलब्धे । तुभ्यं नमोस्तु परमैश्वर्योपलब्धे ॥
तुभ्यं नमोऽस्तु मुनिकुंजरयूथनाथ । तुभ्यं नमोस्तु भुवनत्रितयैकनाथ ॥ ५ ॥

(२) सिद्ध पूजा ।

आहूता इव सिद्धमुक्तिवनितां मुक्तान्यसंगा ययुः । तिष्ठंत्यष्टमभूमिसौधशिखरे सानन्तसौख्याः सदा ॥
साक्षात्कुर्वत एव सर्वमनिशं सालोकलोकं समं । तानद्धेद्धविशुद्धसिद्धनिकरानावाहनाद्यैर्भजे ॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र एहि२ संवौषट् । ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।
गंगादितित्थप्पवहप्पएहिं सग्गंधदाणिम्मलदापएहिं । अच्चेमि णिच्चं परमट्ठसिद्धे सव्वट्ठसम्पादय सव्वसिद्धे ॥
ॐ ह्रीं र्ह श्रीसिद्धाधिपतये जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

गंधेहिं घाणाण सुहप्पएहि । समच्चयाणं पि सुहप्पएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ गन्धं ॥ २ ॥
फेरंत छोणीसिय कारणेहिं । वरक्खएहिं सियकारणेहिं ॥ अच्चेमि० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥
पुप्फेहिं दिव्वेहि सुवण्णएहिं कव्वे कऊसेहिं सुवण्णएहिम ॥ अच्चेमि० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥
बब्भेहि णाणासुरसप्पएहिं भव्वाणणाणायिरसप्पएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ चरुम् ॥ ५ ॥
देदिव्वमाणप्पहदीवएहिं । संऊयआणं सिरिदीवएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ दीपं ॥ ६ ॥

काळाअरूभूयसुहूवएहिं । जीयाण पावाण सुहूवएहिम् ॥ अच्चेमि० ॥ धूपं ॥ ७ ॥

अणग्घभूएहिं फळव्वएहिं भव्वस्स संदिण्णफळव्वएहिम् ॥ अच्चेमि० ॥ फलं ॥ ८ ॥

णयेण णाणेण य दंसणेण । तवेण उट्टेण य संजमेण ॥ सिद्धे तिकाळे सुविसुद्धबुद्धे । समग्घयामो सयळे त्रि सिद्धे ॥

ॐ ह्रीं हैं श्री सिद्धाधिपतये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्तुतिः ।

नमस्ते पुरुषार्थानां परां काष्ठामधिष्ठित । सिद्धभट्टारकस्तोम निष्ठितार्थ निरंजन ॥ १ ॥

स्वःप्रदाय नमस्तुभ्यं अचलाय नमोस्तु ते । अक्षयाय नमस्तुभ्यं अव्याबाधाय ते नमः ॥ २ ॥

नमस्तेऽनंतविज्ञानदृष्टिवीर्यसुखास्पद । नमो नीरजसे तुभ्यं निर्मलायास्तु ते नमः ॥ ३ ॥

अच्छेद्याय नमस्तुभ्यं अभेद्याय नमो नमः । अक्षताय नमस्तुभ्यं अप्रमेय नमोस्तु ते ॥ ४ ॥

नमोस्त्वगर्भवासाय नमोऽगौरवलाघव ॥ अक्षोभ्याय नमस्तुभ्यमविलीनाय ते नमः ॥ ५ ॥

नमः परमकाष्ठात्मयोगरूपत्वमीयुषे । लोकाग्रवासिने तुभ्यं नमोऽनंतगुणाश्रय ॥ ६ ॥

निःशेषपुरुषार्थानां निष्ठां सिद्धिमधिष्ठित । सिद्धभट्टारकव्रात भूयो भूयो नमोस्तु ते ॥ ७ ॥

विविधदुरितशुद्धान्सर्वतत्वार्थबुद्धान् । परमसुखसमृद्धान्युक्तिशास्त्राविरुद्धान् ॥

बहुविधगुणऋद्धान्सर्वलोकप्रसिद्धान् । प्रमितसुनयसिद्धान्संस्तुवे सर्वसिद्धान् ॥ ८ ॥

(३) महर्षिपूजा ।

ये येऽनगारा ऋषयो यतीन्द्रा मुनीश्वरा भव्यभवद्व्यतीताः । नेषां समेषां पदपंकजानि संपूजयामो गुणशीलसिद्ध्यै ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रपवित्रतरगात्रचतुरशीतिलक्षगुणगणधरचरणा आगच्छत २ संवौषट्, ॐ ह्रीं अत्र तिष्ठ २ ठः ठः, ॐ ह्रीं मम रत्नत्रयशुद्धिं कुरुत २ वषट् ।

सुगंधिशीतलैः स्वच्छैः स्वादुभिर्विमलैर्जलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्व्ययतीन्यजे ।

ॐ ह्रीं गणधरचरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सारकर्पूरकाश्मीरकालितैश्चंदनद्रवैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ गंधं ॥ २ ॥
अक्षतैरक्षतैः सूक्ष्मैर्वलक्षैरुक्षसान्निभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥
पुष्पैः प्रसरदामोदाहूतपुष्पंधयावृतैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥
हव्यैर्नव्यघृतापूपपायसैर्व्यंजनान्वितैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ चरुं ॥ ५ ॥
कर्पूरप्रभवैर्दीपैर्दीप्त्या दीपितदिङ्मुखैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ दीपं ॥ ६ ॥
दशांगधूपसद्धूमैर्दशाशापूर्णसौरभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ धूपं ॥ ७ ॥
चोचमोचाम्रजंबीरफलपूरादिसत्फलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ फलं ॥ ८ ॥

गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैकबंधून् प्रकटितनिजमार्गान्ध्वस्तमिथ्यात्वमार्गान् ।
परिचितनिजतत्वान्पालिताशेषसत्वान् । शमरसजितचंद्रानर्घयामो मुनींद्रान् ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

स्तुति ।

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेंद्राः, समर्षयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः । तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां, वचोमनोमूर्द्धसु धारयामः ॥ १ ॥
तपोबलाक्षीणरसौषधर्द्धीन् विज्ञानऋद्धीनपि विक्रियर्द्धीन् । सप्तर्द्धियुक्तानखिलानृषींद्रान्स्मरामि वंदे प्रणमामि नित्यम् ॥ २ ॥
सर्वेषु तीर्थेषु तदंतरेषु सप्तर्षयो ये महिना बभूवुः । भवांबुधेः पारमिताः कृतार्थाः । भवंतु नस्ते मुनयः प्रसिद्धाः ॥ ३ ॥
ये केवलींद्राः श्रुतकेवलींद्रा ये शिक्षकास्तूर्यतृतीयबोधाः । सविक्रिया ये वरवादिनश्च सप्तर्षिसंज्ञानिह तान्प्रवंदे ॥ ४ ॥
प्रमत्तमुख्येषु पदेषु सार्धद्वीपद्वये ये युगपद्भवन्ति । उत्कर्षतस्तान्नवकोटिसंख्यान्वंदे त्रिसंख्यारहितान्मुनींद्रान् ॥ ५ ॥

(४) नीचेका स्वस्तिपाठ पढकर पुष्पांजलि क्षेपे ।

श्रीपंचकल्याणमहार्हणार्हा वागात्मभाग्यातिशयैरुपेताः । तीर्थंकराः केवलिनश्च शेषाः स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहंतु ॥ १ ॥
ते शुद्धमूलोत्तरसद्गुणानामाधारभावादनगारसंज्ञाः । निर्ग्रंथवर्या निरवद्यचर्याः ॥ स्वस्ति० ॥ २ ॥
ये चाणिमाद्यष्टसुविक्रियाढ्यास्तथाक्षयावासमहानसाश्च । राजर्षयस्ते सुरराजपूज्याः स्वस्तिक्रिया० ॥ ३ ॥
ये कोष्ठबुध्यादिचतुर्विधर्द्धीरवापुरामर्शमुखौषधर्द्धीः । ब्रह्मर्षयो ब्रह्मणि तत्परास्ते ॥ स्वस्ति० ॥ ४ ॥

जलादिनानाविधचारणा ये ये चारणाग्यांवरचारणाश्च । देवर्षयस्ते नतदेववृंदाः ॥ स्वस्ति० ॥ ५ ॥
सालोकलोकोज्ज्वलनैकतानं प्राप्ताः परं ज्योतिरनंतबोधम् । सर्वर्षिवंद्याः परमर्षयस्ते ॥ स्वस्तिक्रियां० ॥ ६ ॥
श्रेणीद्वयारोहणसावधानाः कर्मोपशांतिक्षपणप्रवीणाः । एते समस्ता यतयो महान्तः ॥ स्वस्ति० ॥ ७ ॥
समग्रमध्यक्षमिताक्षदेशप्रत्यक्षमलक्षसुखानुरक्ताः । मुनीस्वरास्ते जगदेकमान्याः ॥ स्वस्ति० ॥ ८ ॥
उग्रं च दीप्तं च तपोभितप्तं महच्च घोरं च तरां चरन्तः । तपोधना निर्वृतिसाधनोत्काः ॥ स्वस्ति० ॥ ९ ॥
मनोवचःकायबलप्रकृष्टाः स्पष्टीकृताष्टांगमहानिमित्ताः । क्षीरामृतस्राविमुखा मुनींद्राः ॥ स्वस्ति० ॥ १० ॥
प्रत्येकबुद्धप्रमुखा मुनींद्रा शेषाश्च ये ये विविधर्द्धियुक्ताः । सर्वेऽपि ते सर्वजनीनयुक्ताः ॥ स्वस्ति० ॥ ११ ॥

शापानुग्रहशक्तताद्यतिशयैरुच्चावचैरंचिताः । ये सर्वे परमर्षयो भगवतां तेषां गुणस्तोत्रतः ॥
एतत्स्वस्त्ययनाद्वपति सकलः संक्लेशभावः शुभो । भाव स्यात्सुकृतं च तच्छुभविधेरादाविदं श्रेयसे ॥ १२ ॥

फिर आचार्य नीचे लिखा मंत्र पढ़ भूमिशुद्धिकेलिये जल छिड़के । " ॐ ह्रीं श्रीं क्षीं भूः स्वाहा । " फिर शुद्ध भूमिपर या बडी चौकीपर साथिया करके १०८ या ५४ या २७ या ९ कलश क्षीर जलसे भरे स्थापित करे, या रक्खे हों तो यह मंत्र पढ़ उनपर पुष्प क्षेपे—" ॐ ह्रीं स्वस्तये कलशस्थापन करोमि स्वाहा । " तथा जिस उच्च स्थानपर न्हवन करना हो उसके चारों कोनोंपर ४ कलश शुद्ध जलके भरे स्थापित करे तब भी ऊपर लिखा मंत्र पढ़े । इसके ऊपर ऐसा पात्र विराजमान करे जिसके दोनों ओर पानी बहनेकी नाली हो जिससे न्हवनका जल दोनो तरफ गिरकर नीचे रक्खे हुए तसलोंमें पडे । भूमिपर दो तसले ऐसे दोनों तरफ रख दिये जावें जिससे कुल कलशोंका न्हवन जल उनमें आसके । फिर जिस पीठ या चौकीपर भगवानको विराजमान करना हो उसे उस पात्रके ऊपर नीचे लिखा मंत्र पढकर रक्खे—" ॐ ह्रीं अर्हं क्ष्मं ठः ठः स्वाहा । " फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ उस पीठको धोवे—

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमो अर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन श्रीपीठप्रक्षालनं करोमि स्वाहा । फिर नीचेका मंत्र पढ़ उस पीठपर श्री लिखे—" ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीलेखनं करोमि स्वाहा । " फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ इन्द्र जिन प्रतिमाको जिसकी प्रतिष्ठा होचुकी है स्पर्श करे । " ॐ ह्रीं धात्रे वषट् प्रतिमास्पर्शनम् । " फिर बीच प्रतिमाको बड़ी विनयसे इन्द्र लावे और पीठपर विराजमान करे तब आचार्य नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़े—

नीत्वा भूरिविभूतितः सुरगिरिं श्री पांडुकाग्रासने । पूर्वास्यं विनिवेश्य ते सुरवराः संस्नापयंति स्म यम् ॥
तं देवं स्नपनार्थमंडपमिमं नीत्वा विभूत्या समं । पीठेत्र श्रुतबीजभासुरतले पूर्वाननं स्थापये ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह पांडुकशिलापीठे तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा ।

फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ प्रतिमाके चरणोंकों इन्द्र स्पर्शे—

ॐ उसहाय दिव्वदेहाय सज्जोजादाय महप्पण्णाय अणंतचउट्टयाय परमसुहपइट्ठयाय णिम्मलाय सयंभुवे अजरामरपरमपदपत्ताय चउमुहपरमेट्ठिणे अरहंताय तिलोयणाणाय तिलोयपूजाय अट्ठदिव्वदेहाय देवपरिपूजिताय परमपदाय मम यत्थ सन्निहिदाय स्वाहा ।

फिर दोनो ओर सौधर्म ईशान १०८ कलशमेंसे एक एक कलश लेकर खड़े हों तब आचार्य नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़े। इसके पहले यदि भाषा मंगल पढना हो तो दूसरा मंगल पढ़ले ।

मेरोर्मूर्धनि मूर्ध्नि यस्य पयसां धारां पयोवारिधेः । सौधर्मः प्रथमं जयेति परया भक्त्या समापातयत् ॥
ईशानादिसुरेश्वरास्तदनु यं संस्नापयांचाक्रिरे । तं देवं निजपंकपातनकृते संस्नापयामो जिनम् ॥ १ ॥
यज्ज्ञानादिमहत्त्वनिर्जितमहत्त्वाकाशमेत्यांभसा । व्याजात्तन्वभिषिंचतीह जिनमित्याविष्कृताशंककैः ॥
अच्छाच्छैरपि शीतलैः सुमधुरैस्तीर्थोपनीतैर्जलैः । शांत्यापादितवारिमूर्तिमनघं देवं जिनं स्नापये ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं ह हं सं सं तं तं पं पं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा ।

आचार्य ऊपरके मंत्रको पढ़ता रहे, १०८ कलशोंसे दोनों इन्द्र अभिषेक करते रहें, दोनों तरफ कतारबंध दूसरे इन्द्र खड़े होजावें और कलशोंको देते रहें । खाली कलशोंको पीछेके इन्द्र लेकर रखते रहें। न्हवनके समय बाहर बाजे बजते रहें, स्त्रियां मंगलगीत गावें, जय जय शब्द हो फिर उदक चंदनादि बोलकर अर्घ चढ़ावे । फिर केशरादि मिश्रित गाढ़े जलके कलशसे स्नान हो तब यह श्लोक व मंत्र पढ़ा जावे—

कर्कोलैलामलयजहिमग्रंथिपर्णागरुश्रीजातीपत्रिप्रभृतिसुरभिद्रव्यसांसिद्धचूर्णैः ॥
स्वर्मोक्षश्रीविषयविलसद्वश्यचूर्णैरमीभिर्देवस्यामुष्य चूर्णीकृतदुरघगिरेरंगमुद्धूलयामः ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं सुगंधजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा । फिर अर्घ चढ़ावे । फिर चार कोनोंके कलशोंको दो दो कलश एक साथ एक एक इन्द्र लेकर नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़कर स्नान करावे ।

चत्वारः सारतोयांबुधय उत घनाः पुष्करावर्तकाद्याः । निर्यद्दुग्धाः स्तना वा किमु सुरसुरभेरित्थमाशंक्यमानैः ॥
अच्छाच्छस्वाददीव्यत्परिमलविलसत्तीर्थवारिप्रवाहैः । कुंभैरेभिश्चतुर्भिर्युगपदभिषवं कुर्महे भव्यबंधोः ॥

ॐ ह्रीं पवित्रतरचतुःकोणकुंभपरिपूर्णजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा। फिर अर्घ चढ़ावे । फिर नीचे लिखा श्लोक व मंत्र पढ़कर कुछ चंदन मिले हुए जलसे अभिषेक करे ।

सकलभुवननाथं तं जिनेंद्रं सुरेंद्रैरभिषवविधिमाप्तं स्नातकं स्नापयामः ।
यदभिषवणवारां बिंदुरेकोऽपि नॄणां प्रभवति हि विधातुं भुक्तिसन्मुक्तिलक्ष्मीः ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते । ॐ ह्रीं क्रों मम पापं खंड खंड दह दह हन हन पच पच पाचय पाचय हं झं झ्वीं क्ष्वीं हं सः झं वं ह्वः प. हः क्षा क्षीं क्षूं क्षें क्षै क्षों क्षौ क्षं क्षः क्ष्वीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रीं द्रां द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठठ मम श्रीरस्तु सिद्धिरस्तु पुष्टिरस्तु । शांतिरस्तु । कल्याणमस्तु । स्वाहा ।

फिर अर्घ चढावे । फिर नीचे लिखा श्लोक पढके आशीर्वादसूचक पुष्प क्षेपें—

घातिव्रातविघातजातविपुलश्रीकेवलज्योतिषो । देवस्यास्य पवित्रगात्रकलनात्पूतं हितं मंगलम् ॥
कुर्याद्भव्यभवार्तिदावशमनं स्वर्मोक्षलक्ष्मीफलप्रोद्यद्धर्मलताभिवर्धनमिदं सद्गंधगंधोदकम् ॥

फिर भगवानको पोंछकर तथा पीठको भी पोंछकर भगवानको विराजमान करे फिर श्री आदिनाथ भगवानकी या जिस तीर्थंकरकी प्रतिमा हो उसकी पूजा करे फिर शांतिधारा देवे तब यह पढ़े—

ॐ अर्हद्भ्यो नमः सिद्धेभ्यो नमः सूरिभ्यो नमः पाठकेभ्यो नमः सर्वसाधुभ्यो नमः । अतीतानागतवर्तमानत्रिकालगोचरानंतद्रव्य-गुणपर्यायात्मकवस्तुपरिच्छेदकसम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानचारित्राद्यनेकगुणगणाधारपंचपरमेष्ठिभ्यो नमः । ॐ पुण्याहं २ प्रीयंतां २ ऋषभादि महति महावीर वर्धमानपर्यंतपरमतीर्थंकरदेवाः तत्समयपालिन्योऽप्रतिहतचक्रचक्रेश्वरीप्रभृतिचतुर्विंशतिशासनदेवताः गोमुखयक्षप्रभृति-

चतुर्विंशतियक्षा आदित्यचंद्रमंगलबुधबृहस्पतिशुक्रशनिराहुकेतुप्रभृत्यष्टाशीतिग्रहाः वासुकिशंखपालकर्कोटपद्मकुलिकानंततक्षकमहापद्मजयविजयनागाः देवनागयक्षगंधर्वब्रह्मराक्षसभूतव्यंतरप्रभृतिभूताश्च सर्वेप्येते जिनशासनवत्सलाः ऋष्यार्थिकाश्रावकश्राविकायष्ट्रयाजकराजमंत्रिपुरोहितसामंतारक्षिकप्रभृतिसमस्तलोकसमूहस्य शांतिवृद्धिपुष्टितुष्टिक्षेमकल्याणस्वायुरारोग्यप्रदा भवंतु । सर्वसौख्यप्रदाश्च संतु । देशे राष्ट्रे पुरे च सर्वदैव चौरारिमारीतिदुर्भिक्षावग्रहविघ्नौघदुष्टग्रहभूतशाकिनीप्रभृत्यशेषानिष्टानि प्रलयं प्रयांतु, राजा विजयी भवतु प्रजासौख्यं भवतु, राजप्रभृतिसमस्तलोकाः सततं जिनधर्मवत्सलाः पूजादानव्रतशीलमहामहोत्सवप्रभृतिषूद्यता भवंतु, चिरकालं नंदंतु । यत्र स्थिता भव्यप्राणिनः संसारसागरं लीलयोत्तीर्यानुपमं सिद्धिसौख्यमनन्तकालमनुभवंति तच्चाशेषप्राणिगणशरणभूतं जिनशासनं नंदत्विति स्वाहा ।

फिर नीचेके श्लोक पढे व इन्द्रादि हाथ जोडे व पुष्प क्षेपण करते रहें—

ये सामग्रीविशेषद्दिमभरहत्रात्क्षिप्तदुर्वारवैरि—व्रातप्रेष्यत्पताकासततपरिचितज्ञानसाम्राज्यलीलाः ।
भूतार्थोद्भेदकंदव्यवहरणघटोद्भिद्यपृक्तौक्तियुक्ति—क्षिप्तार्थं मन्यमाना जगदतिपुनते ते जिनाः पांतु विश्वम् ॥ ४ ॥

स्फूर्जच्छलश्युदर्चिर्भरमसितदशासाकृतैनःपतंगाः, स्वांगाकाराक्षरैकक्षणस्मरनिराकारसाकारचित्काः ।
व्योम्नो विश्वैकधाम्नः कृततिलकरुचः प्रष्टमात्मंभरीणां, व्यंजंतः स्वं सदान्यज्जिनसमयजुषाः संतु सिद्धाः शिवाय ॥५॥

श्रुतधृतिवलसिद्धाः पंचधाचारमुच्चैः शिवसुखमनसो ये चारयन्तश्चरंति ।
शमरसभरसंविद्भूरयः सूरयस्ते विदधतु जिनधर्माराधनाशिष्टसिद्धिम् ॥ ६ ॥

येऽङगप्रविष्टबहिरंगजिनागमाब्धिपारंगमा निरतिचारचरित्रसाराः ।
धर्मं यथावदनुशासति शिष्यवर्गान् पुष्णंतु पाठकवृषा जगतां नमस्ते ॥ ७ ॥

बुद्ध्वा ध्यानात्परमपुरुषं तत्त्वतः श्रद्धधानाः ये विद्वांसःस्वयमुपरतप्रत्यनीकप्रतापम् ।
एकीकुर्वंत्युदयदशयानन्दनिष्पीतचिंतास्ते भव्यानां दुरितमनिशं साधवः संहरंतु ॥ ८ ॥

ये मंगललोकोत्तमशरणात्मानं समृद्धमहिमानः । पांतु जगंत्यर्हत्सिद्धसाधुकेवल्युपज्ञधर्मास्ते ॥ ९ ॥

सूते भेदाभेदरत्नत्रयात्मानाद्यंनाद्यंतार्थोदितौ भुक्तिमुक्ती ।
सोस्मिन् राजामात्यपौरादिलोकान् धर्मस्तन्वन् शर्म पायादपायात् ॥ १० ॥

शांतिः स तनुतां समस्तजगति संगत्वतां धार्मिकैः, श्रेयःश्री परिवर्द्धतां नयधुराधुर्यो धारित्रीपतिः ।
सद्विद्यारसमुद्गिरंतु कवयो नामाप्यधः स्याचु मा, प्रार्थ्यं वा कियदेक एव शिवकृद्धर्मो जयत्वर्हताम् ॥ २० ॥

फिर नीचेके श्लोक पढ़कर आचार्य इन्द्रादिके मस्तकपर पुष्प क्षेपे ।

आयुस्तन्वंतु तुष्टिं विदधतु विधुनंत्वापदो घ्नंतु विघ्नान्, कुर्वंत्वारोग्यमुर्वीवलयविलसितां कीर्तिवल्लीं सृजंतु ।
धर्मं संवर्धयंतु श्रियमभिरमयंत्वर्पयंत्विष्टकामान्, कैवल्यश्रीकटाक्षानपि जिनचरणाः संजयंतु सदा वै ॥ २५ ॥
आज्ञैश्वर्यमकार्यकार्यविचयैः संतानवृद्धिर्जयः, सौभाग्यं धनधान्यवृद्धिरभयं निःशेषशत्रुक्षयः ।
पांडित्यं कविता परार्थपरता कार्तज्ञमोजस्विता, मानित्वं विनयो जयश्च भवतादर्हत्प्रसादेन वः ॥ २६ ॥
कांताः कांतिकलानुरागमधुराः पुण्यास्त्रिवर्गोद्धुरा, भृत्याः स्वाम्यनुरक्तिशक्तिरुचिरा श्च्योतन्मदाः कुंजराः ।
वाहास्तर्जितशक्रसूर्यतुरगाः शौर्योद्धताः पत्तयो, भूयासुर्भवतां जिनेंद्रचरणांभोजप्रसादात्सदा ॥ २७ ॥
गांभीर्यमौदार्यमजर्यमार्यशौर्यं सशौंडीर्यमवार्यवीर्यम्, धैर्यं विपद्यार्जवमार्यभक्तिः संपद्यतां श्रीजिनपूजनाद्वः ॥ २८ ॥
भवतु भवतामर्हद्भक्त्या सदा मुदितं मनो, ग्रहमुपचिता चौरौचित्यं प्रदासेन परस्परः ।
प्रणयविवशैः स्वैसंवौसौदयागयमीहितं, स्थितिरपि चित्ते प्रज्ञापराधपराहतिः ॥ २९ ॥
दृक्संशुद्धिरतोन्यतोस्तु भवतामर्हत्प्रतिष्ठाविधे, जातु क्लिष्टं कथंचिदीषदपि मा शीलं व्रतं म्लायतु ।
दूरादेव शिरस्यथीरमरयो बध्नंतु देवांजलिं, प्रेम्णा सद्गुणसंपदा च सुहृदः श्लिष्यंतु पुष्णंतु च ॥ ३० ॥
यष्टॄणां याजकानां प्रतिनुतिकृतामभ्यनुज्ञायकानां, भूयस्यांतःपुरस्य क्षितिपतनुभुवां मंत्रिसेनापतीनाम् ।
सामंतानां पुरोधः पुरविषयवनादिस्थवर्णाश्रमाणां, सर्वेषामस्तु शांत्यै सततमयमिह स्थापितो विश्वनाथः ॥ ३१ ॥
विचित्रैः स्वैर्द्रव्यं प्रतिसमयमुद्यद्विपदपि, स्वरूपादुल्लोलैर्जलमिव मनागप्यविचलम् ।
अनेहो माहात्म्याहितनवनवीभावमखिलं, प्रणिण्वाः स्पष्टं युगपदिह ते पांतु जिनपाः ॥ ३२ ॥
संभुज्यार्थिभिः संविभज्य च यथाविध्येवमेवाथवा, निर्विण्णास्तृणवद्विसृज्य कमलां स्वं स्वं स्वयं केऽपि ये ।
संवेद्यामलकेवलाचलचिदानंदे सदैवासते, ते सिद्धाः प्रथयंतु वः प्रति शिवश्रीसद्विलासान् सदा ॥ ३३ ॥

ज्ञात्वा श्रद्धाय तत्त्वं भजति समरसास्वादमानान्यनीहा,-वृत्त्या प्राणानुसर्पन्मरुदनु च कचानष्टमे ब्रह्मरंध्रे ।
भ्रश्यत्यह्माय मोहो मृतिमयति मनः केवलं चापि माया,-च्छून्यध्यानेन येषां प्रमदभरमिमे योगिनस्तन्वतां नः ॥३४॥
नार्पस्यान् विस्मयांतर्हितपतनरुजो दत्तझंपान्वितन्वन्, निःश्रेणीकृत्य भोगं वलयितपृथुतन्मूलमार्द्राहितांघ्रि ।
श्रीकुंडद्रंगशृङ्गावनितरुशिखरा द्यौत्रतीर्णः स्ववर्ण,-व्यासंगं संगमस्य व्यथितबहुमहाः वीरनाथः स वोव्यात ॥ ३५ ॥

फिर आचार्य व इन्द्र आदि कायोत्सर्ग करें, ९ दफे णमोकार मंत्र पढ़े । फिर नीचे लिखी स्तुति सर्व पात्र मिलकर पढ़े । फिर सर्व सभा खड़ी होजावे तब पुष्प सबको बांट दिये जावें और यागमंडल सहित वेदीकी अथवा फेरीका स्थान न हो तो मंडपभरकी तीन प्रदक्षिणा देवें । पहले आचार्य फिर इन्द्र फिर पात्र फिर पुरुष फिर स्त्रियां रहें । शांतिपाठ पढ़ते रहें । शांतिपाठ होजावे तो दूसरे पाठ पढ़ते रहें । फिर आकर कायोत्सर्ग करें । तथा १ व २ भजन पढ़े जावें । फिर विसर्जन की जावे । इस समय बड़ा आनंद मनाया जावे । जो गंधर्वादि याचक हों उनको दान दिया जावे । व बहार भूखोंको अन्नादि बांटा जावे । प्रतिमाको मूल वेदीपर विराजमान किया जावे, यह प्रतिष्ठाविधि पूर्ण हो ।

स्तुति ।

छंद त्रिभंगी—जय जय अरहंता सिद्ध महंता आचारज उवझाय वरं, जय साधु महानं सम्यग्ज्ञानं सम्यक्चारित पालकरं ।
हैं मंगलकारी भव हरतारी पाप प्रहारी पूज्यवरं, दीनन निस्तारन सुख विस्तारन करुणाधारी ज्ञानवरं ॥ १ ॥
हम अवसर पाए पूज रचाए करी प्रतिष्ठा विम्ब महा, वहु पुण्य उपाए पाप धुवाए सुख उपजाये सार महा ।
जिन गुण कथ पाए भाव वढ़ाए दोष हटाये यश लीना, तन सफल कराया आत्म लखाया दुर्गतिकारण हर लीना ॥२॥
निज मति अनुसारं वल अनुसारं यज्ञविधान वनाया है, सब भूल चूक प्रभु क्षमा करो अब यह अरदास सुनाया है।
हम दास तिहारे नाम लेत हैं इतना भाव वढ़ाया है, सच याहीसे सब काज पूर्ण हों यह श्रद्धान जमाया है ॥ ३ ॥
तुम गुणका चिन्तन होय निरन्तर जावत मोक्ष न पद पावें, तुमरी पदपूजा करें निरंतर जावत उच्च न हो जावें ।
हम पठन तत्त्व अभ्यास रहे नित जावत वोध न सर्व लहें, शुभ सामायिक अर ध्यान आत्मका करत रहें निज तत्त्व गहें ॥
जय जय तीर्थंकर गुण रत्नाकर सम्यग्ज्ञान दिवाकर हो, जय जय गुण पूरण औगुण चूरण संशय तिमिर हरणकर हो।
जय जय भवसागर तारण कारण तुम ही भवि आलम्बन हो, जय जय कृतकृत्यं नमें तुम्हें नित तुम सव संकट टारन हो॥५॥

अध्याय दशवां ।

आचार्यादि प्रतिबिम्ब प्रतिष्ठाविधि ।

सिद्ध प्रतिबिम्ब–अर्हंत और सिद्धके बिम्बमें इतना ही अंतर होता है कि अर्हंतके आठ प्रातिहार्य होते है जब कि सिद्धके नहीं होते। हमारी रायमे अरहंत और सिद्धकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठामें कोई अन्तर नहीं है क्योंकि अरहंतके बिम्बमे हम पांचों कल्याणकोंका आरोप कर देते हैं। अन्य आचार्यादिकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठामें अतर होना ही चाहिये क्योंकि इनके कल्याणक नहीं होते हैं।

(१) आचार्य प्रतिबिम्ब प्रतिष्ठाविधि–पीछी कमंडलके चिह्न सहित आचार्यकी मूर्ति होती है। आसन पद्मासन या खड्गासन ही मुख्य है, नग्नता होती है, आचार्यकी प्रतिष्ठामें १०००० मंत्रकी जाप देवें। जैसे तीर्थंकरकी मूर्तिमें १ लाखकी दी थी, मत्र वही है। पहले मंडप बनाकर यागमंडलका मांडला बनावे उसमें पहले अध्यायके अनुसार मध्यमें ॐ लिखे उसके चारों तरफ १७ खानेका वलय करे फिर दूसरा वलय ३६ कोठोंका हो जिसमें आचार्यके छत्तीस गुण लिखे जांय। फिर तीसरा वलय ४८ कोठोंका हो जिसमें ऋद्धियें लिखी जांय। इसतरह तीन वलयका मंडल बनाकर जो पूजा दूसरे अध्यायमें लिखी है उसको उसी विधिसे इन्द्र व आचार्य करे। अंगशुद्धि, न्यास व सकलीकरणविधि पहलेके अनुसार की जाय फिर पूजामें अर्घ १७+३६+४८=१०१ इतने चढ़ें श्लोक व छंद वे ही हैं। पूजाके पहले पूज्य प्रतिमा अर्हंतका अभिषेक पहलेके समान करे फिर तीनों कुंडोंमें होम किया जावे। होममें सत्यजाताय नमः आदि मत्रोंके सिवाय १०८ आहुति उसी मंत्रकी देवें जो वहां लिखा है। फिर स्तुति पढ़ी जाय व मंडलकी पूजा की जावे। पूजाके पीछे आचार्यभक्ति, अर्हंतभक्ति, सिद्धभक्ति व चारित्रभक्ति पढ़े। फिर दूसरे दिन या उसी दिन मंडपमें पहली विधिके अनुसार अंगशुद्धि, अभिषेक, नित्यपूजा व होम करके आचार्यके बिम्बकी प्रतिष्ठाका प्रारंभ करे। यदि उसी दिन प्रतिष्ठा करनी हो तो फिर होम करनेकी जरूरत नहीं है। आचार्यके बिम्बको अभिषेक करनेकी पीठपर विराजमान करे। फिर इन्द्र शुद्ध जलसे स्नान करावे। पीछे पांच आचारके रूपमें पांच कलशोंसे जिनमें केशरादि द्रव्य बहुत मिला हो सर्वौषधिके रूपमें उनसे स्नान करावे। फिर प्रतिमाको पोंछकर पांचवें अध्यायमें कहे प्रमाण मातृकामंत्रको १०८ वार जपकर प्रतिमाके अंगपर सोनेकी सलाईसे लिखे। ३८ नं० तक लिखा जावे फिर महर्षि उपासना की जाय।

ये येऽनगारा ऋषयो यतीन्द्रा मुनीश्वरा भव्यभवदूव्यतीताः । तेषां समेषां पदपंकजानि संपूजयामो गुणशीलसिद्धयै ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रपवित्रतरगात्रचतुरशीतिलक्षगुणगणधरचरणा आगच्छत २ संवौषट् । ॐ ह्रीं सम्यग्० अत्र तिष्ठत २ ठः ठः । ॐ ह्रीं सम्यग्० मम रत्नत्रयशुद्धिं कुरुत २ अत्र मम संनिहिता भवत २ वषट् । अथाष्टकम् ।

सुगंधिशीतलैः स्वच्छैः स्वादुभिर्विमलैर्जलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं गणधरचरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सारकर्पूरकाश्मीरकलितैश्चंदनद्रवैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं गंधम् ॥

अक्षतैरक्षतैः सूक्ष्मैर्वलक्षैर्ऋक्षसंनिभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं अक्षतान् ॥

पुष्पैः प्रसरदामोदाहतपुष्पंधयावृतैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं पुष्पाणि ॥

हव्यैर्नव्यघृतापूपपायसव्यंजनान्वितैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं चरुं ॥

कर्पूरप्रभवैर्दीपैर्दीप्त्या दीपितदिङ्मुखैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं दीपं ॥

दशांगधूपसद्धूमैर्दशाशापूर्णसौरभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं धूपं ॥

चोचमोचाम्रजंवीरफलपूंगादिसत्फलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं फलं ॥

गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैकबन्धून् । प्रकटितनिजमार्गान्ध्वस्तमिथ्यात्वमार्गान् ॥
परिचितनिजतत्वान्पालिताशेषसत्वान् । शमरसजितचन्द्रानर्घ्ययामो मुनींद्रान् ॥ ॐ ह्रीं अर्घं ॥

स्तुति ।

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेन्द्राः सप्तर्द्धयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः । तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां वचोमनोमूर्धसु धारयामः ॥ १ ॥

तपोबलाक्षीणरसौषधर्द्धीन् विज्ञानऋद्धीनपि विक्रियर्द्धीन् । सप्तर्द्धियुक्तानखिलानृषीन्द्रान्स्मरामि वंदे प्रणमामि नित्यम् ॥२॥

सर्वेषु तीर्थेषु तदन्तरेषु सप्तर्षयो ये महिता बभूवुः । भवांबुधेः पारमिताः कृतार्था भवन्तु नस्ते मुनयः प्रसन्नाः ॥ ३ ॥

ये केवलीन्द्राः श्रुतकेवलीन्द्रा ये शिक्षकास्तुर्यतृतीयबोधाः । सविक्रिया ये वरवादिनश्च सप्तर्षिसंज्ञानिह तान्प्रवंदे ॥ ४ ॥

त्तमुख्येषु पदेषु सार्धद्वीपद्वये ये युगपद्भवन्ति । उत्कर्षतस्तान्नवकोटिसंख्यान्वंदे त्रिसंख्यारहितान्मुनीन्द्रान् ॥ ५ ॥

फिर प्रतिमाको स्पर्श करके पुष्पांजलि देवे और पंच आचार प्रतिमामें स्थापित करे, नीचे प्रमाण मंत्र पढ़कर प्रतिमापर पुष्प क्षेपे—

ॐ ह्रूं दर्शनाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः। ॐ ह्रूं ज्ञानाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः। ॐ ह्रूं चारित्राचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः। ॐ ह्रूं तपाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः। ॐ ह्रूं वीर्याचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः।

फिर नीचेलिखा मंत्र पढ़कर प्रतिमापर पुष्प क्षेपे—

ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र एहि संवौषट्, ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं मम सन्निहितो भव भव वषट्। फिर १०८ दफे नीचे लिखा मंत्र पढ़े—

ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं धर्माचार्याधिपतये नमः। फिर सुगंधित केशरसे सोनेकी सलाईसे नाभिमें ह्रूं लिखे। यह तिलकदान विधि हुई। फिर अधिवासनाविधिमें नीचे प्रमाण अष्टद्रव्य चढावे। ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्यपरमेष्ठिन् जलं ग्रहाण २ नमः। इसी तरह जलके स्थानमें चंदनादि चढ़ावे। फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ मुखपर वस्त्र ढकें व परदा करदें। ॐ ह्रूं मुखवस्त्रं दधामि स्वाहा। फिर आचार्य नग्न होकर चारित्रभक्ति पढकर नीचे लिखा मंत्र १०८ दफे पढ़कर मुखसे कपड़ा अलग करे।

ॐ ह्रूं आचार्यमुखवस्त्रं अपनयामि स्वाहा। फिर १०८ दफे नीचे लिखा मंत्र पढ़ सोनेकी सलाई आंखोंमें फेरे।

"ॐ ह्रूं आचार्यप्रबुद्धस्वध्यातृजनमनांसि पुनीहि २ स्वाहा।" तब परदा हट जावे और सब कहें—श्री आचार्यपरमेष्ठीकी जय। फिर आचार्यकी पूजा नीचे प्रमाण की जावे—

गीताछंद—मुनिराज आचारज बड़े शिव मार्गको दर्शावते, जो पालते आचारको अर अन्यको पलवावते।
जो जैन आगम तत्त्व जाने स्व पर भेद लखावने, निज आतमें रमते सदा निज ध्यान सम्यक् भावते ॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र अवतर २ आदि स्थापना।

स्थापना-अष्टक।

चाली छंद—भर सलिल महा शुचि झारी, दै तीन धार हितकारी। पद आचारज सुखकारी, पूजत त्रय रोग निवारी ॥जलं॥
चन्दन घस केसर लाऊँ, मनमें बहु चाव धराऊँ। आचारज हैं गुणदाई, पूजत भव ताप मिटाई ॥ चन्दनं ॥
अक्षत ले दीर्घ अखंडे, उज्वल शशि समदुति मंडे। गुरु पाद जजों मन लाई, अक्षयपद हो सुखदाई ॥अक्षतं॥

ले फूल सुवर्ण सुहाई, बहु गंध युतं सुखदाई । गुरु पूज काम दुखदाई, भयभीत होय नश जाई ॥ पुष्पं ॥
ताजे पकवान बनाऊँ, आदर युत गुरु ढिग लाऊँ । पूजत क्षुद रोग शमाऊं, अमृत निज ले सुख पाऊं ॥नैवेद्यं॥
ले दीपक तम हरतारा, बहु ज्योति प्रगट करतारा । गुरु पाद पूज सुख पाऊं, भ्रम तम सब तुर्त नशाऊं ॥दीपं॥
बहु धूप सुगंधित लाऊँ, धूपायन माहिं खिवाऊं । आचारज जज हितकारी, जल जांय कर्म दुखकारी ॥ धूपं ॥
बहु दाख बदाम छुहारा, पिस्ता अखरोट सम्हारा । गुरु पाद जजे हित पावे, शिव वनिताको परणावे ॥ फलं ॥
शुचि द्रव्य जु आठ मिलाऊं, करि अर्घ महा सुख पाऊं । गुरु चरणन शीश नवाऊँ, जासे सब दोष मिटाऊं ॥अर्घं॥

जयमाल ।

छंद स्रग्विणी—जय कृपाकंद आनंदरूपी सदा। आत्म गुण वेदते है न तृष्णा कदा॥ धन्य आचार्य हैं साधु रक्षा करें। बोध दे दंड दे तत्त्व शिक्षा करें॥ १॥ सात तत्त्वार्थको श्रद्धते भावसे। तत्त्व शुद्धात्मको चाहते चावसे॥ दर्शनाचारमें लीन सुख पावते। अन्यको बोध दे दर्श झलकावते॥२॥ शास्त्रको जानते ज्ञान उपजावते। सप्तभंगी सुनय तत्त्वको साधते॥ मोह मिथ्यात्वके हेतुको टालते। बोध दे ज्ञानको लोक विस्तारते॥ ३॥ व्रत महा पालते गुप्ति उर धारते। पंच समिती-नको ध्यानसे पालते॥ आत्ममें लीन हो ध्यान दृढ़ धारते। सत्य आचारको लोक विस्तारसे॥४॥ तप महा द्वादशं पालते भावसे। अनशन आदिको धारते चावसे॥ सेव कर साधुजन मानको टालते। भव्यको मार्ग तपमें सदा लावते॥ ५॥ वीर्यको गुप्त रखते नहीं हैं यती। कार्य उत्साहसे चूकते नहीं रती॥ आत्मशक्तिको दिन दिन अधिक पावते। अन्यको बोध दे वीर्य विस्तारते॥ ६॥ पंच आचार ये पालते भावसे। अन्य साधूनको बोधते चावसे॥ निश्चयं आत्मरस पीवते प्रेमसे। धन्य आचार्य हैं चालते नेमसे॥ ७॥ महार्घं० ।

दोहा—जो पूजे आचार्यको, मन एकाग्र कराय। सो पावे निज निधि सही, भव–सागर तर जाय॥ इत्याशीर्वादः ।

फिर आचार्यभक्ति या चारित्रभक्ति पढ़के नीचेका श्लोक पढ़कर चहुंओर पुष्प क्षेपे—

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां जायतां दीर्घमायु-र्भूयाद्भुर्यांश्च भोगः स्वजनपरिजनैस्तात्सदा रोग्यमग्र्यम्।
कीर्तिर्व्याप्ताखिलाशा प्रभवतु भवतान्निःप्रतीपः प्रतापः, क्षिप्रं स्वर्मोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां धर्मसूरिप्रसादात्॥

फिर शांतिपाठ विसर्जन करके आचार्यकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा पूर्ण की जाय।

(२) उपाध्याय बिम्बप्रतिष्ठाविधि—उपाध्यायका बिम्ब भी मुनिके समान पीछी कमण्डल सहित हो तथा हाथमें या अग्रभागमें शास्त्र चिन्ह सहित भी होसक्ता है। इसकी भी सब विधि आचार्यबिम्बकी प्रतिष्ठा विधिके समान है। अंतर नीचे प्रमाण है—

(१) मण्डलमें १७ कोठेका पहला वलय फिर २९ कोठोंका फिर ४८ कोठोंका हों।

(२) उपाध्यायके बिम्बको पांच कलशोंके स्थानमें प्रथमानुयोग आदि ४ अनुयोगके रूपमें चार कलशोंसे अभिषेक करे।

(३) पंच आचारके स्थानमें चार अनुयोग प्रतिमामें नीचेके मंत्रोंसे स्थापित करे—ॐ ह्रौं प्रथमानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः। ॐ ह्रौं करणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः। ॐ ह्रौं चरणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः। ॐ ह्रौं द्रव्यानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः।

(४) तिलकदानमें आह्वानन मत्र नीचे प्रमाण पढ़े—ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्यायपरमेष्ठिन् अत्र एहि २ संवौषट्। ॐ ह्रौं णमो० अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ॐ ह्रौं णमो० ममसन्निहितो भव २ वषट्। तथा जाप १०८ दफे नीचे लिखे मंत्रकी देवे—ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं पाठकाय नमः। तथा नाभिमें ह्रौं लिखे।

(५) अधिवासनाविधिमें नीचेके मत्रसे आठ द्रव्य चढ़ावे। ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्यायपरमेष्ठिन् जलं गृहाण२ नमः इत्यादि।

(६) मुखको ढकनेका नीचेका मंत्र पढ़े—ॐ ह्रौं मुखवस्त्रं दधामि स्वाहा।

(७) मुखके उद्घाटनमें यह मत्र पढे—ॐ ह्रौं उपाध्यायमुखवस्त्रं अपनयामि स्वाहा।

(८) नयनोन्मीलन मंत्र यह पढे—ॐ ह्रौं उपाध्यायप्रबुद्धस्व व्यातृजनमनांसि पुनीहि २ स्वाहा।

(९) पूजा नीचे प्रमाण की जावे—

स्थापना।

मुनिराज पाठक तत्त्वज्ञानी तत्त्व शिक्षा देत हैं। बहु शिष्य पढ़त जिनागमं अज्ञान तिनहर लेत हैं॥
अनुयोग चारों जानते अध्यात्म विद्या नाथ हैं। चारित्र साधु सुपालते बहु साधु रहते साथ हैं॥
ॐ ह्रौ श्री उपाध्यायपरमेष्ठिन् अत्र अवतर २ अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टक ।

छन्द मालीनी–सम रस सम चोखा लाय पानी सुसारं । सुवरण झारी ले भव गदं सर्व टारं ॥

कर शुचि मन पूजूं पाठकं तत्त्व धारी । नसन सव कुवोधं होय आनन्द भारी ॥ जलं ॥

वहु सुरभि धराई चंदनं लाय नीके । भव ताप बुझाई अमृतं शांत पीके ॥

कर शुचि मन पूजूं पाठकं तत्त्वधारी । नशत सव कुबोधं होय आनन्द भारी ॥ चंदनं ॥

करमें अक्षत ले दीर्घ अति श्वेतवर्ण । अखय गुण प्रचारी सर्व संदेह हर्ण ॥ कर शुचि मन० अक्षतं ॥

सुमन सुगंधित ले पंचधा वर्णधारी । दुख काम मिटावे शील धर्म प्रचारी ॥ कर शुचि० ॥ पुष्पं ॥

चरु करके ताजे, शुद्ध मुनि अग्र धारूं । क्षुद रोग नशाऊं, तृप्तता गुण सम्हारूं ॥ कर शुचि० ॥ चरुं ॥

कर दीप संजोऊं, अंधकारं नशाई । मम मोहतिमिर सव एक क्षणमें पलाई ॥ कर शुचि० ॥ दीपं ॥

वहु सुरभि धराई, धूप अग्नी जलाई । मम आठ करम सव, भस्म हों साधु ध्याई ॥ कर शुचि० ॥ धूपं ॥

ले शुचि फल नीके, दाख वादाम पिस्ता । जासे शिवफल हो, नाश संसार रस्ता ॥ कर शुचि० ॥ फलं ॥

ले ले अठ द्रव्यं, शुद्ध अर्घ वनाऊं । अठ कर्म नशाके, अष्ट गुण सार पाऊं ॥ कर शुचि० ॥ अर्घं ॥

जयमाल ।

भुजंगप्रयात छन्द–गुणानन्दधारी उपाध्याय प्यारे, स साधू चरित्रं धरे निर्विकारे । परम साम्य धारी सभी दोष टारी, रतनत्रय सम्हारी निजातम विचारी ॥ १ ॥ इकादश सु अंग पढ़े तत्त्व जाने, चतुर्दश सु पुरव लखें सत पिछाने । सकल श्रुत विचारें परम ज्ञान धारी, लखे आतमको निश्चयं निर्विकारी ॥२॥ चतुर्वीश तीर्थंकरोंके चरित्रं, सुचक्री सु बलदेव जीवन पवित्रं । हरी प्रतिहरी वृत्तको जानते हैं, सु अनुयोग प्रथमं जु पहचानते हैं ॥३॥ त्रिलोकं लखें सर्व रचना पिछाने, गुणस्थान मार्गण करम भेद जाने । करण सूत्रसे सर्व गिनती लखाने, सु अनुयोग करणं भलीभांति माने ॥ ४ ॥ यतीका सु आचार सब भेद पाया, गृही भेद चारित इकादश वताया । क्रिया–काण्ड व्यवहारको जानते हैं, सु चरणानुयोगं सकल मानते हैं ॥ ५ ॥ पदारथ नवम तत्त्व शुभ सात ज्ञानी, छहों द्रव्य पंचास्तिकाया पिछानी । भलीभांति आतम परम तत्त्व माने, सु

द्रव्यानुयोगं सकल भेद जाने ॥६॥ अनेकांत वस्तु सु स्याद्वाद ठाने, तिसे जान समता हृदय माहिं आने । नहीं है विरोधं नहीं कोई खेदं, परम तत्त्व जाने लखें सर्व भेदं ॥७॥ दयासागरं पाठकं भक्ति करनी, पढ़ावैं यती सीख संसार तरणी । नहीं खेद माने परम हर्ष ठाने, सकल ज्ञान दे आप सम साधु आने ॥ ८ ॥ नमूं पाद सुखदाय उवज्झायजीके, लहूं ज्ञान सुन्दर करूं कर्म फीके । सु छाया गुरूकी परम रक्षिका है, जजूं मन लगाई परम दक्षिका है ॥ ९ ॥ महार्घ ॥

सोरठा—पाठक पूजूं पाय, पाठ पठन पटुता करै । गुण गाऊं नित गाय, मंगल हो अघ सब भगै ॥

(१०) फिर चारित्रभक्ति पढ़के नीचेका श्लोक पढ़े ।

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां जायतां दीर्घमायु–र्भूयाद्भूयांश्च भोगः स्वजनपरिजनैस्तात्सदारोग्यमग्र्यम् ॥
कीर्तिर्व्याप्ताखिलाशा प्रभवतु भवतान्निःप्रतीपः प्रतापः । क्षिप्रं स्वर्मोक्षलक्ष्मीर्भवतुतनुभृतां पाठकेंद्रप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विसर्जन करके उपाध्याय बिम्बकी प्रतिष्ठा पूर्ण करे ।

(३) साधुबिम्बप्रतिष्ठाविधि—पीछी कमंडल सहित ध्यानमय साधुकी बिम्ब बनावे । इसकी प्रतिष्ठाविधि भी पहलेके समान है । विशेष यह है—

(१) मण्डलमें १७ कोठेका पहला फिर २८ कोठेका फिर ४८ कोठोंका हो । (२) साधुके बिम्बको रत्नत्रयमई तीन कुम्भोंसे अभिषेक किया जावे । (३) तीन रत्न नीचेके मन्त्रोंसे प्रतिमामें स्थापित करे । ॐ ह्रः सम्यग्दर्शनभूषिताय साधवे नमः । ॐ ह्रः सम्यग्ज्ञानभूषिताय साधवे नमः । ॐ ह्रः सम्यग्चारित्रभूषिताय साधवे नमः । (४) तिलकदानमें आह्वानन मंत्र नीचे प्रमाण पढ़े । ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधुपरमेष्ठिन् अत्र एहि२ संवौषट् इत्यादि तथा जाप १०८ दफे नीचेके मंत्रसे देवे । ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधवे नमः तथा नाभिमें ह्रः लिखे । (५) अधिवासना विधिमें नीचेके मन्त्रसे आठ द्रव्य चढ़ावे । ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधुपरमेष्ठिन् जलं गृहाण २ स्वाहा इत्यादि । (६) मुखके ढकनेका नीचे लिखा मंत्र पढ़े—ॐ ह्रः मुखवस्त्रं दधामि स्वाहा। (७) मुखके उदघाटनमें यह मन्त्र पढ़े—ॐ ह्रः साधुपरमेष्ठिन् मुखवस्त्रं अपनयामि स्वाहा। (८) नयनोन्मीलन मंत्र यह पढ़े—ॐ ह्रः साधु-प्रबुद्धस्व ध्यानृजनमनांसि पुनीहि २ स्वाहा । (९) पूजा नीचे प्रमाण करे—

स्थापना।

छंद गीता—मुनिराज हैं गुणधाम जगमें मोक्षमारग साधते, त्रय रत्नधारी निज विचारी ज्ञान आसन मांडते।
तप करन द्वादश भेद अनुपम सहत हैं उपसर्गको, जिनचरण पूजूं थाप उरमें लहूं मैं अपवर्गको॥
ॐ ह्रः श्री साधुपरमेष्ठिन् अत्र०

अष्टक।

वसंततिलका छंद—पानी महान अति शीतल कुंभ धारा। धारा सुदेत मृत जन्म जरा निवारा॥
पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीने। पाऊं निजातम सुखदा वसुकर्म हीने॥ जलं॥
केशर मिलाय शुभ चन्दन अग्र धारूं। आताप भव शमन थाय स्वगुण सम्हारूं॥ पूजूं०॥चदनं॥
चन्द्रा समान अति श्वेत सुगंध अक्षत। धारूं सुथाल पाऊं गुण सार अक्षत॥ पूजूं०॥ अक्षतं॥
नीरज गुलाब वेल चंपा सुहाई। वहु पुष्प धार निज काम व्यथा नशाई॥ पूजूं०॥ पुष्पं॥
ताजे पवित्र पकवान सु लाय थारी। जासे मिटाय क्षुद रोग स्वकाज हारी॥ पूजूं०॥ नैवेद्यं॥
दीपक जराय घृत सार कपूर लाऊं। मम मोह सर्व अंधियार तुरत मिटाऊं॥ पूजूं०॥ दीपं॥
धूपादि खेय शुचि अग्नि धुआं प्रसारा। आठों महान मल कर्म जलाय डारा॥ पूजूं०॥ धूपं॥
पिस्ता बदाम अखरोट सुफल धराए। जासे सुमोक्ष फल आप नजीक आए॥ पूजूं०॥ फलं॥
जल चन्दनादि वसु द्रव्य मिलाय थारी। संसार पार झट होय स्वगुण विचारी॥ पूजूं०॥ अर्घं॥

जयमाल।

त्रोटकछंद—जय साधु सदा गुण वास नमो, अनगार सु सस सुवास नमो। भवसागर तारण पोत नमो, निजमें धारत निज जोत नमो॥१॥ जय सप्त तत्त्व रुचिकार नमो, आपा पर भेद विचार नमो। निज आतम सुश्रद्धाकार नमो, सम्यग्दर्शन अधिकार नमो॥२॥ जय जिन आगम बुध धार नमो, ज्ञायक निश्चय व्यवहार नमो। निज आतम पदारथ ज्ञान नमो, धारें नित सम्यग्ज्ञान नमो॥३॥ जय पंच महाव्रत धार नमो, समिती गुप्ती प्रतिपाल नमो। निज साम्य भाव झलकाय नमो, सम्यक्चारित्र उर ध्याय नमो॥ ४॥ जय आत्म समाधि प्रकाश नमो, सब इंद्रिय आश निराश नमो। चहुं दुष्ट कषाय

विनाश नमो, निज शांत भाव हुल्लाश नमो ॥ ५ ॥ जय साधु सु साधत आत्म बली, जय साधु सु अनुभव सार रली । जय साधु परम उपकारी हैं, संयम सामायिक धारी हैं ॥ ६ ॥ महार्घं ॥

दोहा-वंदत साधु महंतको, पूजत गुण अविकार । निजानन्द पावे सुधी, खुलजावे शिवद्वार ॥ इत्याशीर्वादः ॥

(१०) फिर चारित्रभक्ति पढ़के नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां जायतां दीर्घमायु-र्भूयाद्भूयांश्च भोगैः स्वजनपरिजनैस्तात्सदा रोग्यमग्र्यम् ।
कीर्तिर्व्याप्ताखिलाशा प्रभवतु भवतान्निःप्रतीपः प्रतापः, क्षिप्रं स्वर्मोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां सर्वसाधुप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विसर्जन करके साधुविम्बकी प्रतिष्ठा पूर्ण करे ।

(४) श्रुतस्कंध प्रतिष्ठाविधि—द्वादशांगवाणीका एक पट धातुका बनवाया जाता है जैसा बहुधा दक्षिणमें मिलता है व सिद्धांत भवन—आरामें विद्यमान है । उसकी प्रतिष्ठाकी विधि नीचे प्रकार है—

(१) इसमें भी यागमंडलकी पूजा की जाय । बीचमें ॐ बनाकर पहला वलय १७ कोठोंका बनावे फिर ११ अंग—१४ पूर्व अर्थात् २५ कोठोंका बनावे और पहलेकी भांति पूजा करे । जो विधि आचार्यके बिम्बकी प्रतिष्ठामें है सो करे ।

(२) इस जिनवाणीकी मूर्तिको चार अनुयोगरूप चार कलशोंमें स्नान करावे तब कहे—

"ॐ ह्रीं श्रुतदेव्याः कलशस्नपनं करोमि इति स्वाहा ।"

(३) फिर नीचेकी स्तुति पढ़े और मूर्तिपर पुष्प क्षेपे—

निर्मूलमोहतिमिरक्षपणैकदक्षं, न्यक्षेण सर्वजगदुज्ज्वलैनकतानम् ।
सोपेस्व चिन्मयमहो जिनवाणि नूनं, प्राचीमतो जयसि देवि तदल्पसूतिम् ॥

आभवादपि दुरासदमेव श्रायसं सुखमनन्तमचिंत्यम् । जायतेद्य सुलभं खलु पुंसां त्वत्प्रसादात् इहांब नमस्ते ॥
चेतश्चमत्कारकरा जनानां, महोदयाश्चाभ्युदयाः समस्ताः । हस्ते कृताः शस्तजनैः प्रसादात् तवैव लोकांब नमोस्तु तुभ्यम् ॥

सकलयुवतिसृष्टेरंबचूडामणिस्त्वं, त्वमसि गुणसुपुष्टेर्धर्मसृष्टेश्च मूलम् ।
त्वमसि च जिनवाणि स्वेष्टमुक्त्संगमुख्या, तदिह तव पदाब्जं भूरिभक्त्या नमामः ॥

(४) फिर नीचे लिखी स्तुति पढ़े—

बारह अंगंगिज्जा दंसणतिलया चरित्तवत्थहरा। चोदसपुव्वाहरणा ठावे दव्वाय सुयदेवी ॥ १ ॥
आचारशिरसं सूत्रकृतवक्त्रां सुकंठिकाम्। स्थानेन समवायांगव्याख्याप्रज्ञप्तिदोर्लताम् ॥ २ ॥
वाग्देवतां ज्ञातृकथोपासकाध्ययनस्तनीम्। अंतकृद्दशसन्नाभिमनुत्तरदशांगनः ॥ ३ ॥
मुनितंबां सुजघनां प्रश्नव्याकरणश्रुतात्। विपाकसूत्रदृग्वादचरणां चरणांबराम् ॥ ४ ॥
सम्यक्त्वतिलकां पूर्वचतुर्दशाभिभूषणाम्। तावत्प्रकीर्णकोदीर्ण-चारुपत्रांकुराश्रियम् ॥ ५ ॥
आप्तदृष्टप्रवाहौघद्रव्यभावाधिदेवताम्। परब्रह्मपथादृप्तां स्यादुक्तिं भुक्तिमुक्तिदाम् ॥ ६ ॥
सर्वदर्शनपाखंडदेवदैत्यखगार्चिताम्। जगन्मातरमुद्धर्तुं जगदत्रावतारयेत् ॥ ७ ॥

(५) फिर नीचे लिखे मंत्रको १०८ वार पढकर प्रतिमाको स्पर्श करे।

ॐ अर्हन्मुखकमलवासिनी पापांधकारक्षयकारिणी श्रुतज्वालासहस्रप्रज्वलिते सरस्वति मम पापं हन हन क्षां क्षीं क्षूं क्षौ क्षः क्षीरधवले अमृतसंभवे व व मं मं ह स्वाहा।

(६) फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़कर प्रतिमापर पुष्प क्षेपे।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलवासिनी पापांधकारक्षयकारिणी श्रुतज्वालासहस्रप्रज्वलिते सरस्वति अत्र एहि २ संवौषट्। ॐ ह्रीं अर्हन्मुख० अत्र तिष्ठ २ ठः ठः। ॐ ह्रीं अर्हन्मुख० मम सन्निहिता भव भव वषट्।

(७) फिर १०८ दफे नीचेका मंत्र पढ़े—ॐ ह्रीं सरस्वतीदेव्यै नमः। तथा उस बिम्बके मध्यमें ह्रीं लिखें। यह तिलकदान विधि हुई।

(८) फिर अधिवासना विधिमें नीचेके मंत्रोंसे आठ द्रव्य चढ़ावे—

ॐ ह्रीं श्रीं वद वद वाग्वादिनि भगवति सरस्वति जलं गृहाण २ स्वाहा। इत्यादि।

(९) फिर नीचेका मंत्र पढ़ वस्त्रसे ढके व परदा करे। ॐ ह्रीं मुखवस्त्रं दधामि स्वाहा। (१०) फिर आचार्य नग्न हो श्रुतभक्ति पढ़े व नीचे लिखा मंत्र १०८ दफे पढ़ मुखसे कपड़ा अलग करे। ॐ ह्रीं भगवति सरस्वति मुखवस्त्रं अपनयामि स्वाहा। फिर नीचे लिखा मंत्र १०८ वार पढ़कर सोनेकी सलाई उस बिम्बपर फेरे यह नयनोन्मीलन क्रिया है। ॐ ह्रीं श्रुतदेवि प्रबुद्धस्व व्यात् जन मनांसि

पुनीहि २ स्वाहा । तब परदा हटे व जयजयकार शब्द हो । (११) फिर पूजा नीचे प्रकार की जावे—

स्थापना ।

गीता—श्री जिन विनिर्गत वाणि अनुपम परम तत्त्व प्रकाशनी । मिथ्यात मल धोकर सु भविजन चित्त उज्वल कारिणी ॥
संसार ताप प्रशांत कारण चन्द्र कर सुख दायनी । आनन्द अमृत दाय वाणी पूजहूं अघ नाशनी ॥

ॐ ह्रीं वाग्वादिनि भगवतिसरस्वति अत्र अवतर २ इत्यादि ।

अष्टक ।

छंद नाराच—महान गंध धार नीर लाइये सु प्रेमसों । अनादि जन्म व्याधि भेट दीजिये सुनेमसों ॥
सरस्वती महान देवि पूजिये सु भावसे । हटे कुबोध तम अपार ज्ञान होय चावसे ॥ जलं ॥
परम सुगन्ध चन्दनं मिलाय शुद्ध केशरं । मिटाय ताप संसृती सुपाय शांतता वरं ॥ सरस्वती० ॥चंदनं॥
लहे अखंड अक्षतं सफेद शुद्ध थालमें । करे प्रकाश अक्षतं गुणं निजात्म हालमें ॥ सरस्वती० ॥अक्षतं॥
गुलाब कुंज चंपकं सुवर्ण फूल लाइये । महा कठोर काम बाण टाल शील पाइये ॥ सरस्वती० ॥ पुष्पं॥
बनाय शुद्ध अन्न तुर्त मिष्टता मिलायके । क्षुधा कुरोग नाश होय भावना सु भायके ॥ सरस्वती० ॥ चरुं॥
कपूरको जलाय स्वर्ण दीपदान मैं धरूं । मिटाय मोह अंधकार ज्ञान दीप प्रज्वलूं ॥ सरस्वती० ॥ दीपं ॥
मंगाय धूप गंधकार धूपदान मैं दिया । निजाठ कर्म काठ जाल धूमको उड़ा दिया॥ सरस्वती० ॥ धूपं ॥
सुगंध मिष्ट आम्र आदि फल महान धारके। महान मोक्ष लाभ काज भावको सम्हारके ॥सरस्वती०॥ फलं ॥
सुधीर गंध अक्षतं सुपुष्प चारु चरु लिये । सुदीप धूप फल मंगाय अर्घ शुद्ध यों किये ॥सरस्वती०॥ अर्घ ॥

जयमाल ।

छन्द मुक्तादास—नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु हमेश, श्रीजिन वाणी स्वत् स्वादेश । श्री सर्वज्ञ विगत सब दोष, कहें परकाश भविक जन तोष ॥ १ ॥ तिसे धारें गणधर मुनिराज, सु बारह अंग रचें भवि काज । पढ़े आचारज शिष्य समाज, रचें बहु ग्रंथ सु आतम काज ॥२॥ यही श्रुतज्ञान हरे अज्ञान, दिखावे तत्त्व स्वपर पहचान । लखावे वस्तु स्वरूप अपार, मिटै संशय संमोह असार ॥३॥ जुहै स्याद्वाद परम हितकार, विरोध मिटाय जु ऐक्य प्रचार । यही दर्पणसम तत्त्व प्रसार, यही

समता प्रगटावन हार ॥४॥ सही जिनधर्म सु आतम रूप, यही रत्नत्रय ध्यान स्वरूप। यही भवसागर तारण सेतु, यही सुखसागर वर्द्धन हेतु ॥ ५ ॥ इसे समझावे यह जिनवाणि, मिटावे दोष परम गुण दानि। सरस्वति मात नमूं मैं तोहि। करहु किरपा जो आनन्द होहि ॥ ६ ॥ महार्घं ॥

दोहा—श्री जिन मात प्रसादसे, सुधरे हम सब कार्य। वंदूं पुन पुन मातको, दीजे हमें स्वराज ॥ इत्याशीर्वादः ॥

फिर श्रुतभक्ति पढ़े और नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां जायतां दीर्घमायु—र्भूयाद्भुयांश्च भोगः स्वजनपरिजनैस्तात्सदा रोग्यमग्र्यम्।
कीर्तिर्व्याप्ताखिलाशा प्रभवतु भवतान्निःप्रतीपः प्रतापः, क्षिप्रं स्वर्मोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां जिनदेवतायाः प्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विसर्जन किया जावे।

(१) श्री चरणपादुका प्रतिष्ठाविधि—जहां२ तीर्थंकरोंके कल्याणक होते हैं वहां२ चरणचिह्न स्थापित किये जाते हैं, इनकी प्रतिष्ठाविधिमें इन्द्र अंगशुद्धि आदि करके पूर्ववत् १७ कोठोंकी पूजा प्रथम वलय अनुसार व नित्य पूजा तथा एक या तीन कुण्डमें होम करके करे, मण्डल बनावे या योंही करे। फिर जिस तीर्थंकरकी चरणपादुका हो उनका पूजन किया जावे। पूजनके पहले चरणपादुकाका अभिषेक करे। फिर नीचे लिखे मंत्रको १०८ वार जपे—ॐ ह्रीं अस्मिन् क्षेत्रे जन्मस्थानस्थापनां करोमि स्वाहा या तपस्थान या ज्ञानस्थान या निर्वाणस्थान स्थापनां करोमि स्वाहा। फिर चरणचिन्हमें ॐ ह्रं लिखे। यह तिलकदान विधि है। पश्चात सिद्धभक्ति, निर्वाणभक्ति, आचार्य भक्ति, आदि भक्ति यथायोग्य पढ़े, स्तुति पाठ पढ़े, शांति विसर्जन करे। यदि आचार्य, उपाध्याय या साधुकी पादुका हो तो उसकी प्रतिष्ठा उनहीके बिम्बके अनुसार करे, जैसा पहले कह चुके हैं।

अध्याय ग्यारहवाँ।

मंदिर या वेदीप्रातिष्ठाविधि।

मंदिर व वेदी निर्माण होनेपर उसकी प्रतिष्ठा या शुद्धि नीचेप्रकार करनी योग्य है—शुभ मुहूर्तमें अलग मण्डप बनाकर ढाई द्वीप व २४ तीर्थंकर व समवशरणका कोई पाठ किया जावे। माण्डला बना लिया जावे। यदि बहुत संक्षेप करना हो तो विना माण्डला

बनाएं २४ तीर्थंकरकी या परमेष्ठीकी पूजा की जावे। मंदिर या वेदीप्रतिष्ठाके दिन जलयात्रा की जावे तथा शुद्धिविधान करके प्रतिमा विराजमान की जावे। कमसेकम ८००० जप उसी मंत्रसे व उसी विधिसे जैसा विम्बप्रतिष्ठाके सम्बंधमें पहले अध्यायमें कह चुके हैं, की जावे। जलयात्राके पहले आचार्य इन्द्रकी स्थापना करे जैसा विम्बप्रतिष्ठामें किया था। वह इन्द्र प्रतिष्ठाविधिमें सेवा करनेको आज्ञा करे उसी प्रमाण जैसा पहले अध्याय (नं० ९)में मण्डपरक्षाविधिमें कहागया है।

चतुर्णिकायामरसंघ एष आगत्य यज्ञे विधिना नियोगं। स्वीकृत्य भक्त्या हि यथार्हदेशे सुस्था भवंत्वाह्निककल्पनायां ॥३२२॥

आयात मारुतसुराः पवनोद्धटाशाः संघट्टसंलसितनिर्मलतांतरीक्षाः।
वात्यादिदोपपरिभूतवसुंधरायां प्रत्यूहकर्मनिखिलं परिमार्जयंतु ॥ ३२३ ॥
आयात वास्तुविधिपूद्भटसंनिवेशा योग्यांशभागपरिपुष्टवपुः प्रदेशाः।
अस्मिन् मखे रुचिरसुस्थितभूपणांके सुस्था यथार्हविधिना जिनभक्तिभाजः ॥ ३२४ ॥
आयात निर्मलनभः कृतसंनिवेशा मेघासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः।
अस्मिन्मखे विकृतविक्रयया नितांते सुस्था भवन्तु जिनभक्तिमुदाहरंतु ॥ ३२५ ॥
आयात पावकसुराः सुरराजपूज्यसंस्थापनाविधिपु संस्कृतविक्रियार्हाः।
स्थाने यथोचितकृते परिबद्धकक्षाः संतु श्रियं लभत पुण्यसमाजभाजां ॥ ३२६ ॥
नागाः समाविशतभूतलसंनिवेशाः स्वां भक्तिमुल्लासितगात्रतया प्रकाश्य।
आशीविपादिकृतविघ्नविनाशहेतोः स्वस्था भवंतु निजयोग्यमहासनेषु ॥ ३२७ ॥

पुरुहूतदिशिस्थितिमेहि करोदुधृतकांचनदंडगखंडरुचे। विधिना कुमुदेश्वरसव्यशये धृतपंकजशंकितकंकणके ॥ ३२८ ॥
वामनाशुयमदिग्विभागतः स्थानमेहि जिनयज्ञकर्मणि। भक्तिभारकृतदुष्टनिग्रहः पूतशासनकृतामवंध्यकः ॥ ३२९ ॥
पश्चिमासु विततासु हरित्सु भूरिभक्तिभरभूकृतपीठाः। अंजनस्वहितकाम्यययाऽध्वरे तिष्ठ विघ्नविलयं प्रणिणुवेहि ॥३३०॥
पुष्पदंतभवनासुरमध्ये सत्कृतोऽसि यत इत्थमवोचम्। उत्तरत्र मणिदंडकराग्रस्तिष्ठ विघ्नविनिहत्तिविधायी ॥ ३३१ ॥

करकृतकुसुमानामंजलिं संवितीर्य धनदमणिधुररत्नानीशपूजार्थसार्धे।

विकिर विकिर शीघ्रं भक्तिमुद्भावयित्वा निगदतु परमांके मंडपोर्व्यावकाशे ॥ ३३२ ॥

जलयात्रामें गाजेबाजेके साथ इन्द्र व आचार्य किसी नदी या सरोवर या कूएंपर जल भरने जावें। साथमें कलश १०८ या ९४ या २७ या २१ या ९ या ५ जितने संभव हों उतने, जो नारियलसे ढके हो, ऊपर केसरसे रंगा छन्ना हो, कलशोंके कंठमें फूलमालाएं सुशोभित हों, उनको शुद्ध केशरिया वस्त्र पहने हुए कुलीन स्त्रियां मस्तकपर रखके लेजावें, सामग्री साथ जावे। मार्गमें इन्द्र जब चले उस समयसे लेकर पहुंचने तक मार्गमें जाते आते नीचे लिखे मंत्रसे मंत्रितकर जौ और सरसों बखेरता जाय जिसमें कोई विघ्न न हो व शांति रहे।

मंत्र—ॐ हूं क्षुं फट् किरिटि घातय२ परविघ्नान्स्फोटय२ सहस्रखंडान् कुरु२ परमुद्रा छिंद२ परमंत्रान् भिंद२ क्षः क्षः हूं फट्स्वाहा।

जलस्थानपर जाकर किसी ऐसे तीर्थकी पूजा करे जो नदी व सरोवर तटपर हो। जैसे सिद्धवरकूट, पावापुरी, अथवा निर्वाणक्षेत्र पूजा या सिद्धपूजा करे फिर छानकर कलशोंसे जल भरे। लवंग चूरा या चंदन मिलावे। वे ही स्त्रियां मस्तकपर रक्खे हुए मंडपमें लावे, यदि कहीं स्त्रियां न जासकें तो इन्द्र ही अधिक बनें और वे ही कलश लावें, उनको विराजमान किया जावे। फिर इसी जलसे मंदिर या वेदीको धोकर शुद्ध किया जावे तब यह मंत्र पढ़ा जावे। ॐ नीरजसे नमः। फिर जिस वेदीमें श्रीजीको विराजमान करना हो उसीके आगे एक उच्च पीठपर जिस मूर्तिको वेदीपर विराजमान करना हो लाकर स्थापित करे। उसीके आगे १७ कोठोंका वलययुत यागमंडल बनाया जावे। यदि न बने तौभी पूजा होसक्ती है। आगे एक चौखुंटा कुंड या तीनो होमकुंड बनाए जावे। प्रतिमाजीको लानेके पहले जहांपर खडे हो पूजन करे वहां डाभका आसन दर्पमथनाय नमः पढकर बिछावे, "सीलगंधाय नमः" यह मंत्र पढ़कर प्राशुकजलसे छीटे। विमलाय नमः यह मंत्र पढ़कर पुष्प चढ़ावे, "अक्षताय नमः" यह पढ़कर अक्षत चढ़ावे, "श्रुतधूपाय नमः" यह पढ़कर धूप देवे, "ज्ञानोद्योताय नमः" यह पढ़कर दीप चढ़ावे, "परमसिद्धाय नमः" यह पढ़कर नैवेद्य चढ़ावे, प्रतिमाको विराजमान करे, अभिषेक उसी जलसे करे जो लाया गया है। अभिषेककी विधि पहले कही जाचुकी है। जो विधि अभिषेककी व होमकी दूसरे अध्यायमें यागमंडलकी पूजामें कही है उसी तरह करे। नित्यनियम व सिद्धपूजाकरके सत्यजाताय नमः आदि पीठिकामंत्रोंसे होम करे। पश्चात् १०८ आहुति उसी मंत्रसे देवें जो दूसरे अध्यायमें लिखी है। फिर स्तुति आदि पढ़े।

ध्वजा व कलश भी चढ़ाना होता है वे भी इसी समय प्रतिमाजीके पास स्थापित रहे। वेदीके ऊपर व मंदिरके शिखरके ऊपर

कलश व ध्वजा चढ़ती है। पूजाके समय विनायक यंत्रको भी स्थापित करे। यदि न हो तय्यार कराले या थालपर खींचले। मध्यमें ॐ लिखके पांच कोठेका वलय करना, उसमे अ सि आ उ सा लिखे। फिर १२ कोठेका वलय करके अरहंत मंगलं आदि लिखना। उसको ह्रीं क्रौं से वेष्ठित करे। फिर इन्द्र सिद्धभक्ति पढ़े। फिर कायोत्सर्ग कर ९ दफे मंत्र पढ़े। फिर पढ़े—

ॐ जय जय जय, निस्सही, निस्सही, निस्सही, वर्धस्व, वर्धस्व, वर्धस्व, स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्ति, वद्धतां जिनशासनं। णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं, णमो उवज्झायाणं, णमोलोए सव्वसाहूणं। चत्तारि मंगलं, अरहंतमंगलं, सिद्धमंगलं, साहुमंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहन्तसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।

फिर आचार्यभक्ति तथा श्रुतभक्ति पढ़े और कहें—

ॐ अद्य वेदीमण्डपप्रतिष्ठायां, तत्शुद्धयर्थं भावशुद्धये पूर्वं आचार्यभक्तिश्रुतभक्तिपूर्वं कायोत्सर्गं करोम्यहं।

फिर यंत्रकी पूजा करे।

अथ यंत्रपूजा।

परमेष्ठिन्! मंगलादित्रय विघ्नविनाशने। समागच्छ तिष्ठ तिष्ठ मम सन्निहितो भव ॥ २६३ ॥

ॐ अर्हतसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपरमेष्ठिन्! मंगल लोकोत्तम!! शरणभूत!!! अत्रावतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं), अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं), अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (सन्निधिकरणं)।

स्नच्छैर्जलैस्तीर्थभवैर्जरापमृत्युग्ररोगापनुदे पुरस्तात्। अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥२६४॥

ॐ ह्रीं अथ बिंबप्रतिष्ठोत्सवे वेदिकाशुद्धिविधाने अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुमंगललोकोत्तमशरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सच्चंदनैर्गंधहृतालिवृन्दचितैर्हिमांशुप्रसरावदातैः। अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥चंदनं॥

सदक्षतैर्मौक्तिककांतिपाटच्चरैः सितैर्मानसनेत्रमित्रैः। अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥अक्षतं॥

पुष्पैरनेकैरसवर्णगंधप्रभासुरैर्वासितदिग्वितानैः। अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ पुष्पं ॥

नैवेद्यपिंडैर्घृतशर्करा‌क्तहविष्यभागैः सुरसाभिरामैः । अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ नैवेद्यं॥
आरातिकैरत्नसुवर्णरत्नमपात्रार्पितैर्ज्ञानविकाशहेतोः । अर्हन्मुखान् पञ्चपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ दीपं ॥
आशासु यद्धूमवितानमूर्द्धं तैर्धूपवृंदैर्दहनोपसर्पैः । अर्हन्मुखान् पञ्चपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ धूपं ॥
फलैरसालैर्वरदाडिमाद्यैर्हृद्घ्राणहार्यैरमलैरुदारैः । अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान् लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥फलं॥२७१॥
द्रव्याणि सर्वाणि विधाय पात्रे ह्यनर्घमर्घं वितरामि भक्त्या । भवे भवे भक्तिरुदारभावाद्येषां सुखायास्तु निरंतराया ॥अर्घं॥२७२॥
अनादिसन्तानभवान् जिनेंद्रानर्हत्पदेष्टानुपदिष्टधर्मान् । द्वेधा श्रिया लिंगितपादपद्मान् यजामि वेदीप्रकृतिप्रसक्त्यै ॥ २७३ ॥
ॐ ह्रीं उद्भिन्नानंतज्ञानगभस्तिसंदृष्टलोकालोकानुभावान् मोक्षमार्गप्रकाशनानन्तचिद्रूपविलासान् अर्हत्परमेष्ठिनः संपूजयामि स्वाहा अर्घं ।
कर्माष्टनाशाच्च्युतभावकर्मोद्भृतीन् निजात्मस्वविलासभूपान् । सिद्धाननंतांस्त्रिककालमध्ये गीतान् यजामीष्टविधिप्रशक्त्यै ॥२७४॥

ॐ ह्रीं द्विविधकर्मतांडवापनोदविलसत्स्वाकारचिदविलासवृत्तीन् निजाष्टगुणगणोद्घूर्णान् प्रगुणीभूतानंतमाहात्म्यान् लोकाग्रशिखराव-स्थायिनः सिद्धपरमेष्ठिनोऽर्चयामि स्वाहा ॥ अर्घं ॥

ये पंचधाचारपरायणानामग्रेसरा दीक्षणशिक्षिकासु । प्रमाणनिर्णीतपदार्थसार्थानाचार्यवर्यान् परिपूजयामि ॥२७५॥

ॐ ह्रीं व्यवहाराधाराचारवस्त्वाद्यनेकगुणमणिभूषितोरस्कान् संघप्रतिसार्थवाहनाचार्यवर्यान् परिपूजयामि स्वाहा ॥ अर्घं ॥

अर्थश्रुतं सत्यविबोधनेन द्रव्यश्रुतं ग्रन्थविदर्भनेन । येऽध्यापयंति प्रवरानुभावास्तेऽध्यापका मेऽर्हणया दुहन्तु ॥२७६॥

ॐ ह्रीं द्वादशांगश्रुतांबुनिधिपारंगतान् परिप्राप्तपदार्थस्वरूपान् उपाध्यायपरमेष्ठिनः पूजयामि स्वाहा ॥ अर्घं ॥

द्विधा तपोभावनया प्रवीणान् स्वकर्मभूमिध्रविखण्डनेषु । विविक्तशय्यासनहर्म्यपीठस्थितान् तपस्विप्रवरान् यजामि ॥२७७॥

ॐ ह्रीं घोरतपश्चरणोद्युक्तप्रयासभासमानान् स्वकारुण्यपुण्यपुण्यागण्यपण्यरत्नालंकृतपादान् साधुपरमेष्ठिनः पूजयामि स्वाहा ॥अर्घं॥

अर्हन्मङ्गलमर्चे सुरनरविद्याधरैकपूज्यपदं । तोयप्रभृतिभिरर्थैर्विनीतमूर्ध्ना शिवाप्तये नित्यं ॥२७८॥ ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलाय अर्घम् ।
ध्रौव्योत्पादविनाशनरूपाखिलवस्तुजाननार्थकरं । सिद्धं मंगलमिति वा मत्वार्चे चाष्टविधवसुभिः ॥२७९॥ ॐ ह्रीं सिद्धमंगलायार्घं ।
यद्दर्शनकृतविभवाद् रोगोपद्रवगणा मृगा इव मृगेंद्रात् । दूरं भजंति देशं साधुश्रेयोऽर्च्यते विधिना ॥२८०॥ ॐ ह्रीं साधुमंगलार्घं ।
केवलिमुखावगतया वाण्या निर्दिष्टभेदधर्मगणं । मंत्वा भवसिंधुतरीं प्रयजे तन्मंगलं शुद्ध्यै ॥ ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तिधर्ममंगलायार्घं ।

लोकोत्तममथ जिनराड् पदाब्जसेवनममितदोपविलयाय। शक्तं मत्वा धृतये जलगंधैरीडितुं प्रभवे ॥ ॐ ह्रीं अरहंतलोकोत्तमायार्घं।
सिद्धाश्च्युत दोपमला लोकाग्र्यं प्राप्य शिवसुखं व्रजिताः। उत्तमपथगा लोके तानर्चे वसुविधार्चनया ॥ ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमायार्घं।
इंद्रनरेंद्रसुरेंद्रैरर्थिततपसां व्रतैपिणां सुधियां। उत्तमपंथानमस्रावर्चेऽहं सलिलगंधमुखैः ॥ २८४ ॥ ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमेभ्यः अर्घं।
रागपिशाचविमर्दनमत्र भवे धर्मधारिणाममतुलम्। उत्तममवातिकामो वृषमर्चे शुचितरं कुसुमैः ॥ २८५ ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तिधर्माय लोकोत्तमायार्घं।

अर्हच्चरणमथार्चेऽनंतजनुष्वपि न जातु संप्राप्तं। नर्तनगानादिविधिमुद्दिश्याष्टकर्मणां शांत्यै ॥२८६॥ ॐ ह्रीं अरहंतशरणायार्घं।
निर्व्याबाधगुणादिक प्राग्र्यं शरणं समेतचिदनंतं। सिद्धानाममृतानां भूत्यै पूजेयमशुभहान्यर्थम् ॥२८७॥ ॐ ह्रीं सिद्धशरणायार्घं।
चिदचिद्भेदं शरणं लौकिकमाप्यं प्रयोजनातीतं। त्यक्त्वा साधुजनानां शरणं भूत्यै यजामि परमार्थम् ॥ ॐ ह्रीं साधुशरणायार्घं।
केवलिनाथमुखोद्गतधर्मः प्राणिसुखहितार्थमुद्दिष्टः। तत्प्राप्त्यै तद्यजनं कुर्वे मखविघ्ननाशाय ॥ ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणायार्घं।
औपधीरसबलर्द्धि तपःस्था क्षेत्रबुद्धिकलिताः क्रिययाढ्याः। विक्रयर्धिमहिताः प्रणिधानप्राप्तसंसृतितटा मुनिपूज्याः ॥२९०॥
केवलावधिमनः प्रसरांगाः वीजकोष्ठमतिभाजनशुद्धाः। वीतरागमदमत्सरभावा बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥ २९१ ॥
यद्वचोऽमृतमहानदमग्ना जन्मदाहपरितापमपास्य। निर्वृत्ताः सुखसमाजतटेषु बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥ २९२ ॥
श्रोत्रभिन्नमतयः पदपंथाः दृष्टसंसृतिपदार्थविभावाः। तत्त्वसंकलितधर्म्यसुशुक्लाः बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥ ॥ २९३ ॥
स्पर्शनश्रवणलोकनबुद्धाः घ्राणसंस्थरसनोपकृता ये। दूरतोऽप्यनुभवं समाप्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९४ ॥
छिन्नस्वर्यविधिना चतुर्दश दिग्सुपूर्वमतिना निमित्तगाः। वादिबुद्धकृतिनो मतिश्रमाः बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥ २९५ ॥
अष्टधोक्तदशधाभिदया ये बुद्धिवृद्धिसहिताः शिवयत्नाः। विण्मलादिगदहापनदेहा बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥ २९६ ॥
दृष्टिवक्त्रमनसां विपभक्ति प्रीणिताः श्रुतसरित्पतिपुष्टाः। लोकमंगलिपु संन्यसिता ये बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥ २९७ ॥
वाक्यमानसबलेन समग्राः उग्रदीप्ततपसस्त्रिकगुप्ताः। घोरवीर्यगुणभाविताचित्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥ २९८ ॥
दुग्धमध्वमृतभोजनक्रत्याः सर्पिपाश्रववचोऽभिनियुक्ताः। अण्वलाघववशित्वविदर्भा बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥ २९९ ॥
कामरूपगुरुतामतिसर्पातर्द्धहीनवसतिगृहयुक्ताः। चारणा जलफलाग्निकसूत्रा बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥ ३०० ॥

आत्मशक्तिविभवागतसर्वपौद्‌गलीयममताऽच्युतवस्त्राः । सत्परीषहभटार्दनदास्ते बोधिलाभमनघाः प्रदिशंतु ॥ ३०१ ॥

ॐ ह्रीं अष्टप्रकारसकलऋद्धिप्राप्तेभ्यो मुनिभ्योऽर्घम् ।

श्रेसितुर्वृषभसेनपुरस्सरा ये, सिंहादिसेनपुरतोऽजिततीर्थभर्तुः ।
श्रीसंभवस्य किल चारुविसेनमुख्यास्तुर्यस्य वज्रधरमुख्यगणाधिराजाः ॥ ३०२ ॥
क्रौञ्चध्वजस्य चमराधिपपूर्वगाः स्युः पद्मप्रभस्य कुलिशादिपुरःस्थिताश्च ।
श्रीसप्तमस्य बलमुख्यकृताः पुराणे चन्द्रप्रभस्य शमिनः खलु दत्तमुख्याः ॥ ३०३ ॥
मकरांकितो गणभृतश्च विदर्भमुख्याः श्रीसीतलस्य गणया अनगारगण्याः ।
श्रेयो जिनस्य निकटे ध्वनि कुंथुपूर्वा धर्मादयो गणधरा वसुपूज्यसूनोः ॥ ३०४ ॥
मेर्वादयश्च विमलेशितुरुद्धबुद्ध्या जय्यार्यनामभरणाश्चतुर्दशस्य ।
धर्मस्य भांति शमिनः सदरिष्टमूलाश्चक्रायुधप्रभृतयः खलु शांतिभर्त्तुः ॥ ३०५ ॥
कुंथुप्रभोर्यमभृतः कथिताः स्वयंभूवर्याः पुनस्त्वरविभोः स्मृतकुम्भमान्याः ।
म..विशाखमुनयो मुनिसुव्रतस्य मल्लिप्रवेकगणता नमिभर्तुरिष्टाः ॥ ३०६ ॥
सप्तर्द्धिपूजितपदाः सुप्रभासमुख्या नेमीश्वरस्य वरदत्तमुखा गणेशाः ।
पार्श्वप्रभो स्वयमितः सुभवोंतनाम्ना वीरस्य गौतममुनींद्रमुखाः पुनन्तु ॥ ३०७ ॥
एभ्योऽर्घ्यपात्रमिह यज्ञधरावनार्थं दत्तं मया विलसतां शुचिवेदिकायां ।
पुष्पांजलिप्रकरतुंदिलमाज्यपात्र मुत्तारयामि मुनिमान्यचरित्रभक्त्या ॥ ३०८ ॥

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरगणधरेभ्यस्त्रिपञ्चाशत्सहित चतुर्दशशतसंख्येभ्यश्चरुपात्रमग्रे कृत्वाऽर्घमुत्तारयामि स्वाहा ।

इन्द्रभूतिरग्निभूति वायुभूतिः सुधर्मकः । मौर्यमौड्यौ पुत्रमित्रावकम्पनसुनामधृक् ॥३०९॥ ॐ ह्रीं गौतमादि एकादशमुनिभ्योऽर्घं ।
अन्धवेलः प्रभासश्च रुद्रसंख्यान मुनीन् यजे । गोतमं च सुधर्मं च जम्बूस्वामिनमूर्ध्वगम् ॥३१०॥ ॐ ह्रीं अंत्यकेवलित्रयायार्घं ।
श्रुतकेवलिनोऽन्यांश्च विष्णुनंद्यपराजितान् । गोवर्धनं भद्रबाहुं दशपूर्वधरं यजे ॥ ३११ ॥ ॐ ह्रीं श्रुतकेवलिनोऽर्घं ।

विशाखप्रोष्ठिलनक्षत्र जयनागपुरस्सरान् । सिद्धार्थधृतिषेणाह्वौ विजय बुद्धिवलं तथा ॥ ३१२ ॥
गंगदेवं धर्मसेनमेकादश तु सुश्रुतान् । नक्षत्रं जयपालाख्यं पांडुं च ध्रुवसेनकम ॥ ३१३ ॥

ॐ ह्रीं कतिचिदंगधारिभ्योऽर्घं ।

कंसाचार्यं पुरोंगीयज्ञातारं प्रयजेन्वहं । सुभद्रं च यशोभद्रं भद्रबाहुं मुनीश्वरम् ॥ ३१४ ॥
लोहाचार्यं पुरा पूर्वज्ञानचक्रधरं नमः । अर्हद्वलिं भूतवलिं माघनंदिनमुत्तमम् ॥ ३१५ ॥
धरसेनं मुनींद्रं च पुष्पदन्तसमाह्वयं । जिनचंद्रं कुंदकुंदमुमास्वामिनमर्थये ॥ ३१६ ॥

ॐ ह्रीं ऐदयुगीनदीक्षाधरणधुरंधरनिर्ग्रंथाचार्यवर्यान् वेदीप्रतिष्ठाने संस्थाप्याष्टविधार्चनं करोमि स्वाहा ।

निर्ग्रंथान् वकुशान् पुलाककुशलान् किशीलनिर्ग्रंथकान् । मूलस्वोत्तरसद्गुणावधृतसाः किंचित्प्रकारं गतान् ॥
वंदित्वा जिनकल्पसूत्रितपदान् प्रध्वस्तपापोदयान् । वेदीशुद्धिविधिं ददंतु मुनयो ह्यर्घेण संपूजिताः ॥ ३१७ ॥

ॐ ह्रीं पुलाकवकुशकुशीलनिर्ग्रंथस्नातकपदधरत्रिकन्यूनैककोटिसंख्यमुनिवरेभ्योऽर्घं ।

फिर ९ दफे णमोकार मंत्र पढ़कर कलश व ध्वजाके ऊपर पुष्प डालना । फिर १०८ दफे णमोकार मंत्र जपकर नीचे लिखा मंत्र पढ़ वेदी तथा मंदिरके शिखरपर कलश व ध्वजा चढ़ावे ।

ॐ णमो अरहंताणं स्वस्ति भद्रं भवतु सर्वलोकस्य शांतिर्भवंतु स्वाहा ।

मंदिरके ऊपरकी ध्वजा—१२ अंगुल लम्बी व ८ अंगुल चौडी हो, कपड़ा लाल व पीला हो । उसमें चंद्रमा, माला, नक्षत्र, आदिका चिह्न हो । तथा कलश, सातिया, दीपदंड, छत्र, चमर, धर्मचक्र लिखकर ध्वजाके ऊपर जिनबिम्ब हो । ऊपर छत्र हो । ध्वजामें अशोक आदि वृक्षका चिह्न भी हो । जो ध्वजा मंदिरजीके शिषरपर चढ़ाई जावे उसका दंड मंदिरकी ऊंचाईसे चोथाई हो तो ठीक हो अथवा शोभाके अनुसार हो । ध्वजा चढाते समय बाजे बजें व जयजयकार शब्द हो । फिर वेदीपर मातृकायंत्रको केसरसे लिखे । यह मंत्र छठे अध्यायमें नं० (२) में दिया हुआ है तथा मंत्र भी वहीं लिखा है उसको १०८ वार जपे । वेदी उस समय चमर छत्रादिसे सुशोभित की जावे, बाजें बजते रहें । तब जयजयकार शब्दके बीचमें प्रतिमाजीको वेदीपर विराजमान करे । वेदीकी भीतपर केशरके साथिये पहलेसे किये जावे । यदि मातृकायंत्र नहीं लिख सके तो श्री लिखले व १०८ दफे णमोकार मंत्र जपले ।

फिर मूलनायक तीर्थंकरकी पूजा बड़ी भक्तिसे की जावे। पूजाके पीछे आचार्य यह प्रबन्ध करा दे कि मंदिर या वेदीका जीर्णोद्धार किसतरह होगा व नित्य पूजापाठमें अंतर न पड़े। मुख्य प्रतिष्ठा करानेवालेको पूजा आदिका यथासंभव नियम दिलावे तथा चार दान करनेके लिये कहे व अन्य भाइयोंको भी दानके लिये कहे। इससमय भजनादि हों व याचकोंको दान दिया जावे। गरीबोंको भोजन कराया जावे तथा यदि सामर्थ्य हो तो संघका भोजनसत्कार किया जावे।

(२) किसी भी नए कार्यमें जैसे गृह प्रवेश या विवाहादि—उसमें यथायोग्य विधिके साथ यंत्र या प्रतिमाका अभिषेक करके सत्यजाताय नमः आदिसे होम करके वही १७ वलयवाली पूजा जो वेदीप्रतिष्ठामें लिखी है की जावे। यह मंगलीक पूजा है, हर मंगल कार्यमें करने योग्य है।

(३) जब कोई नया ग्रंथ तय्यार हो व लिखा जावे तो उसकी विशेष पूजा जेठ सुदी ५ या श्रुतपंचमीके दिन की जावे। श्रुत-भक्ति पढ़कर श्रुत पूजा हो। फिर शास्त्र पढ़कर सुनाया जावे।

अध्याय १२वां।

भक्तियां आदि।

अथ सिद्धभक्तिः।

असरीरा जीवघना उवजुत्ता दंसणेय णाणेय। सायारमणायारा लक्खणमेयंतु सिद्धाणं ॥ १ ॥
मूलोत्तरपयडीणं बन्धोदयसत्तकम्मउम्मुक्का। मंगलभूदा सिद्धा अट्ठगुणा तीदसंसारा ॥ २ ॥
अट्ठवियकर्मविघडा सीदीभूता णिरंजणा णिच्चा। अट्ठगुणा किदिकिच्चा लोयग्गणिवासिणो सिद्धा ॥ ३ ॥
सिद्धा णट्ठट्ठमला विसुद्धबुद्धी य लद्धिसब्भावा। तिहुअणसिरिसेहरया पसियन्तु भडारया सव्वे ॥ ४ ॥
गमणागमणविमुक्के विहडियकम्मपयडिसंघारा। सासहसुहसंपत्ते ते सिद्धा वंदियो णिच्चं ॥ ५ ॥
जयमगलभूदाणं विमलाणं णाणदंसणमयाणं। तइलोइसेहराणं णमो सदा सव्वसिद्धाणं ॥ ६ ॥

सम्मत्तणाणदंसणवीरियसुहुमं तहेव अवगहणं । अगुरुलघु अव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ॥ ७ ॥

तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य । णाणम्मि दंसणम्मि यं सिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥ ८ ॥

इच्छामि भंते सिद्धभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचारित्तजुत्ताणं अट्ठविहकम्ममुक्काणं अट्ठगुणसम्पण्णाणं उड्ढलोयमच्छयम्मि पयड्ढियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं संजमसिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्तसिद्धाणं तीदाणागदवट्टमाणकालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ वोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं । इति पूर्वाचार्यानुक्रमेण भावपूजास्तवसमेतं कायोत्सर्गं करोमि ।

अथ श्रुतभक्तिः ।

अर्हद्वक्त्रप्रसूतं गणधररचितं द्वादशांगं विशालं, चित्रं बह्वर्थयुक्तं मुनिगणवृषभैर्धारितं बुद्धिमद्भिः ।
मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतचरणफलं ज्ञेयभावप्रदीपं, भक्त्या नित्यं प्रवन्दे श्रुतमहमखिलं सर्वलोकैकसारम् ॥ १ ॥

जिनेंद्रवक्त्रप्रविनिर्गतं वचो यतींद्रभूतिप्रमुखैर्गणाधिपैः । श्रुतं धृतं तैश्च पुनः प्रकाशितं द्विषट्प्रकारं प्रणमाम्यहं श्रुतं ॥ २ ॥

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव । पंचाशदष्टौ च सहस्रसंख्यमेतच्छ्रुतं पंच पदं नमामि ॥ ३ ॥

अंगबाह्यश्रुतोद्भूतान्यक्षराण्यक्षराम्नये । पंचसप्तैकमष्टौ च दशाशीतिं समर्चये ॥ ४ ॥

अरहतभासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं । पणमामि भत्तिजुत्तो सुदणाणमहोवहिं सिरसा ॥ ५ ॥

इच्छामि भंते सुदभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अंगोवंगपइण्णयपाहुडपरियम्मसुत्तपढमाणिओय पुव्वगयचूलिया चेव सुत्तत्थयत्थुइधम्मकहाइयं सुदं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ वोहिलाओ सुगइगमणं सम्मं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ चारित्रभक्तिः ।

संसारव्यसनाहतिप्रचालिता नित्योदयप्रार्थिनः प्रत्यासन्नविमुक्तयः सुमतयः शांतैनसः प्राणिनः ।
मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं सोपानमुच्चैस्तरा-मारोहंतु चरित्रमुत्तममिदं जैनेंद्रमोजस्विनः ॥ १ ॥

तिलोए सव्वजीवाणं हियं धम्मोवदेसणं । वड्ढमाणं महावीरं वंदित्ता सव्ववेदिनं ॥ २ ॥

घाइकम्मविघातत्थं घाइकम्मविणासिणा । भासियं भव्वजीवाणं चारित्तं पंचभेददो ॥ ३ ॥
सामायियं तु चारित्तं छेदोवट्ठावणं तहा । तं परिहारविसुद्धिं च संयमं सुहमं पुणो ॥ ४ ॥
जहाखायं तु चारित्तं तहाखायं तु तं पुणे । किच्चाहं पंचहाचारं मंगलं मलसोहणं ॥ ५ ॥
अहिंसादीणि वुत्तानि महव्वयाणि पंच य । समिदीओ तदो पंच पंचइंदियणिग्गहो ॥ ६ ॥
छब्भेयावासभूसिज्जा अण्हाणत्तमचेलदा लोयत्तं ठिदिभुत्तिं च अदंतवणमेव च ॥ ७ ॥
एयभत्तेण संजुत्ता रिसिमूलगुणा तहा । दसधम्मा तिगुत्तीओ सीलाणि सयलाणि य ॥ ८ ॥
सव्वे वि य परीसहा वुत्तुत्तरगुणा तहा । अण्णे वि भासिया संता तेसिंहाणीमयेकया ॥ ९ ॥
जइ रागेण दोसेण मोहेण णदरेण वा । वंदित्ता सव्वसिद्धाणं सजुहा सामुमुक्खुण ॥ १० ॥ (?)
संजदेण मए सम्मं सव्वसंजमभाविणा । सव्वसंजमसिद्धीओ लब्भदे मुत्तिजं सुहं ॥ ११ ॥
धम्मो मंगलमुक्किट्ठं अहिंसासंजमो तओ । देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मे सया मणो ॥ १२ ॥

इच्छामि भंते चारित्तभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणजोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स सव्वपहाणस्स णिव्वाणमग्गस्स संजमस्स कम्माणिज्जरफलस्स खमाहरस्स पंचमहव्वयसंपण्णस्स तिगुत्तिगुत्तस्स पंचसमिदिजुत्तस्स णाणज्झाणसाहणस्स समयाइपवेसयस्स सम्मचरित्तस्स सदाणिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खखओ कम्मखओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ आचार्यभक्तिः ।

देसकुलजाइसुद्धा विसुद्धमणवयणकायसंजुत्ता । तुम्हं पायपयोरुहमिह मंगलत्थि मे णिच्चं ॥ १ ॥
सगपरसमयविदूएहु आगमहेदूहिं चावि जाणित्ता । सुसमच्छा जिणवयणे विणएसुताणुरूवेण ॥ २ ॥
वालगुरुबुड्ढसेहे गिलाणथेरेयखमणसंजुत्ता । अट्ठावयग्गअण्णे दुस्सीले चावि जाणित्ता ॥ ३ ॥
वयसमिदिगुत्तिजुत्ता मुत्तिपहे ठावया पुणो अण्णे । अज्झावयगुणणिलया साहुगुणेणावि संजुत्ता ॥ ४ ॥
उत्तमखमाइपुढवी पसण्णभावेण अच्छजलसरिसा । कम्मिधणदहणादो अगणी वाऊ असंगादो ॥ ५ ॥

गयणमिव णिरुवलेवा अक्खोहा सायरुव्व मुनिवसहा । एरिसगुणणिलयाणं पायं पणमामि सुद्धमणो ॥ ६ ॥
संसारकाणणे पुण बंभममाणेहिं भव्वजीवेहिं । णिव्वाणस्स दु मग्गो लद्धो तुम्हं पसाएण ॥ ७ ॥
अविसुद्धलेसरहिया विसुद्धलेसेहिं परिणदा सुद्धा । रुद्दट्टे पुणचत्ता धम्मे सुक्के य संजुत्ता ॥ ८ ॥
ओग्गहईहावायाधारणगुणसम्पएहिं संजुत्ता । सुत्तत्थभावणाए भावियमाणेहिं वंदामि ॥ ९ ॥
तुम्हे गुणगणसंथुदि अयाणमाणेण जं मए वुत्ता । दिंतु मम बोहिलाहं गुरुभत्तिजुदत्थओ णिच्चं ॥ १० ॥

इच्छामि भंत्ते आइरियभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आयरियाणं आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।

अथ योगभक्तिः ।

थोसामि गणधराणं अणयाराणं गुणेहिं तच्चेहिं । अंजुलिमउलियहत्थो अहिवंदंतो सविभवेण ॥ १ ॥
सम्मं चेव य भावे मिच्छाभावे तहे व बोद्धव्वा । चइऊण मिच्छभावे सम्ममि उवट्ठिदे वंदे ॥ २ ॥
दोदोसविप्पमुक्के तिदंडविरदे तिसल्लपरिसुद्धे । तिण्णियगारवरहिए तियरणसुद्धे णमस्सामि ॥ ३ ॥
चउविहकसायमहणे चउगइसंसारगमणभयभीए । पञ्चासवपडिविरदे पंचेंदियणिज्जदे वंदे ॥ ४ ॥
छज्जीवदयावण्णे छडायदणविवज्जिये समिदभावे । सत्तभयाविप्पमुक्के सत्ताणभयंकरे वंदे ॥ ५ ॥
णदट्ठमयट्ठाणे पणट्ठकम्मट्ठणट्ठससारे । परमट्ठणिट्ठिमट्ठे अट्ठगुणट्ठीसरे वंदे ॥ ६ ॥
णवबंभचेरगुत्ते णवणयसब्भावजाणगे वंदे । दसविहधम्मट्ठाई दससंजमसंजुदे वंदे ॥ ७ ॥
एयारसंगसुदसायरपारगे वारसंगसुदणिउणे । वारसविहतवणिरदे तेरसकिरयापडे वंदे ॥ ८ ॥
भूदेसु दयावण्णे चउ दस चउदस सुगंथपरिसुद्धे । चउदसपुव्वपगब्भे चउदसमलवज्जिदे वंदे ॥ ९ ॥
वंदे चउत्थभत्तादिजावछम्मासखवणिपडिपुण्णे । वंदे आदावन्ते सूरस्स य अहिमुहट्ठिदे सूरे ॥ १० ॥
बहुविहपडिमट्ठाई णिसेज्जवीरासणोज्झवासीयं । अणिट्ठु अकुडुंवदीये चतदेहे य णमस्सामि ॥ ११ ॥

ठाणिममोणवदीए अब्भोवासी य रुक्खमूलीय । धुदकेसमंसु लोमे णिप्पडियम्मे य वंदामि ॥ १२ ॥
जल्लमललित्तगत्ते वंदे कम्ममलकलुसपरिसुद्धे । दीहणहणमंसु लोये तवसिरिभारिए णमस्सामि ॥ १३ ॥
णाणोदयाहिसित्ते सीलगुणविहूसिये तवसुगन्धे । ववगयरायसुदट्ठे सिवगइपहणायगे वंदे ॥ १४ ॥
उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे महातवे य घोरतवे । वंदामि तवमहंते तवसंजमइट्ठिसम्पत्ते ॥ १५ ॥
आमोसहिएखेलोसहिएजल्लोसहिय तवसिद्धे । विप्पोसहिए सव्वोसहिए वंदामि तिविहेण ॥ १६ ॥
अमयमुहघीरसथी सव्वी अक्खीण महाणसे वंदे । मणवत्तिवचंवलिकायवण्णिणो य वंदामि तिविहेण ॥ १७ ॥
वरकुट्ठवीयबुद्धी पयाणुसारीयसमिण्णसोयारे । उग्गहईहसमत्थे सुतत्थविसारदे वंदे ॥ १८ ॥
आभिणिवोहियसुदई ओहिणाणमणणाणि सव्वणाणीय । वंदे जगप्पदीवे पच्चक्खपरोक्खणाणीय ॥ १९ ॥
आयासततुजलसेढिचारणे जंघचारणे वंदे । विउव्वणइट्ठिहाणे विज्जाहरपण्णसमणे य ॥ २० ॥
गइचउरंगुलगमणे तहेव फलफुल्लचारणे वंदे । अणुवमतवमहंते देवासुरवंदिदे वंदे ॥ २१ ॥
जियभयजियउवसग्गे जियइंदियपरिसहे जियकसाये । जियरायदोसमोहे जियसुहदुक्खे णमस्सामि ॥ २२ ॥
एवमए अभित्थुआ अणयारा रायदोसपरिसुद्धा । संघस्स वरसमाहिं मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु ॥ २३ ॥

इच्छामि भंते जोगभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अड्ढाइजजीवदोससुद्देसु पण्णरसकम्मभूमीसु आदावणरुक्खमूल अब्भोवासठाणमोणवीरासणेक्कवासकुक्कडासणचउत्थपरकरक्खवणादिजोगजुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंस्सामि दुक्खक्खय कम्मक्खय वोहिलहोई सुगइगमणं सम्मं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ॥२५॥

अथ निर्वाणभक्तिपाठः ।

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्ज जिणणाहो । उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥ १ ॥
वीसं तु जिणनरिंदा अमरासुरवंदिता धुदकिलेसा । सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ २ ॥
वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे । आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ३ ॥
णेमिसामि पज्जण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो । वाहत्तरिकोडीओ उज्जंते सत्तसया सिद्धा ॥ ४ ॥

रामसुवा वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ । पावागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ५ ॥
पंडुसुआ तिण्णिजणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ । सेत्तुंजयागिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ६ ॥
संते जे बलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ । गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ७ ॥
रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णीलमहाणीलो । णवणवदीकोडीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥ ८ ॥
णंगाणंगकुमारा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया । सुवणागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ९ ॥
दहमुहरायस्स सुवा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया । रेवाउहयतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १० ॥
रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरकूडे । दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वंदे ॥ ११ ॥
वड़वाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे । इंदजीदकुंभयणो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १२ ॥
पावागिरिवरसिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो । चलणाणईतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १३ ॥
फलहोडीवरगामे पश्चिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे । गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १४ ॥
णायकुमारमुणिंदो वालि महावाली चेव अज्झेया । अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१५॥
अच्चलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे । आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १६ ॥
वंसत्थलवरणियरे पच्छिमभायम्मि कुन्थुगिरिसिहरे । कुलदेसभूसणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१७॥
जसरहरायस्स सुआ पंचसयाइं कलिंगदेसम्मि । कोडिसिलाकोडिमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१८॥
पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पंच । रिस्सिंदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१९॥

इच्छामि भंते परिणिव्वाणभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ इमम्मि अवसप्पिणीए चउत्थसमयस्स पच्छिमे भागे आहुट्ठयमासहीणे वासचउक्कम्मि सेसकालम्मि पावाए णयरीए कत्तियमासस्स किण्हचउद्दसिए रत्तीए सादीए णक्खत्ते पच्चूसे भयवदोमहदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिंगदो तीसुवि लोएसु भवणवासियवाणवितरजोइसिइ कप्पवासिय त्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमंसंति परिणिव्वाणमहाकल्लाणपुज्जं करंति अहमवि इहसंतो तत्थ सत्ताइ णिच्चकालं

अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि परिणिव्वाण महाकल्लाणपुज्जं करेमि दुक्खक्खओ कम्मखओ बोहिलाओ सुगइगमणं सम्मं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ तीर्थंकरभक्तिः ।

चउवीसं तीत्थयरे उसहाइवीरपच्छिमे वंदे । सव्वेसिं मुणिगणहरसिद्धे सिरसा णमंसामि ॥ १ ॥

ये लोकेष्टसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयार्णवांतर्गता । ये सम्यग्भवजालहेतुमथनाश्चन्द्रार्कतेजोधिकाः ॥

ये साध्विन्द्रसुराप्सरोगणशतैर्गीतप्रणुत्यार्चिताः । तान्देवान्वृषभादिवीरचरमान्भक्त्या नमस्याम्यहम् ॥ २ ॥

नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपं । सर्वज्ञं सम्भवाख्यं मुनिगणवृषभं नदनं देवदेवम् ॥

कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वरकमलनिभं पद्मपुष्पाभिगन्धं । क्षांतं दांतं सुपार्श्वं सकलशशिनिभं चंद्रनामानमीडे ॥ ३ ॥

विख्यातं पुष्पदंतं भवभयमथनं शीतलं लोकनाथं । श्रेयांसं शीलकोशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ॥

मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं मुनींद्रं । धर्मं सद्धर्मकेतुं शमदमनिलयं स्तौमि शांतिं शरण्यम् ॥४॥

कुन्थुं सिद्धालयस्थं श्रमणपतिमरं सक्तभोगेषुचक्रम् । मल्लिं विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिम् ॥

देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्रं भवांतम् । पार्श्वं नागेन्द्रवन्द्यं शरणमहमितो वर्द्धमानं च भक्त्या ॥ ५ ॥

इच्छामि भंते चउवीसतित्थयरभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । पंचमहाकल्लाणसम्पण्णाणं, अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं, चउतीसअतिसयविसेससंजुत्ताणं, बत्तीसदेविंदमणिमउडमत्थयमहियाणं, बलदेववासुदेवचक्कहररिसिमुणिजइअणगारोवगूढाणं, थुइसयसहस्सणिलयाणं, उसहाइवीरपच्छिममंगलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।

अथ शांतिभक्तिपाठः ।

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्पादद्वयं ते प्रजाः । हेतुस्तत्र विचित्रदुःखनिचयः संसारघोरार्णवः ॥

अत्यन्तस्फुरदुग्ररश्मिनिकरव्याकीर्णभूमण्डलो । ग्रैष्मः कारयतीन्दुपादसलिलच्छायानुरागं रविः ॥ १ ॥

क्रुद्धाशीविषदष्टदुर्जयविषज्वालावलीविक्रमो । विद्याभेषजमन्त्रतोयहवनैर्याति प्रशांतिं यथा ॥

तद्वत्ते चरणारुणाम्बुजयुगस्तोत्रोन्मुखानां नृणाम् । विघ्नाः कायविनायकाश्च सहसा शाम्यंत्यहो विस्मयः ॥ २ ॥

मंतप्तोत्तमकांचनक्षितिधरश्रीस्पर्द्धिगौरद्युते । पुंसां त्वच्चरणप्रणामकरणात्पीडाः प्रयान्ति क्षयं ॥
उद्यद्भास्करविस्फुरत्करशतव्याघातनिष्कासिता । नानादेहिविलोचनद्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ॥ ३ ॥
त्रैलोक्येश्वरमंगलब्धविजयादत्यंतरौद्रात्मकान् । नानाजन्मशतांतरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः ॥
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्रदावानला । न्न स्याच्चेत्तव पादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम् ॥ ४ ॥
लोकालोकनिरंतरप्रविततज्ञानैकमूर्ते विभो ! नानारत्नपिनद्धदण्डरुचिरश्वेतातपत्रत्रय ॥
त्वत्पादद्वयपूतगीतरवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः । दर्पाध्मातमृगेन्द्रभीमनिनदाद्वन्या यथा कुंजराः ॥ ५ ॥
दिव्यस्त्रीनयनाभिरामविपुलश्रीमेरुचूडामणे । भास्वद्बालदिवाकरद्युतिहर प्राणीष्टभामंमडलम् ॥
अव्याबाधमचिंत्यसारमतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम । सौख्यं त्वच्चरणारविंदयुगलस्तुत्यैव संप्राप्यते ॥ ६ ॥
यावन्नोदयते प्रभापरिकरः श्रीभास्करो भासयं-स्तावद्धारयतीह पंकजवनं निद्रातिभारश्रमम् ॥
यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन्न स्यात्प्रसादोदय-स्तावज्जीवनिकाय एष वहति प्रायेण पापं महत् ॥ ७ ॥
शान्ति शान्तिजिनेन्द्र शांतमनसस्त्वत्पादपद्माश्रयात् । संप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहवः शान्त्यर्थिनः प्राणिनः ॥
कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो दृष्टिं प्रसन्नां कुरु । त्वत्पादद्वयदैवतस्य गदतः शांत्यष्टकं भक्तितः ॥ ८ ॥
शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रं । अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममंबुजनेत्रम् ॥
पंचममीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च । शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः षोडशतीर्थंकरं प्रणमामि ॥ ९ ॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ । आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥
तं जगदर्चितशांतिजिनेन्द्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि । सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ॥१०॥
येभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः । शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपदपद्माः ॥
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपाः । तीर्थंकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥ ११ ॥
सम्पूजकानां प्रतिपालकानां यतींद्रसामान्यतपोधनानां । देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेंद्रः ॥
क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः । काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यांतु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके। जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥१२॥
तद्द्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स देशः। सन्तन्यता प्रतपतां सततं स कालः ॥
भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण। रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गे ॥ १३ ॥

इच्छामि भंते शांतिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। पंचमहाकल्लाणसम्पण्णाणं, अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं, चउतीसातिसयविसेससंजुत्ताणं, वत्तीसदेवेंदमणिमउडमत्थयमहियाणं, वलदेववासुदेवचक्कहररिसिमुणिजदिअणगारोवगूढाणं, थुइसयसहस्सणिलयाणं, उसहाइवीरपच्छिममङ्गलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, वोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं।

अथ समाधिभक्तिः।

स्वात्माभिमुखसंवित्तिलक्षणं श्रुतचक्षुपा। पश्यन्पश्यामि देव त्वां केवलज्ञानचक्षुपा ॥ १ ॥
शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः। सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोपवादे च मौनम ॥
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे। संपद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ २ ॥
जैनमार्गरुचिरन्यमार्गनिर्वेगता जिनगुणस्तुतौ मतिः। निष्कलंकविमलोक्तिभावनाः संभवन्तु मम जन्मजन्मनि ॥३॥
गुरुमूले यतिनिचिते चैत्यसिद्धांतवार्धिसद्घोपे। मम भवतु जन्मजन्मनि सन्यसनसमन्वितं मरणम् ॥ ४ ॥
जन्मजन्मकृतं पापं जन्मकोटिसमार्जितम्। जन्ममृत्युजरामूलं हन्यते जिनवन्दनात् ॥ ५ ॥
आवाल्याज्जिनदेवदेव भवतः श्रीपादयोः सेवया। सेवासक्तविनेयकल्पलतया कालोद्ययावद्गतः ॥
त्वां तस्याः फलमर्थये तदधुना प्राणप्रयाणक्षणे। त्वन्नामप्रतिवद्धवर्णपठने कण्ठोस्त्वकुण्ठो मम ॥ ६ ॥
तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्। तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ ७ ॥
एकापि समर्थेयं जिनभक्तिर्दुर्गतिं निवारयितुम्। पुण्यानि च पूरयितुं दातुं मुक्तिश्रियं कृतिनः ॥ ८ ॥
पंचसुअ दीवणामे पंचम्मिय सायरे जिणे वंदे। पंच जसोयरणामे पंचम्मिय मंदरे वंदे ॥
रयणत्तयं च वदे चव्वीसजिणे च सव्वदा वंदे। पंचगुरूणं वंदे चारणचरणं सदा वंदे ॥ १० ॥

अर्हमित्यक्षरब्रह्म वाचकं परमेष्ठिनः । सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणिदध्महे ॥

कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् । सम्यक्त्वादि गुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ १२ ॥

आकृष्टिं सुरसम्पदां विदधते मुक्तिश्रियो वश्यतां । उच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां विद्वेषमात्मैनसाम् ॥

स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनं । पायात्पंचनमस्क्रियाक्षरमयी साराधना देवता ॥ १३ ॥

अनन्तानन्तसंसारसन्ततिच्छेदकारणम् । जिनराजपदाम्भोजस्मरणं शरणं मम ॥ १४ ॥

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम । तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ १५ ॥

नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्त्रये । वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ १६ ॥

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने । सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥ १७ ॥

याचेहं याचेहं जिन तव चरणारविंदयोर्भक्तिम् । याचेहं याचेहं पुनरपि तामेव तामेव ॥ १८ ॥

इच्छामि भंते समाहिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । रयणत्तयपरूवपरमप्पज्झाणलक्खणं समाहिभत्तीये णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

प्रशस्ति ।

दोहा—मंगल श्री अरहंत हैं, मंगल सिद्ध महान । मंगल आचारज सुधी, पाठक मुनि गुण-खान ॥ १ ॥
अग्र सुलक्ष्मणपुर जनम, अग्रवाल शुभ वंश । मंगलसेन सुवर पिता, आतम जानन हंश ॥ २ ॥
पिता जु मक्खनलाल हैं, गृह प्रबन्धमें लीन । तृतिय पुत्र यह दास है, नाम जु "शीतल" दीन ॥ ३ ॥
विक्रम उन्निस पैंतिसे, जन्म सुकातिक मास । बत्तिस वय घर तज करो, श्रावक व्रत अभ्यास ॥ ४ ॥
सम्वत् उन्निस असी चउ, वर्षाकाल मंझार । नगर खंडवा वास किया, समताभाव सम्हार ॥ ५ ॥
पोड़वाड़ पंचास घर, खण्डेलवाल जु बीश । धर्म दिगम्बर साधते, नमैं चरण जिन ईश ॥ ६ ॥
मंदिर एक सुहावना, विद्याशाला एक । औषधिशाला एक है, शाला धर्म जु एक ॥ ७ ॥
सेठ पोमद् साह हैं, चम्पालाल धनेश । धन्नालाल सु सेठ हैं, रामा साह सुखेश ॥ ८ ॥
चुन्नीलाल सु चौधरी, पन्नालाल वखान । दशरथ मन्नालाल सा, श्री घनश्याम सुजान ॥ ९ ॥
भागचन्द सा चुन्नी सा, और हजारीलाल । मूलचन्दजी सूर्जमल, सुधी कन्हैयालाल ॥ १० ॥
इत्यादिक धर्मीनकी, संगति शुभ सुखदाय । सेठ जु सुन्दरलालकी, बाग सु आश्रय दाय ॥ ११ ॥
बार बार विनती करी, अजितप्रसाद वकील । करहु प्रतिष्ठा मग सुगम, धर्म सुजलमय झील ॥ १२ ॥
जैनी जन दुखिया अती, रीति न जाने भेद । तातें हम उद्यम किया, मदद परम गुरु वेद ॥ १३ ॥
देख प्रतिष्ठा पाठ त्रय, श्री जयसेन मुनीश । पंडित आशाधर जु कृत, नेमचन्द बुध ईश ॥ १४ ॥
श्री जिनसेन मुनीश कृत, आदिपुराण विचार । आदि पुरुष जीवनचरित, पंचकल्याणक सार ॥ १५ ॥
तदनुसार रचना करी, अल्पबुद्धि परमाण । धर्म प्रभावन हेतु ही, सब जनका हित मान ॥ १६ ॥
ज्ञान बुद्धि अति अल्प है, साहस बहुत कराय । कार्य कठिन पूरा हुआ, श्रीजिन चरण सहाय ॥ १७ ॥
आश्विन कृष्ण नवमिको, सोमवार शुभ वार । ग्रन्थ समापत यह भया, हो भुवि मंगलकार ॥ १८ ॥

ता० १०-९-२७ इति । द० सीतल ।

नित्यनियम पूजा।

देवशास्त्रगुरुपूजा।

ॐ जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु। णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाण, णमो आयरीयाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं। ॐ अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः। (यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

चत्तारि मंगलं-अरहंतमंगलं, सिद्धमंगलं, साहुमंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंतलोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहुलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारिसरणं पव्वज्जामि-अरहंतसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि। ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। पुष्पांजलि।

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोपि वा। ध्यायेत्पञ्चनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥ २ ॥

अपराजितमन्त्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः। मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥

एसो पंचणमोयारो सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मंगलं ॥ ४ ॥

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः। सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥

कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम्। सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ ६ ॥ पुष्पांजलि।

(यदि अवकाश हो, तो यहापर सहस्रनाम पढ़कर दश अर्घ देना चाहिये, अथवा नीचेका श्लोक पढ़ एक अर्घ चढ़ाना चाहिये)।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः। धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम्।

श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतु-र्जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥ ८ ॥

स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुङ्गवाय, स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय।

स्वस्ति प्रकाशसहजोर्ज्जितदृङ्मयाय, स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥ ९ ॥

स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय, स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय ।

स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय, स्वस्ति त्रिकालसकलायतविस्तृताय ॥ १० ॥

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः ।

आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्, भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥ ११ ॥

अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि, वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।

अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवलबोधवह्नौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥ १२ ॥ (पुष्पांजलि क्षेपण करना)

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः । श्रीसंभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः । श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः । श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः । श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः । श्रीश्रेयान्स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः । श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्तः । श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः । श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः । श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः । श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः । श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः । (पुष्पांजलिक्षेपण) (आगे प्रत्येक श्लोकके अंतमें पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये ।)

नित्याप्रकम्पाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्य्ययशुद्धबोधाः । दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥१॥

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि । चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ २ ॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि । दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ३ ॥

प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः । प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ४ ॥

जङ्घावलिश्रेणिफलाम्बुतन्तुप्रसूनबीजाङ्कुरचारणाह्वाः । नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ५ ॥

अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि । मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः । तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ७॥

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः । ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ८ ॥

...ीविषंविषा दृष्टिविषंविषाश्च । सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ९ ॥
...स्रवन्तो मधु स्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः । अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥१०॥

इति स्वस्तिमंगलविधानं ।

सार्वः सर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतां पापसन्तापहर्ता, त्रैलोक्याक्रान्तकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्घातिकर्मप्रणाशः ।
श्रीमान्निर्वाणसम्पद्वरयुवतिकरालीढकण्ठः सुकण्ठैर्देवेन्द्रैर्वन्द्यपादो जयति जिनपतिः प्राप्तकल्याणपूजाः ॥ १ ॥
जय जय जय श्रीसत्कान्तिप्रभो जगतां पते ! जय जय भवानेव स्वामी भवाम्भासि मज्जताम् ।
जय जय महामोहध्वान्तप्रभातकृतेऽर्चनम् जय जय जिनेश त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् । (इत्याह्वाननम्) ॐ ह्रीं भवगज्जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । (इति स्थापनम्) ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् । (इति सन्निधिकरणम्)

देवि श्री श्रुतदेवते भगवति त्वपादपंकेरुह–द्वन्द्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्या मया प्रार्थ्यते ।
मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा त्राहि मां, दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं सम्पूजयामोऽधुना ॥ ३ ॥

ॐ ह्री जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः । तपःप्राप्तप्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥ ४ ॥

ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् । ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रवन्द्यान् शुम्भत्पदान् शोभितसारवर्णान् । दुग्धाब्धिसंस्पर्धिगुणैर्जलौघैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥१॥

ॐ ह्री परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भुतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताम्यत्रिलोकोदरमध्यवर्तिसमस्तसत्त्वाऽहितहारिवाक्यान् ।श्रीचन्दनैर्गन्धविलुब्धभृंगैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं नि० ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय संसारतापविनाशनाय चदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः संसारतापविनाशनाय चदनं निर्व० ।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन् सुभक्त्या । दीर्घाक्षतांगैर्धवलाक्षतौघैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्यान्वर्यान् सुचर्याकथनैकधुर्यान् । कुन्दारविन्दप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥४॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

कुदर्पकन्दर्पविसर्पसर्प-प्रसह्यनिर्णाशनवैनतेयान् । प्राज्याज्यसारैश्चरुभी रसाढ्यैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन्यजेऽहम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वस्तोद्यमान्धीकृतविश्वविश्वमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् । दीपैः कनत्कांचनभाजनस्थैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेहम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यग्चारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ।

दुष्टाष्टकर्मेन्धनपुष्टजालसंधूपने भासुरधूमकेतून्। धूपैर्विधूतान्यसुगन्धगन्धैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं नि०।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशागश्रुतज्ञानाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान् कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान्। फलैरलं मोक्षफलाभिसारैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥८॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा।

सद्वारिगन्धाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः। फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोगान् जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अनर्घपद प्राप्तये अर्घं नि०।

ॐ ह्रीं जिमसुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते, त्रैसन्ध्यं सुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयन्तो नराः।
पुण्याढ्या मुनिराजकीर्तिसहिता भूत्वा तपोभूषणा—स्ते भव्याः सकलावबोधरुचिरां सिद्धिं लभन्ते पराम् ॥१०॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलि क्षेपण करना।)

वृषभोऽजितनामा च सम्भवश्चाभिनन्दनः। सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥ १ ॥
चन्द्राभः पुष्पदंतश्च शीतलो भगवान्मुनिः। श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥
अनन्तो धर्मनामा च शांतिः कुन्थुर्जिनोत्तमः। अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३ ॥
हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः। ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥ ४ ॥
कर्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसम्भवः। एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥ ५ ॥

पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः । चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं कुर्वंतु शाश्वतीम् ॥ ६ ॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे । सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥७॥ (पुष्पांजलिं)
श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे । सज्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ८ ॥ (पुष्पांजलिं)
गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे । चारित्रमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ९ ॥ (पुष्पांजलिं)

अथ देवजयमाला प्राकृत ।

वत्ताणुट्ठाणे जणधणुदाणे पइपोसिउ तुहु खत्तधरु । तुहु चरणविहाणे केवलणाणे तुहु परमप्पउ परमपरु ॥ १ ॥
जय रिसह रिसीसर णमियपाय, जय अजिय जियंगमरोसराय । जय संभव संभवकयविओय, जय अहिणंदण णंदिय पओय ॥
जय सुमइ सुमइ सम्मयपयास, जय पउमप्पह पउमाणिवास । जय जयहि सुपास सुपासगत्त, जय चंदप्पह चंदाहवत्त ॥३॥
जय पुप्फयंत दंततरंग, जय सीयल सीयलवयणभंग । जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज, जय वासुपुज्ज पुज्जाणपुज्ज ॥ ४ ॥
जय विमल विमलगुणसेढिठाण, जय जयहि अणंताणंतणाण । जय धम्म धम्मतित्थयर संत, जय सांति सांति विहियायवत्त ॥
जय कुंथु कुंथुपहुअंगिसदय, जय अर अर माहर विहियसमय । जय मल्लि मल्लिआदामगंध, जय मुणिसुव्वय सुव्वयणिबंध ॥
जय णमि णमियामरणियरसामि, जय णेमि धम्मरहचक्कणेमि । जय पास पासछिंदणकिवाण, जय वड्ढमाण जसवड्ढमाण ॥

घत्ता ।

इह जाणिय णामहिं, दुरियविरामहिं, परहिंवि णमिय सुरावलिहिं ।
अणहणहिं अणाइहिं, समियकुवाइहिं, पणविमि अरहन्तावलिहिं ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं वृषभादिमहावीरान्तेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ शास्त्रजयमाला प्राकृत

संपइ सुहकारण, कम्मवियारण, भवसमुद्दतारणतरणं । जिणवाणि णमस्समि, सत्तपयस्समि, सग्गमोक्खसंगमकरणं ॥ १ ॥
जिणंदमुहाओ विणिग्गयतार, गणिंदविगुंफिय गंथपयार । तिलोयहिमंडण धम्मह खाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥
अवग्गहईहअवायजुएहि, सुधारणभेयहिं तिण्णिसएहि । मई छत्तीस बहुप्पमुहाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ३ ॥

सुदं पुण दोण्णि अणेयपयार, सुबारहभेय जगत्तयसार । सुरिंदणरिंदसमुच्चिअो जाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥
जिणिंदगणिंदणरिंदह रिद्धि, पयासइ पुण्णपुराकिउलद्धि । णिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥
जु लोयअलोयह जुत्ति जणेइ, जु तिण्णिवि कालसरूव भणेइ । चउग्गइलक्खण दुज्जउ जाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥
जिणिंदचरित्तविचित्त मुणेइ, सुसावयधम्मह जुत्ति जणेइ । णिउग्गुवितिज्जउ इत्थु वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥
सुजीवअजीवह तच्चह चक्खु, सुपुण्ण विपाव विबंध विमुक्खु । चउत्थुणिउग्गु विभासिय णाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥
तिभेयहि ओहि विणाण विचित्तु, चउत्थु रिजोविउलं मयउत्तु । सुखाइय केवलणाण वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥
जिणिंदह णाणु जगत्तयभाणु, महातमणासिय सुक्खणिहाणु । पयच्चहुभत्तिभरेण वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥
पयाणि सुबारहकोडिसयेण, सुलक्खतिरासिय जुत्ति भरेण । सहसअट्ठावण पंचवियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥
इक्कावण कोडिउ लक्ख अठेव, सहस चुलसीदिसया छक्केव । सढाइगवीसह गंथपयाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥

घत्ता ।

इह जिणवरवाणि विसुद्धमई, जो भवियण णियमण धरई । सो सुरणरिंदसंपय लहई, केवलणाण वि उत्तरई ॥१३॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशागश्रुतज्ञानाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ गुरुजयमाला प्राकृत ।

भवियह भवतारण, सोलह कारण, अज्जवि तित्थयरत्तणहं । तव कम्म असंगइ दयधम्मंगइ पालवि पंच महव्वयहं ॥१॥
वंदामि महारिसि सीलवंत, पंचेंदियसंजम जोगजुत्त । जे ग्यारह अंगह अणुसरंति, जे चउदहपुव्वह मुणि थुणंति ॥२॥
पादाणुसारवर कुट्ठबुद्धि, उप्पण्णजाइ आयासरिद्धि । जे प्राणहारी तोरणीय, जे रुक्खमूल आतावणीय ॥ ३ ॥
जे मोणिधाय चन्दाहणीय, जे जत्थत्थवणि णिवासणीय । जे पंचमहव्वय धरणधीर, जे समिदिगुत्तिपालणहिं वीर ॥४॥
जे वड्ढहिं देह विरत्तचित्त, जे रायरोसभयमोहचत्त । जे कुगइहि संवरु विगयलोइ, जे दुरियविणासणकामकोह ॥ ५ ॥
जे जल्ल मल्लतणलित्त गत्त, आरम्भ परिग्गह जे विरत्त । जे तिण्णकाल बाहर गमंति, छट्ठट्ठम दसमउ तउचरंति ॥ ६ ॥
जे इक्कगास दुइगास लिंति, जे णीरसभोयण रइ करंति । ते मुणिवर वंदउँ ठियमसाण, जे कम्म डहइवरसुक्कझाण ॥७॥

वारहविह संजम जे धरंति, जे चारिउ विकहा परिहरंति । वावीस परीसह जे सहंति, संसारमहण्णउ ते तरंति ॥ ८ ॥
जे धम्मसुद्ध महियलिझुणंति, जे काउसग्गो णिस गमंति। जे सिद्धविलासणि अहिलसंति, जे पक्खमास आहार लिंति ॥९॥
गोदूहण जे वीरासणीय, जे धणुह सेज वज्जासणीय । जे तववलेण आयास जंति, जे गिरिगुहकंदर विवर थंति ॥१०॥
जे सत्तुमित्त समभावचित्त, ते मुणिवर वंदउं दिढचरित्त । चउवीसह गंथह जे विरत्त, ते मुणिवरवंदउ जगपवित्त ॥ ११ ॥
जे सुज्झाणिज्झा एकचित्त, वंदामि महारिसि मोक्खपत्त । रयणत्तयरंजिय सुद्ध भाव, ते मुणिवर वंदउं ठिदिसहाव ॥१२॥

घत्ता ।

जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धवधूअणुराईया । रयणत्तयरंजिय, कम्मह गंजिय, ते रिसिवर मइ झाईया ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अथ सिद्धपूजा ।

ऊर्ध्वाधोरयुतं सविन्दुसपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं, वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं तत्संधितत्त्वान्वितं ।
अंतःपत्रतटेष्वनाहतयुतं ह्रींकारसंवेष्टितं, देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरवः ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र ! अवतर अवतर । सवौषट् । ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

निरस्तकर्मसम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् । वंदेऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ॥ १ ॥ सिद्धयंत्रकी स्थापना ।

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं, हीनादिभावरहितं भववीतकायम् ।
रेवापगावरसरो-यमुनोद्भवानां, नीरैर्यजे कलशगैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं, सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतम् ।
सौरभ्यवासितभुवं हरिचन्दनानां, गन्धैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं, सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम्।
सौगन्ध्यशालिवनशालिवराक्षतानां, पुंजैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

नित्यं स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं, द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम्।
मंदारकुन्दकमलादिवनस्पतीनां, पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊर्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं, ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम्।
क्षीरान्नसाज्यवटकै रसपूर्णगर्भै-र्नित्यं यजे चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आतंकशोकभयरोगमदप्रशांतं, निर्द्वन्द्वभावधरणं महिमानिवेशम्।
कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातै-र्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितांतं, त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम्।
सद्द्रव्यगन्धघनसारविमिश्रितानां, धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धासुरादिपतियक्षनरेन्द्रचक्रै-र्ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैः सुवन्द्यम्।
नारिंगपूगकदलीफलनारिकेलैः, सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः संगं वरं चन्दनं, पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकं।

धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये, सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं, सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम् ।

कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजं, वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं, यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थंकराः ।

सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्य्यविशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणै-र्युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥११॥ पुष्पांजलिं

अथ जयमाला ।

विराग सनातन शांत निरंश, निरामय निर्भय निर्मल हंस । सुधाम विबोधनिधान विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१॥

विदूरितसंसृतभाव निरंग, समामृतपूरित देव विसङ्ग । अबन्ध कषायविहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ २ ॥

निवारितदुष्कृतकर्मविपाश, सदामलकेवलकेलिनिवास । भवोदधिपारग शांत विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ३ ॥

अनन्तसुखामृतसागर धीर, कलङ्करजोमलभूरिसमीर । विखण्डितकाम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ४ ॥

विकारविवर्जित तर्जितशोक, विबोधसुनेत्रविलोकितलोक । विहार विराव विरंग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५ ॥

रजोमलखेदविमुक्त विगात्र, निरंतर नित्य सुखामृतपात्र । सुदर्शनराजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ६ ॥

नरामरवंदित निर्मलभाव, अनन्तमुनीश्वरपूज्य विहाव । सदोदय विश्वमहेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ७ ॥

विदम्भ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परापरशङ्कर सार वितंद्र । विकोप विरूप विशंक विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ८ ॥

जरामरणोज्झित वीतविहार विचिंतित निर्मल निरहंकार । अचिंत्यचरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ९ ॥

विवर्ण विगन्ध विमान विलोभ, विमाय विकाय विशब्द विशोभ । अनाकुल केवल सर्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१०॥

घत्ता—असमसमयसारं चारुचैतन्यचिह्नं, परपरणतिमुक्तं पद्मनंदीन्द्रवन्द्यम् ।

निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्लछन्द—अविनाशी अविकार परमरसधाम हो, समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो। शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो, जगतशिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ॥१॥ ध्यानअगनिकर कर्म कलंक सबै दहे, नित्य निरंजनदेव सरूपी है रहे। ज्ञायकके आकार ममत्वनिवारिकैं, सो परमातम सिद्ध नमूं सिर नायकैं ॥ २ ॥

दोहा—अविचलज्ञानप्रकाशते, गुण अनन्तकी खान। ध्यान धरे सौं पाइए, परमसिद्ध भगवान ॥ ३ ॥ इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलि)

अथ शान्तिपाठः ।

(शांतिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते रहना चाहिये।)

दोधकवृत्तम्—शांतिजिनं शशिनिर्म्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रम्। अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तमम्बुजनेत्रम् ॥१॥

पंचममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च। शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः, षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥

दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ। आतापवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥

तं जगदर्चितशांतिजिनेन्द्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि। सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

वसंततिलका—येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः।

ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थंकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥ ५ ॥

इन्द्रवज्रा—संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम्। देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेंद्रः

स्रग्धरावृत्तम्—क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः। काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यांतु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके। जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप्—प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः। कुर्वन्तु जगतः शांतिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः।

अथेष्टप्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्य्यैः, सदृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे, सम्पद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ ९ ॥

आर्यावृत्तम्—तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् । तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ १० ॥

अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं । तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःक्खक्खयं दिंतु ॥ ११ ॥

दुःक्खखओ कम्मखओ समाहिमरणं च बोहिलाहो य । मम होउ जगतबंधव तव जिणवर चरणसरणेण ॥१२॥

त्रिभुवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमानंदैककारण कुरुष्व । मयि किंकरेऽत्र करुणां यथा तथा जायते मुक्तिः ॥१३॥

निर्विण्णोहं नितरामर्हन् ! बहुदुक्खया भवास्थित्या । अपुनर्भवाय भवहर ! कुरु करुणामत्र मयि दीने ॥ १४ ॥

उद्धर मां पतितमतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा । अर्हन्नलमुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि ॥ १५ ॥

त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं । मोहरिपुदलितमानं फूत्कारं तव पुरः कुर्वे ॥ १६ ॥

ग्रामपतेरपि करुणा, परेण केनाप्युपद्यते पुंसि । जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते ॥१७॥

अपहर मम जन्म दयां कृत्वेत्येकवचसि वक्तव्ये । तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वं ॥ १८ ॥

तव जिनवर ! चरणाब्जयुगं, करुणामृतशीतलं यावत् । संसारतापतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥ १९ ॥

जगदेकशरण ! भगवन् ! नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघ। किं बहुना ? कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥२०॥ पुष्पांजलिं

अथ विसर्जनम् ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया । तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥
आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनं । विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च । तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥
आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमं । ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिं ॥ ४ ॥

इति शांतिपाठः ।

भाषास्तुतिपाठ।

तुम तरणतारण भवनिवारण, भविकमनआनंदनो।
श्रीनाभिनंदन जगतवंदन, आदिनाथ निरंजनो ॥ १ ॥
तुम आदिनाथ अनादि सेऊं, सेय पदपूजा करूं।
कैलासगिरिपर रिषभजिनवर, पदकमल हिरदे धरूं ॥ २ ॥
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महावली।
यह विरद सुनकर सरन आयो, कृपा कीजे नाथजी ॥ ३ ॥
तुम चंद्रवदन सु चन्द्रलन्छन, चंद्रपुरि परमेश्वरो।
महासेननंदन, जगतवंदन, चंद्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥
तुम शांति पांच कल्याण पूजों, शुद्धमनवचकायजू।
दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलायजू ॥ ५ ॥
तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमलविकाशनो।
श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥ ६ ॥
जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसैन्या वश करी।
चारित्ररथ चढि भये दूलह, जांय शिवरमणी वरी ॥ ७ ॥
कंदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो।
अश्वसेननन्दन जगतवंदन, सकलसंघ मंगल कियो ॥ ८ ॥

जिन धरी बालकपणे दीक्षा, कमठमानविदारकैं।
श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद, मैं नमों शिरधारकैं ॥ ९ ॥
तुम कर्मघाता मोखदाता, दीन जानि दया करो।
सिद्धार्थनन्दन जगतवन्दन महावीर जिनेश्वरो ॥ १० ॥
छत्र तीन सोहैं सुर नृ मोहैं, वीनती अवधारिये।
कर जोडि सेवक वीनवै प्रभु, आवागमन निवारिये ॥ ११ ॥
अब होउ भव भव स्वामी मेरे, मैं सदा सेवक रहों।
कर जोड यो वरदान मांगों, मोक्षफल जावत लहों ॥ १२ ॥
जो एकमाहीं एक राजै, एकमाहिं अनेकनो।
इक अनेककी नहीं संख्या, नमों सिद्ध निरंजनो ॥ १३ ॥

चौपाई।

मैं तुम चरणकमलगुणगाय, वहुविध भक्ति करी मन लाय।
जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि ॥ १४ ॥
कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोय।
वारवार मैं विनती करूं, तुम सेयें भवसागर तरूं ॥ १५ ॥
नाम लेत सब दुख मिटजाय, तुम दर्शन देख्या प्रभु आय।
तुम हो प्रभु देवनके देव, मैं तो करूं चरण तव सेव ॥ १६ ॥
मैं आयो पूजनके काज, मेरो जन्म सफल भयो आज।
पूजा करकैं नवाऊं शीश, मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥ १७ ॥

दोहा ।

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान ।
मो गरीबकी वीनती सुन लीज्यो भगवान ॥ १८ ॥

दर्शन करते देवका, आदि मध्य अवसान ।
स्वर्गनके सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥ १९ ॥

जैसी महिमा तुमविषै, और धरै नहिं कोय ।
जो सूरजमें ज्योति है, तारनमें नहिं सोय ॥ २० ॥

नाथ तिहारे नामतै, अघ छिनमाहिं पलाय ।
ज्यों दिनकर परकाशतैं, अन्धकार विनशाय ॥ २१ ॥

बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अजान ।
पूजाविधि जानू नहीं, शरण राखि भगवान ॥ २२ ॥

इति भाषास्तुतिपाठ समाप्त ।

॥ ॐ ॥

प्रतिष्ठासारसंग्रह

(पंचकल्याणकदीपिका)

समाप्तम् ।